धूप-छाँह

[सामाजिक उपन्यास]

लेखक

उपेन्द्र शर्मा

१९६०

कृष्णा ब्रदर्स

अजमेर

समर्पण—

माँ

को—

जिन के स्नेह और आशीर्वाद के प्रति

मेरा रोम-रोम

चिर ऋणी

है।

—उपेन्द्र

दो शब्द

विश्व के टेढ़े-मेढ़े मार्ग तथा विषम परिस्थितियों की धूप-छाँह में से गुजरने वाले मानव-जीवन की संघर्षपूर्ण गाथा पर आधारित 'धूप-छाँह' उपन्यास पाठकों तथा आलोचकों के सम्मुख उपस्थित करते हुए मुझे प्रसन्नता है। इसका कथानक व्यक्तिगत तथा पारिवारिक परिस्थितियों से प्रभावित होते हुए भी सर्वसामान्य संयुक्त-परिवार व समाज की समस्याओं और मानव-जीवन का पर्याप्त दिग्दर्शन कराता है, ऐसा मेरा विश्वास है।

साहित्य मानव-जीवन तथा समाज का दर्पण है और प्रत्येक साहित्यिक रचना के मूल में अनुभवों की प्रतिक्रिया होती है। किन्तु प्रेरणा का मौलिक महत्व है। सौभाग्य से इस प्रथम प्रयास में मुझे अपने गुरु-जनों से सजीव प्रेरणा प्राप्त हुई है उसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। मेरा विश्वास है कि यदि परमेश्वर का अनुग्रह और गुरु-जनों का शुभाशीर्वाद प्राप्त होता रहा तो भविष्य में मैं सम्भवतः और भी कृतियाँ प्रस्तुत कर साहित्य-सेवा का अनुपम लाभ प्राप्त कर सकूँगा।

माननीय श्रीमान् डॉ० सरनामसिंह शर्मा ने अपनी कोविदोचित भूमिका से मेरी कृति को गति प्रदान कर मुझे उत्साहित किया है। आप के इस अनुग्रह के प्रति मैं चिर-कृतज्ञ हूँ।

यह मेरा प्रथम प्रयास है, अतः इसकी सफलता-असफलता के सम्बन्ध में मुझे कुछ कहने की अपेक्षा नहीं। सहृदय पाठकों और आलोचकों का कटु-मधुर मुझे सभी ग्राह्य और शिरोधार्य है। मेरे विश्वास के अनुसार यदि यह उपन्यास छात्रोपयोगी सिद्ध हुआ तो मुझे हार्दिक सन्तोष होगा।

प्रसन्नता है कि बीच-बीच में मेरे ज्येष्ठ-भ्राता श्री ज्ञानेन्द्र शर्मा ने उपन्यास के प्रति अनुरक्ति प्रदर्शित कर मुझे प्रोत्साहित किया है। मैं उनके प्रति भी हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ।

—लेखक

भूमिका

'धूप-छाँह' उपन्यास को मैंने पढ़ा और ऐसा प्रतीत हुआ कि लेखक नई प्रेरणा और नया उत्साह लेकर इस क्षेत्र में आया है। श्री उपेन्द्र शर्मा का यह प्रयास स्तुत्य है—इसलिए कि इसमें पारिवारिक और सामाजिक जीवन का एक प्रौढ़ एवं सुडौल प्रतिरूपण है। यह उपन्यास दैनिक जीवन के चारित्रिक एवं मनोवैज्ञानिक धरातल पर अपना कलेवर सहार कर एक सजीव किन्तु प्रेरक वातावरण प्रस्तुत करता है। नायक के चरित्र में लेखक की अनुभूतियों की बड़ी सरल किन्तु सुन्दर भूमिका है। जीवन की कुछ समस्याओं के मध्य में खड़ा होकर नायक तोष की गवेषणा करता है, और 'उनके सुख में हमारा सुख है' भाव का यथासंभव पोषण करता है।

इस कृति की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में वातावरण की ऊष्मा ने कुछ कुण्ठाओं को जन्म देने की चेष्टा की है किन्तु लेखक सहसा सँभल गया है। विभाव के आचरण में इस आशय का प्रतिबिम्ब अनेक स्थलों पर मिल जाता है। ऊँचे उपन्यासकारों के अनुकरण की चेष्टा ने लेखक को कुछ कल्पनाएँ प्रदान की हैं, जिनसे उसकी अपनी अनुभूतियों ने आस्वाद्यता प्राप्त कर ली है। यथार्थ और आदर्श के योग में श्री उपेन्द्र शर्मा ने प्रेमचन्दजी का मार्ग अपनाया है और लड़खड़ाते हुए भी वे अपने गन्तव्य पर पहुँच ही गये हैं।

पारिवारिक संवेदनाओं को संकलित करके लेखक ने जिस वस्तु का विन्यास किया है उसमें 'कला' है और उसने लक्ष्य की रक्षा करने में सराहनीय सफलता प्राप्त की है। लेखक की भाषा में सँभलने और सुधरने की शक्ति दिखाई पड़ती है और अभ्यास से वह शीघ्र ही परिमार्जन प्राप्त कर लेगी, इसकी मुझे पूर्ण आशा है।

अन्त में मैं श्री उपेन्द्र शर्मा को उनके अभिनव प्रयास पर साधुवाद देकर यह आशा करता हूँ कि श्री शर्माजी की प्रयत्न-कलिका सुमन बन कर सुरभित होती रहेगी।

७–६–६०

सरनामसिंह शर्मा 'अरुण'
अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग,
राजस्थान कालेज,
जयपुर।

: १ :

एक तंग टेढ़ी-मेढ़ी गली के सिरे पर खड़ा व्यक्ति प्राय: इस बात का सही अनुमान नहीं लगा पाता है कि उसे गली के दूसरे छोर तक पहुँचने में कितना समय लगेगा, मार्ग में उसे कहाँ ठहरना पड़ेगा, कहाँ मुड़ना पड़ेगा, कहाँ तेज चलना होगा और कहाँ धीरे। बस इस आशा को लेकर कि चलते-चलते वह कभी न कभी तो दूसरे सिरे पर पहुँचेगा ही, वह चल पड़ता है और चलता जाता है। यदि इस अनजान व्यक्ति को गली की लम्बाई तथा टेढ़े-मेढ़े होने का सही अनुमान आरम्भ में ही हो जाय तो सम्भवत: वह आगे कदम उठाने से पहले ही साहस खो बैठेगा। आशा निराशा में बदल जायेगी, किन्तु इसके साथ ही लगातार चलते रहने पर भी जब उसे अन्तिम छोर का पता नहीं चलता, रास्ते की कठिनाइयों में ही वह जब उलझ जाता है तब भी उसे घोर निराशा ही होती है।

यह संसार भी सम्भवत: ऐसी ही टेढ़ी-मेढ़ी सँकरी गली के समान है, जिसमें न जाने कितने प्राणी अन्तिम छोर तक पहुँचने की आशा में दिन-रात एक करते रहते हैं, पर उनमें से कितने पार पहुँचते हैं, कितने रास्ते में ही ठोकर खाकर समाप्त हो जाते हैं और कितने वापस लौटने को बाध्य हो जाते हैं, इसका किसको पता है? कितने ही ऐसे भी हैं जो इस तंग गली की असीम लम्बाई की कल्पना मात्र से हताश हो जाते हैं? रास्ते की कठिनाइयाँ उन्हें कदम उठाने ही नहीं देतीं।

"मैं मानता हूँ कि नौकरी के सिलसिले में मेरे घर छोड़ने के बाद तुम्हें बहुत ही असुविधा होगी, पर मैं विवश हूँ। पेट और बच्चों के लालन-पालन के लिए मुझे गंगापुर जाना ही होगा।"

पंडित श्रीनाथ प्रसाद अपनी पत्नी सुलोचना को कई दिनों से यह समझाने का प्रयत्न बराबर कर रहे थे कि पत्र के सम्पादन-मात्र से अब उनका गुजर-बसर सम्भव नहीं, किन्तु सुलोचना की समझ में यह बात अभी तक नहीं आ रही थी कि अपने तीन पुत्र तथा दो पुत्रियों को लेकर, जो कि आयु में अभी बहुत छोटे थे, वह अकेली कैसे रह पायेगी। अतः विरोध के स्वर में तो नहीं, वरन् असमर्थता के भाव से वह बोली—"मैंने आजतक कभी भी आपकी बात का विरोध नहीं किया, और न ही कभी बुरा माना। आज भी आपके गंगापुर जाने के सम्बन्ध में मुझे कोई आपत्ति नहीं, किन्तु इतने छोटे-छोटे बच्चों को लेकर भला मैं कैसे रह सकूँगी? लक्षणा अपने घर की हो गई, मुझे उसकी ज्यादा चिन्ता नहीं, किन्तु व्यंजना भी अब सयानी हो गई है। अभी नहीं तो एक-दो वर्ष बाद उसके शादी-विवाह का प्रश्न आना ही है। विभाव अभी नवीं में ही पढ़ता है वह भला आपकी जगह कैसे ले पायेगा। अनुभाव, संचारी तथा अभिधा का तो अभी कहना ही क्या? क्या गंगापुर में ही हम सबके रहने की बात नहीं बन सकती?

श्रीनाथ समझाते हुए कहने लगे—"गंगापुर में लड़कियों का स्कूल है, कालेज है, जहाँ मुझे अध्यापक का कार्य मिला है लेकिन वहाँ लड़कों की ऊँची शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं।

इसके अलावा घर का मकान भी सूना हो जायेगा। मैं खुद जानता हूँ कि मुझे भी बहुत तक़लीफ़ होगी, लेकिन अपने आराम के लिए बच्चों के भविष्य को नहीं बिगाड़ा जा सकता तुम्हें मेरी बात समझनी चाहिए।"

सुलोचना ने फिर प्रश्न किया—"तो क्या दोनों लड़कों के रहने की व्यवस्था स्कूल के होस्टल अथवा किसी रिश्तेदार के यहाँ नहीं हो सकती? जो ख़र्चा होगा, उसका भी कोई न कोई प्रबन्ध करेंगे।"

श्रीनाथ को वैसे तो यह प्रश्न बड़ा बेतुका लगा फिर भी शान्त स्वर में बोले—"सुलोचना, तुम बड़ी भोली हो। रिश्तेदारों के यहाँ माह-दो माह ठहर सकते हैं किन्तु बच्चों की शिक्षा की जिम्मेदारी वे भला क्यों लेने लगे। अभी हमारे ऊपर ही यह बात आकर पड़े तो हमें भी कोई न कोई बहाना ढूँढ़ना ही होगा। रही होस्टल में रखने की बात तो उसके लिए पैसा कहाँ से आयेगा। इसके साथ ही दस वर्ष की जमी-जमाई गृहस्थी को एक साथ उखाड़ने के पक्ष में मैं नहीं। पहले तो मेरा ही गंगापुर जाकर वहाँ व्यवस्थित होने का प्रश्न महत्त्वपूर्ण है। आज यदि दीनानाथ होता तो मैं खुशी से तुम सबको उस पर छोड़कर अपने काम में लग जाता।"

अपने देवर दीनानाथ की बात सुनते ही सुलोचना उदास हो गई। अपने गत जीवन तथा दीनानाथ के स्नेह-पूर्ण व्यवहार का सम्पूर्ण चित्र उसके सामने आ गया। सुलोचना ने शैशव से ही दीनानाथ को अपने बच्चे की तरह स्नेह से पाला-पोसा, ऊँची शिक्षा दी और बड़ी खुशी से विवाह किया; किन्तु दुर्भाग्य-

वश विवाह के ठीक दो वर्ष बाद पुत्र-जन्म के साथ ही दीना-नाथ की पत्नी अपने पुत्र अधीर को सुलोचना के हाथों में सौंपकर सदा के लिए सो गई। श्रीनाथ को भी गहरी चोट पहुँची, पर अब हो ही क्या सकता था। एक वर्ष के अन्दर ही अन्दर सुलोचना ने दीनानाथ के दूसरे विवाह की व्यवस्था की किन्तु 'ईश्वरेच्छा गरीयसी'। विवाह के दो माह पूर्व ही दीनानाथ मोटर दुर्घटना के शिकार हो गए। बड़े भाई तथा भाभी ने उपाचार में कोई बात उठा न रखी, लेकिन इतना होने पर भी श्रीनाथ अपने भाई को फिर न पा सके। छोटे भाई तथा उसकी पत्नी, जिसे श्रीनाथ अपनी कन्या से भी अधिक स्नेह करते थे, की स्मृति में केवल अधीर शेष था, जिसे देखकर वह नित्य ही अपने भाई को याद कर आँसू बहा लेते थे।

दो क्षण में ही उक्त सम्पूर्ण घटना सुलोचना को पुनः स्मरण हो गई। रुँधे स्वर में वह बोली—"अब भला छोटे भैया को हम फिर कैसे पा सकते हैं? उनकी धरोहर अधीर की जिम्मेदारी हमारे पर है। उसकी पढ़ाई-लिखाई भी उतनी ही जरूरी है जितनी विभाव, अनुभाव की; लेकिन माँ होने के साथ-साथ आपकी अर्धांगिनी हूँ और इसी कारण बच्चों की अपेक्षा आप के प्रति मेरा कर्तव्य विशेष महत्त्वपूर्ण है। बाल-बच्चों के भविष्य के साथ आपकी सुख-सुविधा की भी तो मुझे चिन्ता है।"

सुलोचना अभी कुछ और कहती, किन्तु श्रीनाथ बीच में ही बोल पड़े—"देखो, ये सब बातें मैं भी समझता हूँ। मुझे

जिन कठिनाइयों का सामना करना होगा, वह भी मुझे मालूम हैं; लेकिन सुलोचना, बच्चों की सुख-सुविधा ही माँ-बाप के लिए सबसे बड़ी चीज़ है। उनके सुख में हमारा सुख है और उनका दुःख हमारा दुःख है। मैं नहीं चाहता कि भविष्य में हमारे बच्चों को यह कहने का मौक़ा मिले कि अपने सुख के लिए माँ-बाप ने हमारे भविष्य की उपेक्षा कर दी। कल जब विभाव, अनुभाव समझदार हो जायेंगे, ऊँची शिक्षा प्राप्त कर चुकेंगे, बड़े-बड़े पदों पर नियुक्त हो जायेंगे, विवाह हो जायेगा, घर में बहू आ जायेगी, बाल-बच्चों से घर की चहल-पहल बढ़ जायेगी, तो हमें कितना सन्तोष होगा, प्रसन्नता होगी, सम्भवतः इसका अनुमान आज तुम नहीं लगा पा रही हो? बच्चों के लालन-पालन में माँ-बाप को कभी कष्ट नहीं होता, वरन् अनुपम आत्म-सन्तोष प्राप्त होता है। सुलोचना, पाँच-छः वर्ष की बात है, हमारी सारी चिन्ता दूर हो जायेगी। यह शायद हमारी परीक्षा का समय है, जिसमें हम दोनो को बड़ी समझदारी से कार्य करना चाहिये। मेरा कहा मानो, तुम्हारी जिद से मुझे क्षोभ होता है।"

सुलोचना भी अब भविष्य के सुनहरे स्वप्नों की कल्पना-मात्र से आनन्द-विभोर हो उठी। धीरे-धीरे बात उसकी भी समझ में आ गई। वह अपने पति के स्वभाव से भी पूर्णरूप से परिचित थी। अतः बिना किसी विरोध के उसने शान्त स्वर में कहा,—"ठीक है। आपकी बात मेरी समझ में आ गई है। आपकी इच्छा मेरी इच्छा है। यदि आप समझते हैं कि आपके गंगापुर अकेले जाने में ही भलाई है तो मुझे कोई विरोध नहीं

किन्तु आपकी उम्र भी अब पहले वाली नहीं रही है इसलिए अपनी सेहत का खूब ध्यान रखना। मुझसे जो कुछ बन पड़ेगा, मैं ज़रूर करूँगी। आप यहाँ की अधिक चिन्ता न कीजिये...।"

श्रीनाथ को, अपनी पत्नी का सहयोग पाकर, बड़ी प्रसन्नता हुई। वे बोले—"सुलोचना, मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी। मुझे तुम पर पूरा भरोसा है। परमेश्वर ने चाहा तो तुम्हें इस त्याग व तपस्या का मीठा फल अवश्य मिलेगा।"

: २ :

परमेश्वर की इस विचित्र सृष्टि में कुछ ऐसे लोग भी होते हैं, जिन्हें कर्म में पूर्ण विश्वास होता है। जीवन के ऊँचे-नीचे, पथरीले मार्ग पर चलते हुए, ठोकरें खाते हुए भी वे कभी निराश नहीं होते, पराजय स्वीकार नहीं करते और प्रभु भी ऐसे कर्मनिष्ठ लोगों की पूर्ण सहायता करता है। पंडित श्रीनाथ भी ऐसे ही कर्मवीर पुरुषों में एक थे।

श्रीनाथ अपने पिता के ज्येष्ठ पुत्र थे। दीनानाथ और प्रेमनाथ आयु में श्रीनाथ से बहुत छोटे थे, लेकिन श्रीनाथ ने कभी अपने बड़े होने का दुरुपयोग नहीं किया। दोनों छोटे भाइयों पर उनका पिता से भी अधिक स्नेह था और उनकी यह हार्दिक कामना थी कि वे अपने दोनों भाइयों को जीवन में सदा फलता-फूलता देखें; किन्तु जब प्रेमनाथ केवल तीन वर्ष का था तभी परमेश्वर ने उसे अपने पास बुला लिया और श्रीनाथ हाथ मलकर रह गये। अब दीनानाथ ही उनकी आँख का तारा था, जिसका पालन-पोषण श्रीनाथ ने बड़ी तत्परता से किया।

श्रीनाथ के पिता गाँव के बड़े ज़मींदार थे और लगभग बीस-पच्चीस हज़ार रुपयों से कम की उनकी जायदाद न थी। अपने बड़े पुत्र श्रीनाथ की योग्यता में उनका पूर्ण विश्वास था, किन्तु जब श्रीनाथ केवल पन्द्रह-सोलह वर्ष के रहे होंगे तभी उनके पिता क्षय-ग्रस्त हो गये। पिता की सेवा-सुश्रूषा श्रीनाथ

ने तन, मन, धन से की। पितृ-सेवा को वे अनुपम वरदान मानते थे। कर्तव्य-परायण होने के कारण फल की कामना के बिना ही पिता की सेवा में उन्होंने दिन-रात एक कर दिया किन्तु इस तरह आमदनी तो रुक-सी गई और उपचार का व्यय दिन-पर-दिन बढ़ता गया। परिणामस्वरूप श्रीनाथ को धीरे-धीरे अर्थ की चिन्ता होने लगी। फिर भी उन्होंने पिता के उपचार में कोई कमी न आने दी।

लगातार उपचार करते रहने पर भी श्रीनाथ के पिता की दशा बिगड़ती गई और अन्त में जल-वायु परिवर्तन के लिये डाक्टर ने उन्हें पहाड़ी प्रदेश में जाने की सलाह दी। श्रीनाथ के समक्ष अब अर्थ की समस्या आ खड़ी हुई। उनके पिता अपने उपचार के लिए पैतृक सम्पत्ति को बेचने के पक्ष में नहीं थे और श्रीनाथ अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध कोई भी काम नहीं करना चाहते थे।

श्रीनाथ का विवाह बारह वर्ष की आयु में ही हो गया था, और भाग्य से ससुराल भी सभी दृष्टियों से सम्पन्न मिली थी। किन्तु संकट के समय में श्रीनाथ ने ससुराल वालों से सहायता लेना अच्छा न समझा। उनको इस बात का भी भय था कि अपने चाचा द्वारिका बाबू के होते हुए यदि वे ससुराल वालों से सहायता लेंगे तो समाज में उनकी बड़ी आलोचना होगी। श्रीनाथ के पिता तथा उनके छोटे भाई द्वारिका में यद्यपि आरम्भ से अनबन थी, तथापि पिता ने श्रीनाथ को द्वारिका से सहायता लेने की सलाह दी।

श्रीनाथ अपने पिता तथा चाचा के बिगड़े हुए पारस्परिक

सम्बन्धों को भली-भाँति जानते थे। अतः एक-दो दिन उन्होंने टाल-मटोल की। लेकिन पिता की बिगड़ती हुई दशा ने उन्हें बाध्य कर दिया। अतः वे द्वारिका बाबू के घर पहुँचे और सारी स्थिति का वर्णन करते हुए बोले—"तो चाचाजी, आज रात्रि की गाड़ी से पिता जी को दार्जिलिंग ले ही जाना होगा। मैं वैसे तो जानता हूँ कि आप का हाथ भी काफी तंग है लेकिन अन्य कोई मार्ग न होने से यदि आप कुछ रुपयों की सहायता कर देंगे तो मैं चिर-कृतज्ञ होऊँगा। मेरी एक प्रार्थना यह भी है कि आप कुछ अवकाश ग्रहण कर हमारे साथ चलने का कष्ट कीजियेगा। मैं अभी नादान हूँ, छोटे भाई व माँ का तो प्रश्न ही नहीं उठता……।"

श्रीनाथ की बात को काटते हुए द्वारिका ने बड़ी ही गम्भीरता से उत्तर दिया—"बेटा श्रीनाथ, मुझे स्वयं अपने बड़े भाई के कष्ट की घोर चिन्ता है। मैं स्वयं उनकी सेवा करने को उत्सुक हूँ। लेकिन तुम्हें तो पता ही है कि इन दिनों मेरा हाथ कितना तंग है। मैं स्वयं ऐसे आर्थिक संकट में फँस गया हूँ कि कहीं आने-जाने की सोच भी नहीं सकता। मैं तो खुद ही सहायता के लिये तुम्हारे पास आने को था। बेटा श्रीनाथ, तुम अब नादान नहीं हो, तुम्हारी योग्यता पर मुझे पूर्ण विश्वास है। मैं भला किस योग्य हूँ कि तुम्हारी सहायता करूँ। तुम अभी घर चलो, रात्रि को समय निकाल कर मैं अवश्य भैया से मिलने आऊँगा। मुझे तो आज तुमसे पता चला कि भैया की हालत इतनी खराब है। अब तुम चिन्ता न करो। परमेश्वर सबका मालिक है। रही रुपयों की

बात; तो बेटा तुम्हारी ससुराल वाले तो हम जैसे दस व्यक्तियों का भार उठा सकते हैं। समय पर यदि अपने ही सगे-सम्बन्धी काम न आये, तो फिर किससे आशा की जाय। आगे तुम स्वयं क्या कम समझदार हो।"

यद्यपि श्रीनाथ पहले ही जानते थे कि उन्हें चाचा से ऐसा ही उत्तर मिलेगा, तथापि उन्हें घोर आत्म-क्षोभ हुआ। पर बिना कुछ बोले वे चाचा से यह कहकर,—"आप ठीक कहते हैं चाचा जी, परमेश्वर सबका मालिक है......" अपने घर चल दिये। घर पहुँचकर श्रीनाथ ने माता-पिता से केवल यही कहा कि चाचा जी आज रात को घर आयेंगे और इतना कहकर वे यात्रा की तैयारी में जुट गये।

श्रीनाथ को अपने चाचा के व्यवहार का स्मरण कर अत्यन्त क्षोभ हो रहा था। वह सोचने लगे कि अच्छा होता यदि वह चाचा से सहायता की याचना ही न करते। वह जानते थे कि द्वारिका बाबू ने उनकी असमर्थता का उपहास किया है और वह अपने बड़े भाई को देखने नहीं आने वाले हैं। श्रीनाथ की माता नन्दिनी को जरूर कुछ आशा हो गई थी कि द्वारिका बाबू अवश्य ही कम-से-कम मिलने आयेंगे। देखते-देखते रात के ग्यारह बज गये किन्तु द्वारिका बाबू का कोई पता न था। नन्दिनी का विश्वास था कि बाल्यकाल में जिस स्नेह से उसने अपने देवर द्वारिका का लालन-पालन किया था, उसे स्मरण कर कम-से-कम लोक-लाज की रक्षा के हेतु वे अवश्य आयेंगे, किन्तु सम्भवतः नन्दिनी यह भूल गई कि अब द्वारिका स्वयं

कई बच्चों के पिता थे, अतः नन्दिनी के स्नेहमय-व्यवहार की उन्हें न आवश्यकता थी न अपेक्षा।

गत जीवन की धुँधली स्मृति में नन्दिनी खो-सी गई। न जाने कितने प्रकार के स्वप्नों में उलझे होने से उसे समय का अनुमान नहीं रहा। श्रीनाथ एक-दो बार बीच-बीच में अपने पिता से मिलते रहे, लेकिन जब उन्होंने देखा कि पिताजी आराम से सो रहे हैं, तब यह सोचकर कि गाड़ी के आने में अभी तीन घंटे शेष हैं, वह भी थोड़ा-सा आराम करने को ऊपर चले गये। रात्रि के लगभग दो बजे नन्दिनी की पुकार सुन श्रीनाथ दौड़े-दौड़े नीचे आये और सीधे पिता के कमरे में पहुँचे। इससे पहले कि श्रीनाथ कुछ पूछते नन्दिनी धाड़ मार कर चीख उठी, "क्या देख रहे हो बेटा, इन्हें जल्दी चरपाई से नीचे लो, अब दार्जिलिंग जाने की बात सदा के लिए खत्म हो गई......?"

इतना कहकर नन्दिनी धाड़ मार-मारकर रोने लगी। श्रीनाथ पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। वे भी फूट-फूट कर रोने लगे। दीनानाथ की भी बुरी दशा थी। देखते-देखते घर में कोलाहल मच गया। श्रीनाथ को क्या पता था कि दो घंटे पूर्व ही उन पर से पिता का साया उठ चुका था। उन्हें क्या पता था कि अब पिताजी सदा के लिए आराम ले रहे थे और विश्व की कोई भी शक्ति उनकी चिर-निद्रा को भंग नहीं कर सकती थी।

थोड़ी-सी देर में घर पड़ौसियों से भर गया। श्रीनाथ ने जब अपनी माता के खुले हुए लम्बे-लम्बे केशों को बिखरा

हुआ और चूड़ियों के टूटे हुए टुकड़े देखे तो उनकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया । वे अपने पिता को आज से दस दिन पूर्व ही क्यों न दार्जिलिंग ले गये—यह सोचकर उन्हें घोर आत्म-ग्लानि होने लगी । उन्हें यह बात भूल ही गई कि प्रभु की इच्छा के बिना पत्ता तक नहीं हिलता । काल स्थान और व्यक्ति का भेद नहीं मानता ।

लगभग एक-डेढ़ घंटे बाद द्वारिका बाबू भी बड़े ज़ोर-ज़ोर से रोते-पीटते घर में घुसे । वे अत्यन्त ही करुण स्वर में नन्दिनी से बोले—"भाभी तुमने मुझे रात ही क्यों न खबर दी । मैंने तो समझा था कि श्रीनाथ वैसे ही नादान होने के कारण घबरा रहा है । रात को मैं भी इतना थक गया था कि प्रातः स्टेशन पर तुम सबसे मिलने का विचार कर सो गया । खैर, अब रोने-धोने से क्या होने वाला है । एक-न-एक दिन सबको मरना है ।"

द्वारिका बाबू का एक-एक शब्द नन्दिनी व श्रीनाथ के ह्रदय को भेदने वाला था, किन्तु दुःख के कारण दोनों में से कोई न बोला । जैसे-तैसे प्रातःकाल श्रीनाथ ने पिता का क्रिया-कर्म किया । बड़े धैर्य से उन्होंने अपनी माँ तथा छोटे भाई दीनानाथ को समझाया, किन्तु भविष्य की कल्पना मात्र से उनका हृदय बैठा जा रहा था । अपने चाचा से उन्हें कोई आशा न थी । आशा के स्थान पर पिता की सम्पत्ति की रक्षा कैसे हो—इस बात की उन्हें चिन्ता होने लगी । श्रीनाथ को अपने ससुर से अवश्य सहानुभूति की आशा थी ।

काल-चक्र अपनी गति से चलता रहा । अनेक प्रयत्न

करने पर भी श्रीनाथ को अपने चाचा के चंगुल से जायदाद का बहुत कम भाग मिल सका। यदि वे चाहते तो इसके लिए लड़ सकते थे, किन्तु श्रीनाथ को स्वयं के कर्म तथा परमेश्वर के शुभाशीर्वाद में अटूट श्रद्धा थी। अनेकानेक कठनाइयों ने श्रीनाथ के मार्ग में बाधाएँ उपस्थित कीं, किन्तु उन्होंने कर्म से कभी भी मुख न मोड़ा। पिता की मृत्यु के लगभग पाँच वर्ष बाद माता का स्नेह भी सदा के लिए उनसे छिन गया।

धीरे-धीरे श्रीनाथ ने सारा भार अपने ऊपर ले लिया, स्वयं ऊँची शिक्षा ग्रहण कर साहित्य सेवा में लग गये। अपने छोटे भाई के लिये भी उन्होंने क्या नहीं किया। किन्तु अब उसकी स्मृति में दीनानाथ का पुत्र अधीर ही उनके पास शेष था।

गंगापुर जाने के साथ ही श्रीनाथ के जीवन का नवीन अध्याय आरम्भ हो गया।

: ३ :

रात्रि के निबिड अन्धकार के पश्चात् दिवस के उज्ज्वल प्रकाश की आशा किसे नहीं होती। यह ठीक है कि कष्ट झेलते-झेलते व्यक्ति दुःख भोगने का आदी हो जाता है। फिर भी भविष्य में उसे कभी-न-कभी सुनहरे दिन देखने को मिलेंगे—इसी आशा से वह अपनी जीवन-नौका भव-सागर में खेता रहता है। आशा-निराशा, दुःख-सुख, हर्ष-विषाद आदि के बन्धनों में ही मनुष्य का जीवन तथा परमेश्वर की विचित्र सृष्टि सजी हुई है। पतझड़ के बाद बसंत की बहार अवश्य आयेगी—यही आशा मानव-कर्म तथा जीवन का सतत स्रोत है।

इसी आशा का दामन थामे हुए श्रीनाथ ने दो वर्ष गंगापुर में अध्यापन कार्य करते व्यतीत कर दिये। निःसन्देह उन्हें अन्य समस्याओं के साथ आर्थिक संकट का सामना भी करना पड़ा, लेकिन वे हताश कभी न हुए। अपने पति श्रीनाथ की अनुपस्थिति में सुलोचना पर भी परिवार का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व आ पड़ा। किन्तु कोई भी कठिन कार्य कारवाने से पूर्व परमेश्वर व्यक्ति को यथा योग्य शक्ति भी अवश्य प्रदान करता है। इसी शक्ति तथा प्रभु की अनुकम्पा के बल पर सुलोचना ने भी जिस तत्परता से परिवार की व्यवस्था की वह निःसन्देह सराहनीय है। यह ठीक है कि उसे अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ा, तरह-तरह की बातें सुननी पड़ीं, किन्तु इतना होने पर भी कर्तव्य-पालन में कोई भी कमी न आने पाई।

इन दो वर्षों में बड़े लड़के विभाव ने हाईस्कूल की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर कॉलेज में प्रवेश किया। अनुभाव तथा संचारी भी कुछ बड़े हो गए थे। इनके साथ ही अब व्यंजना के विवाह का प्रश्न आ खड़ा हुआ। श्रीनाथ व सुलोचना दोनों ही किसी श्रेष्ठ वर व परिवार के लिए प्रयत्नशील थे, किन्तु सम्बन्ध कहीं भी निश्चित न हो सका। जहाँ तक स्वरूप का प्रश्न था व्यंजना में कोई कमी न थी, किन्तु लड़कों के शिक्षा-भार के कारण श्रीनाथ चाहते हुए भी व्यंजना को हाईस्कूल तक की शिक्षा भी न दिला सके। सुलोचना कुछ पुराने विचारों की स्त्री होने के कारण स्त्री-शिक्षा के पक्ष में न थी। उसका तो यह विश्वास था कि लड़कियों के लिए गृह-कार्य की योग्यता ही सबसे बड़ी योग्यता है। उन्हें पुरुष की भाँति नौकरी थोड़े ही करनी है। वह यह भी समझती थी कि ऊँची शिक्षा प्राप्त कर लड़कियों में गर्व उत्पन्न हो जाता है। वे अपने आपको कुछ समझने लगती हैं। लेकिन यदि अर्थ तथा विषम परिस्थितियों की समस्या न होती तो श्रीनाथ पत्नी की इच्छा के प्रतिकूल अवश्य ही व्यंजना को अच्छी शिक्षा दिलवाते।

सम्बन्ध अभी तक निश्चित न हो सकने का एक कारण यह भी था कि व्यंजना को कोई लड़का ही पसन्द नहीं आता था। वह प्रायः अपने स्वरूप से ही प्रत्येक लड़के की तुलना करती थी यद्यपि सुलोचना तथा अन्य सम्बन्धियों को व्यंजना की यह बात बहुत अखरती थी। इन सब कारणों से एक वर्ष और टल गया।

कन्या जब विवाह योग्य हो जाती है तब माता-पिता को

तो उसके हाथ पीले करने की चिन्ता स्वाभाविक रूप से होती ही है, किन्तु सगे-सम्बन्धी तथा अन्य आस-पास के लोगों को भी उसका भार ऐसा खटकने लगता है कि किसी-न-किसी प्रकार से वे मुक्त होने का प्रयत्न करने लगते हैं। व्यंजना के सम्बन्ध में तरह-तरह की विचित्र बातें सुनने को मिलने लगीं। परिणामतः श्रीनाथ तथा उनकी पत्नी की चिन्ता दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी। प्रयत्न करने पर जब कहीं बात बनने लगती थी, या तो व्यंजना को लड़का पसन्द न आता था या लड़के वाले बिना दहेज के व्यंजना के रूप की उपेक्षा कर देते। गत दो वर्षों से ऐसा ही होता रहा। अन्त में श्रीनाथ ने तंग आकर अन्य सामाजिक बन्धनों की विशेष चिन्ता किये बिना ही एक परिवार में व्यंजना का सम्बन्ध तय कर दिया। सौभाग्य से व्यंजना को भी लड़का बहुत बुरा नहीं लगा, अतः उसने अपनी सम्मति दे दी।

जैसी धूम-धाम लक्षणा के विवाह में हुई, उससे किसी प्रकार से व्यंजना के विवाह में भी कोई कमी नहीं होनी चाहिए अन्यथा लोग क्या कहेंगे। अतः श्रीनाथ को हजार रुपये का ऋण लेना पड़ा। उन्हें कभी-कभी विभाव को देखकर अवश्य सन्तोष होता था। उनको यह विश्वास होने लगा था कि विभाव शीघ्र ही उन्हें परिवार व अर्थ की समस्या से मुक्त कर देगा। जैसे-तैसे करके विवाह हुआ। अनेक प्रयत्न करने पर भी एक दो सगे-सम्बन्धी रुष्ट होकर ही विदा हुए। किसी तरह श्रीनाथ तथा उनकी पत्नी सुलोचना को, ठंडी साँस लेने का अवसर मिला।

इसी वर्ष विभाव ने भी इण्टर की परीक्षा दी और स्वयं के प्रयत्नों तथा परमेश्वर की अनुकम्पा से वह द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ। परिवार में सबको हार्दिक प्रसन्नता हुई और होती भी क्यों न ! विभाव सबसे बड़ा पुत्र जो था। अनुभाव तथा संचारी भी अपने भैया की प्रगति देख फूले नहीं समाते थे। उन्हें अपने भाई की शिक्षा का अनुमान कर कभी-कभी आश्चर्य भी होता था।

वैसे तो बड़ी बहन लक्षणा का सबसे अधिक स्नेह संचारी पर था, तथापि विभाव के पालन-पोषण तथा शिक्षा-कार्य में उसने तथा उसके पति ने पर्याप्त सहायता की और आगे भी वे विभाव को योग्य बनाने में कोई कसर उठा न रखना चाहते थे। लक्षणा से भी अधिक उसके पति नन्दकुमार का विभाव के प्रति हार्दिक स्नेह था। यह ठीक है कि नन्दकुमार पर्याप्त सम्पन्न व्यक्ति थे, किन्तु विभाव तथा ससुराल के अन्य स्वजनों के प्रति आकर्षण का प्रधान कारण यह था कि उनके स्वयं के परिवार का कोई व्यक्ति अब उनके सम्पर्क में न था। वे विभाव को अपने छोटे भाई से भी अधिक चाहते थे।

अनुभाव व संचारी भी अब हाईस्कूल के विद्यार्थी थे अतः उनकी शिक्षा का व्यय भी दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। उधर विभाव की हार्दिक इच्छा थी कि वह पाँच वर्ष तक डाक्टरी की शिक्षा प्राप्त कर एक सफल डाक्टर बने। वास्तव में स्वयं श्रीनाथ बहुत दिनों से विभाव को डाक्टर बनाने का स्वप्न देख रहे थे किन्तु अब अवसर आने पर अर्थ की समस्या के कारण वे संकट में पड़ गये। वे नहीं चाहते थे कि केवल

अर्थ समस्या के कारण विभाव का मार्ग कुण्ठित हो जाय। किन्तु साधन के अभाव में साध्य की प्राप्ति असम्भव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है। अन्त में मकान को गिरवी रख पाँच-सात हजार रुपये की व्यवस्था करने का निश्चय किया गया।

मनुष्य को यदि यह पूर्व विदित हो कि अगले क्षण में क्या होने वाला है तो सम्भवतः वह कर्म के प्रति तटस्थ-सा हो जाय। सब प्रकार की योग्यता होते हुए भी जब 'रिकमेण्डेशन' के बिना विभाव को मैडिकल कॉलेज में प्रवेश न मिल सका, तो बाध्य होकर उसे स्थानीय कॉलेज में बी० एस-सी० में प्रवेश लेना पड़ा। बी० एस-सी० करने के पश्चात् पुनः मैडिकल कॉलेज में प्रवेश का प्रयत्न करेगा, यह विभाव का दृढ़ निश्चय था।

अनुभाव बाल्यकाल में लगभग पाँच वर्ष तक शारीरिक रोग से ग्रस्त रहा और इस कारण अध्ययन के क्षेत्र में वह प्रगतिशील विद्यार्थी सिद्ध नहीं हो रहा था। एक-दो वर्ष असफल होकर वह किसी प्रकार से हाईस्कूल की परीक्षा में बैठा, किन्तु दुर्भाग्यवश कुछ ही अंकों से असफल हो गया। इसी वर्ष एक दिन लक्षणा अपने पुत्र के उपचार के लिए माँ के पास आई हुई थी और विभाव किसी कार्य-वश दो-तीन दिनों के लिए बाहर गया हुआ था। उसी दिन श्रीनाथ के घर में चोरों ने धावा बोल दिया। चोरी का प्रधान कारण कुछ लोगों के मन में उनके प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हो जाना था। चोरों ने घर में कुछ भी शेष न छोड़ा। कुल मिलाकर लगभग पाँच-छः हजार रुपयों की हानि हुई। लक्षणा आई तो अपने बच्चे के उपचार के लिए

थी, किन्तु अब पुनः अपने घर जाने के लिए भी मार्ग-व्यय की कोई व्यवस्था न थी ।

श्रीनाथ को अपनी हानि की अपेक्षा अपनी पुत्री के दुर्भाग्य पर अधिक शोक हुआ । पर अब हो ही क्या सकता था । पाँच-छः दिनों तक नगर में चोरी की खूब चर्चा रही । किन्तु चोरी कोई नई बात तो थी नहीं । कुछ दिनों भग-दड़ रही, फिर बात दब गई । इस गहरी क्षति-पूर्ति के लिए श्रीनाथ को फिर कुछ ऋण लेना पड़ा ।

दूसरे वर्ष विभाव ने द्वितीय श्रेणी में बी० एस-सी० की परीक्षा में सफलता प्राप्त की । अब वह भी घर की समस्याओं को अनुभव करने योग्य हो चुका था, अतः चाहते हुए भी वह मैडिकल कॉलेज में प्रवेश की जिद्द नहीं कर सका । वैसे लक्षणा तथा नन्दकुमार ने पूर्ण रूप से सहायता देने का वचन दिया, किन्तु श्रीनाथ पहले से ही अपने दामाद के अहसानों से दबे हुए थे अतः उन्होंने आगे सहायता लेना उचित न समझा ।

इतना होने पर भी श्रीनाथ ने विभाव का अध्ययन स्थगित नहीं किया, वरन् उसी कॉलेज में एम० एस-सी० में उसने प्रवेश ले लिया । सब लोग यह सोचकर सन्तोष कर लेते थे कि दो वर्ष बाद स्वयं विभाव इस योग्य हो जायेगा कि किसी को किसी भी बात की चिन्ता न रहेगी । स्वयं विभाव सबको इस बात का विश्वास दिला चुका था ।

व्यंजना को सुसराल गये एक-दो वर्ष हो गये थे । बीच में में वह केवल एक बार ही माँ के पास आ सकी थी । उसके

ससुराल वाले श्रीनाथ से किन्हीं कारणों-वश रुष्ट हो गये थे। व्यंजना भी स्वभाव से कुछ जिद्दी तथा मुँहफट लड़की थी, इस कारण वह स्वयं के स्वभाव से भी अपने ससुराल वालों को प्रसन्न न कर सकी।

: ४ :

"देखो अम्मा, यदि तुम्हारे पास रुपये-पैसे की कमी थी तो तुम्हें मुझे एम० एस-सी० में प्रवेश ही नहीं लेने देना चाहिए था। तुमने तो बड़े इत्मीनान से कह दिया कि अभी पिताजी का मीनआर्डर नहीं आया, रुपये की व्यवस्था कहाँ से हो। पर तुम्हारे इस कहने मात्र से तो मेरी किताब नहीं आ जायेगी। तुम्हें क्या पता, पढ़ाई-लिखाई कैसे होती है। पिताजी को भी तीन-चार बार पत्र लिख चुका हूँ कि जल्दी-से-जल्दी कम-से-कम ५०-६० रुपये भेज दें पर वे बराबर टालते आ रहे हैं। मैं खुद जानता हूँ कि बी० एस-सी० तक ही कितनी कठनाइयों में से मुझे गुजरना पड़ा है। जब देखो तब किताबें इधर-उधर से माँगता फिरता था। अब मैं यह करने वाला नहीं। पैसा नहीं तो साफ-साफ मनाकर दो, कल से घर बैठ जाऊँगा। मैं नहीं पढ़ सका तो क्या, अनुभाव और संचारी तो ऊँची शिक्षा लेकर कल ही बड़े अफसर बन जायेंगे।"

विभाव सम्भवतः और कुछ भी कहता किन्तु सुलोचना बीच में ही बोल उठी—"बेटा, मैंने यह कब कहा कि पैसे नहीं मिलेंगे, या तुम्हारी किताब का प्रबन्ध नहीं होगा। लेकिन इसी समय में एकदम तुम्हारी माँग कैसे पूरी करूँ। उनका पत्र आ चुका है, एक दो दिन और ठहर जाओ। रही अनुभाव और संचारी की बात, तो भैया वे तुम्हारे रास्ते में नहीं। उनके कारण, मुझे खूब याद है, तुम्हारी कोई भी बात अधूरी नहीं

रहने दी है। तुम यों ही लाल-पीले हो रहे हो।"

क्रोध में किसी भी व्यक्ति को समझाने का उलटा प्रभाव पड़ता है, सुलोचना इस बात को नहीं समझ रही थी। विभाव कुछ तनकर खड़ा हो गया और तीखे स्वर में बोला—"मैं बेवक़ूफ नहीं, जो बेकार में लाल-पीला होऊँ। पर आये दिन रुपया नहीं है, 'मनिआर्डर' नहीं आया, ये बातें मुझे पसन्द नहीं। मैं अब कोई बच्चा नहीं, तुमसे ज्यादा समझता हूँ। तुम्हारा क्या है, घर की चार-दिवारी में बन्द हो, जरा दुनियाँ में कदम रखो तो पता चल जाय। फिर यह कोई नई बात तो नहीं। जबसे कॉलेज में कदम रखा है तब से तुमने भला समय पर मेरी कौन-सी बात पूरी की है। जब देखो तब, आज यह नहीं है आज वह नहीं है। अरे, मैं कहता हूँ कि मुझे कॉलेज में क्या इसीलिए डाला था? तुम्हें पढ़ाई-वढ़ाई का कुछ पता ही नहीं, तुम क्या समझो। मैं पूछता हूँ कि संचारी की चप्पल अभी आना जरूरी था। वह कहाँ का लाट साहब है? बोलो क्या जवाब है तुम्हारे पास?"

सुलोचना वैसे तो गत दो वर्षों से विभाव के मुँह से कुछ ऐसी ही बातें सुनती रही थी, किन्तु आज उसे अनुभव हुआ कि विभाव पर शिक्षा का उल्टा असर पड़ रहा है। फिर भी कहीं बात न बढ़ जाये, इस भय से उसने शान्त स्वर में जबाव दिया—"बेटा, तुम यों ही गुस्सा कर रहे हो। पिछले एक सप्ताह से संचारी नंगे पैर घूम रहा है। गर्मी के कारण धरती कितनी तपती है। नंगे पैर कदम बाहर नहीं रखा जाता। दूसरी बात यह कि उसकी चप्पल में जो सात रुपये खर्च हुए, वह मेरी जेब से

नहीं वरन् लक्षणा ने किये हैं। मैंने तो उसे मना भी किया था, पर वह न मानी। फिर सात रुपयों में तुम्हारी किताब ही कौन-सी आ जाती। विभाव, तुम यह क्यों भूलते हो कि आज तक हम सब ने तुम्हारी जरूरतों को सदा आगे रखा है। सब काम बन्द करके तुम्हारी माँग को पूरा किया है। यह ठीक है कि हम बहुत बड़े आदमी नहीं, लेकिन हमने फिर भी किसी बात का अभाव तो तुम्हें नहीं होने दिया। हमीं क्या तुम्हारे जीजाजी ने तो सदा तुम्हें अपने छोटे भाई की तरह माना है, जब तुमने रुपया-पैसा माँगा है तुम्हें मिला है। इसके साथ तुम यह क्यों नहीं समझते कि जैसे हमें तुम्हारा ख़याल करना चाहिए, वैसे ही अनुभाव तथा संचारी का भी। तुम भी तो बड़े भाई हो। संचारी की चप्पलों की मामूली-सी बात को लेकर तुम्हें लड़ना शोभा नहीं देता। मैं यह कहना चाहती हूँ कि...।"

"मुझे खूब मालूम है कि आप क्या कहना चाहती हैं। आपने मेरी जरूरतों को सदा आगे रखा, मेरी माँग को सबसे पहले पूरा किया, बड़ा अहसान किया। अरे, तुमने मुझे जन्म दिया, यह क्या कम बड़ा अहसान है। मैं देखता हूँ कि माँ-बाप सदा ही बच्चों को दबाये रखना चाहते हैं। मुझे बचपन के दिन भूले नहीं हैं, अम्मा! 'जरा-सी घर लौटने में देर हो जाती थी, तो पिताजी मार-मार कर हड्डी-पसली एक कर देते थे। यह भी भला कोई बात हुई कि सूरज डूबने से पहले खेल छोड़कर घर आ जाओ। नहीं आओ, तो जूते खाओ। ताश मत खेलो, बाजार में मत घूमो, सिनेमा मत देखो, उससे मत मिलो, इसके घर मत जाओ, हाथ-खर्च के लिए पैसों की कोई ज़रूरत

नहीं'–मुझे बताओ इसके अलावा पिताजी से मुझे और क्या बातें सुनने को मिली हैं। छोटे भाई-बहन कोई कसूर करें तो मुझे बड़े होने के कारण शान्त व गम्भीर रहने का उपदेश दिया जाता था। मैट्रिक से पहले मैंने 'पैण्ट' का मुँह तक नहीं देखा, जब देखो तब हाथ का धुला निकर। पर उस समय मैंने सब कुछ सहा। और मार्ग ही क्या था? लेकिन इतना होने पर भी तुम्हारे अहसानों की लिस्ट का कोई ठीक-ठिकाना ही नहीं। संचारी छोटा लड़का है, अभिधा बच्ची है, सुनते-सुनते कान पक गये। बस, एक मैं ही सबके लिए मरने को हूँ।"

लक्षणा को पति के पास से आये अभी एक सप्ताह ही बीता था। आँगन में बैठी-बैठी अभी तक चुपचाप वह सब बातें सुन रही थी। जब विभाव आगे ही बढ़ता गया तब उसे बोलना ही पड़ा। उसने कुछ गम्भीर वाणी में कहा—

"विभाव, देखा जाय तो तुम्हें इन सब बातों के कहने का कोई हक नहीं है। हमने या पिताजी ने क्या किया, क्या नहीं किया, इसकी व्याख्या करने वाले तुम कौन? तुम पढ़-लिख रहे हो तो सबकी बात का आदर करना सीखो। आज जरा मैंने संचारी के लिए चप्पल ला दी तो तुम्हारी आँखें चढ़ गईं। जब वे तुम्हें हर दफा दस-दस, बीस-बीस रुपये दे जाते हैं तब संचारी तो कुछ नहीं कहता, घर में किसी को हवा भी नहीं लगने पाती। अगर किताब इतनी जरूरी भी थी तो मुझसे कहते, या अपने जीजा जी को लिख देते। भला इसमें गरम होने की क्या बात है?"

विभाव को लगा कि लक्षणा माँ की हाँ में हाँ मिला रही है। वह और भी जोर से बोला—"तो जीजी, तुम भी अपने

अहसानों का आज हिसाब-किताब करने पर उतारू हो। तुम लोगों ने क्या मुझे भिखमंगा समझ लिया है। मैंने जीजाजी से कब रुपया माँगा है, वे खुद ही दे जाते हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि सदा उनके सामने हाथ पसारता फिरूँ। संचारी, तुम्हारा ही नहीं मेरा भी छोटा भाई है, उसका ख्याल अब तुमसे ज्यादा मुझे है। तुम अपने घर की हो चुकी हो। यदि ऐसे ही जरा-जरा सी बातों पर तुम्हें अपने दिये-लिये का हिसाब करना है तो आगे से मत दिया करो। जीजाजी को भी मना कर दो। घबराती क्यों हो, मौक़ा आने पर पाई-पाई का हिसाब चुकता कर दूँगा। तुमने क्या मुझे भिखमंगा समझ लिया है ?"

लक्षणा को अपने छोटे भाई के मुँह से ऐसी बात सुनकर अत्यन्त खेद हुआ। अभी तक वह कुछ कड़े स्वर में ही विभाव की बातों का उत्तर दे रही थी किन्तु अब दुःख के कारण उस का गला भर आया, आँखों में आँसू भर कर बोली—

"तुम ठीक कहते हो भैया, ठीक कहते हो। बोलने वाले का मुँह कौन पकड़ सकता है ! आज से चार-पाँच वर्ष पहले ही तुमने इससे मिलती-जुलती बातें कहना शुरू कर दिया था। लेकिन तब हम समझते थे कि तुम बच्चे हो, नादानी में गुस्सा कर बैठते हो। लेकिन आज तुम्हारे दिल की गाँठ का पता चला। मैं खुद चाहती हूँ कि तुम शीघ्र ही सब योग्य हो जाओ, दस-पाँच लोगों का भार आराम से सह सको, लेकिन हिसाब चुकाने की बात मैंने सोची तक न थी। हमारे रुपयों का हिसाब तुम चाहो तो आगे क्या अभी कर सकते हो, लेकिन तुम्हीं ही क्या,

कोई भी भाई अपनी बहन के स्नेह और आत्मीयता का हिसाब आज तक नहीं चुका सका। मुझे आज मालूम हो रहा है कि तुमने अभी तक जो कुछ भी हमसे या अम्मा-पिताजी से लिया है, वह भाई या बेटे की तरह नहीं, वरन् ऐसे लिया है जैसे एक आदमी दूसरे से ब्याज पर ऋण लेता है। इसी कारण हिसाब-चुकाने की बात तुम्हारे मुँह से बार-बार निकल रही है। रही भिखमंगे की बात, तो एक भिखारी की बहन भला किसी को दे ही क्या सकती है......?"

लक्षणा अपना दुःख हल्का करने को कुछ और भी कहती, लेकिन तभी संचारी अपनी चप्पलें बीच आँगन में रखता हुआ विभाव से बोला—"भैया, चप्पलें तुम्हारे सामने पड़ी हैं, तुम इन्हें चाहे कुएँ में डाल दो, चाहे वापस कर सात रुपये ले लो। लेकिन इनके कारण बेकार का गुस्सा मत करो।"

विभाव को लगा कि उसके जख्म पर नमक छिड़का जा रहा है। उसने आव देखा न ताव। चप्पल उठा कर गटर में फेंक दी और चिल्ला कर बोला—"तो संचारी भी अब मेरी जबान पकड़ेगा। अभी पूरे उगे तो हैं नहीं, आये बड़े भाई से जबान-दराजी करने। मैट्रिक में क्या आ गये अपने आपको कुछ समझने लगे हैं। लाड़-प्यार में बच्चे ऐसे ही बिगड़ते हैं। अभी दो चाँटें पड़ें तो मुँह फिर जायेगा......।"

न जाने इस प्रकार की कितनी बातें बोलता हुआ विभाव पैर पटकते हुए अपने कमरे में गया, कपड़े पहने और बिना कुछ कहे घर से निकल पड़ा। लक्षणा माँ तथा संचारी को समझाने लगी। लड़ाई-झगड़े में कब शाम समाप्त हो अंधकार छा गया

इसका किसी को पता न चला। तभी अभिधा ने आकर कहा, जीजी, भैया तो अम्मा से रोज़ ही ऐसे लड़ते हैं। न जाने इन्हें क्या होता जा रहा है। खाना कभी का ठंडा हो गया है। तुम बेकार क्यों रोती हो।"

अभिधा की बात सुन तीनों-चारों उठकर रसोई में चले गये। उस रात को लगभग तीन-साढ़े तीन बजे विभाव घर लौटा और किसी की बात का जवाब दिये बिना ही सीधा अपने कमरे में जाकर ऐसा बेखबर सोया कि सुबह नौ बजे से पहले उठने का नाम ही नहीं लिया......।

: ५ :

मनुष्य के उत्थान व पतन दोनों में उसकी चरित्र-गत विशेषताओं के साथ परिस्थिति तथा वातावरण का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति में मानवीय गुणों के अतिरिक्त पाशविक अंश भी होता है। वातावरण, परिस्थिति तथा अवसर-विशेष के अनुरूप उक्त दोनों वृत्तियाँ क्रियाशील होती हैं। जिनके पास तर्क व विवेक का कवच होता है वे अपने को विषम परिस्थितियों में भी पतन के मार्ग से सुरक्षित रखने में बहुत बड़ी सीमा तक सफल हो जाते हैं। जिनके पास यह वरदान नहीं होता वे बुराई के शिकार बन जाते हैं।

गत शाम को घर से झगड़कर विभाव जब बाहर सड़क पर आ खड़ा हुआ तो उसके कदम अपने आप अपने प्रिय मित्र राजनारायण के घर की ओर बढ़ने लगे। राजनारायण विभाव का पुराना सहपाठी था। एक-दो वर्ष के लिए यद्यपि वह कहीं अन्यत्र चला गया था, तथापि दोनों मित्रों की मित्रता में कोई कमी न आ पाई। राजनारायण के पिता की गणना शहर के रईसों में होती थी। उन्हें किसी भी बात की कमी न थी। राजनारायण तथा उसकी बहन रजनी अपने पिता के ऐश्वर्य को देखकर फूले न समाते थे।

राजनारायण पर लक्ष्मी की जितनी कृपा थी, सरस्वती उससे उतनी ही रुष्ट थी। उधर विभाव की स्थिति इससे बिल्कुल विपरीत थी। उसे परमेश्वर की ओर से विलक्षण

बुद्धि का वरदान प्राप्त था। इस तरह दोनों मित्र मिलकर अपनी पारस्परिक कमियों को दूर कर लेते थे। राजनारायण को सप्ताह में बड़ी मुश्किल से दो दिन के लिए कॉलेज जाकर कक्षा में उपस्थित होने का 'मूड' आता था। विभाव के द्वारा उसे बने-बनाये नोट्स प्राप्त हो जाते थे। अभी तक प्रति वर्ष तृतीय श्रेणी प्राप्त करते हुए राजनारायण आगे बढ़ ही रहा था। वैसे वह जानता था कि न तो वह कहीं जाने वाला है और न ही विश्वविद्यालय कहीं भागने को है। उत्तम श्रेणी में सफल होने की आवश्यकता तो उन लोगों को होती है जिनके पास केवल विद्या होती है।

राजनारायण बड़ी देर से विभाव की प्रतीक्षा करते-करते कुछ झुंझलाने-सा लगा था। कारण यह था कि 'शो' आरम्भ होने में अब केवल दस मिनट ही शेष थे। राज सीधा नीचे उतरा। मोटर साईकिल पर सवार हो विभाव के घर चलने को ही था कि उदास चेहरा लिए विभाव आता दिखाई दिया। राज ने अधिक बातचीत किये बिना ही विभाव को गाड़ी पर बैठाया और वे दोनों सिनेमा पहुँचे। एक तो फिल्म भी बहुत अच्छी न थी, दूसरे विभाव का 'मूड' भी खराब था। अतः विभाव को अपनी बात कहने का अवसर मिल गया। संक्षेप में विभाव ने सारा हाल राज को कह सुनाया। राज ने बड़ी लापरवाही से उत्तर दिया……

"विभाव, पढ़ाई-लिखाई में तू चाहे कितना ही अच्छा क्यों न हो, वैसे तू है पूरा बेवकूफ। सौ दफा कहा है कि जब घर वालों से नहीं पटती, तो मेरे पास आकर क्यों नहीं रहने

लगता। पर तेरी समझ में आये तो कैसे ? मातृ-भक्ति, पितृ-भक्ति का नशा जो है। तेरे जैसे बहुत-से श्रवणकुमार मैंने देखे हैं। मैं भी अगर तेरी तरह मुँह बन्द किये सब कुछ सुनने वाला होता, तो कभी का मेरा काम तमाम हो गया होता। माता-पिता के आदर का अर्थ उनकी गुलामी करना तो नहीं। कौन कहेगा कि आप घर के बड़े लड़के हैं। मुझे तो यार तुझ पर तरस आता है।"

विभाव को लगा कि राज से बढ़कर विश्व में किसी के पास भी सहानुभूति का शीतल महरम नहीं। वह चुप-चाप राज की बातें सुनता रहा। सिनेमा से निकलकर दोनों ने एक बढ़िया होटल में खाना खाया। सब कुछ करने पर भी जब विभाव का 'मूड' ठीक नहीं हुआ तो राज उसे लेकर अपनी पुरानी अंग्रेजी शराब की दुकान पर पहुँचा और वहाँ एक-एक पैग दोनों ने चढ़ाया। एक-दो बार पहले भी विभाव राज के साथ सोम-सुरा का पान कर चुका था, किन्तु आज उसे एक विशेष शान्ति अनुभव हुई।

इसके बाद चाँदनी रात में दोनों काफी देर तक टहलते रहे। एक-दो घंटे राज के यहां विभाव ने ताश से मन बहलाया। वैसे राज ने विभाव को सारी रात अपने घर पर ही बिताने की सलाह दी, किन्तु जब विभाव ने बहुत आनाकानी की तो उसे बाधित होकर विभाव को उसके घर छोड़ने जाना पड़ा।

वैसे तो पहले भी कई बार विभाव राज के यहाँ दिन-दिन, रात-रात रह चुका था, साथ ताश खेला, सिनेमा देखा,

खूब घूमा भी था किन्तु आज उसके हृदय में राज के प्रति कृतज्ञता का एक विशेष भाव उत्पन्न होने लगा। उसे लगा कि विश्व भर में राज से बढ़कर उसका हितैषी कोई नहीं है। यदि आवश्यकता आ पड़े तो राज उसके भविष्य का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व अपने सबल कन्धों पर ले सकता है। उसे किसी भी बात की कमी नहीं। वह दुनियाँ में सम्भवतः सबसे अधिक खुश इन्सान है।

उस रात विभाव को आरम्भ में जब तक नींद न आई, वह राज के उपकारों के प्रति निरन्तर सोचता रहा। आज से पहले भी जब कभी वह स्वयं की तुलना राज से करता था तो उसे बड़ी निराशा-सी होती थी। उसे राज का स्नेह अत्यन्त सहज तथा निःस्वार्थ अनुभव होता था।

विभाव ऐसा सोचते समय इस सत्य पर विचार नहीं कर पाता था कि आज के भौतिकवादी युग में जब बाहर का कोई व्यक्ति किसी के प्रति असाधारण सहानुभूति दिखाता है तो उसका कोई-न-कोई कारण अवश्य होता है। बिना किसी कारण के कोई भी कार्य सम्भव नहीं। यह ठीक है कि जो व्यक्ति अव्यवहारिक होते हैं वे अपने लाभ को पहले से ही व्यक्त कर देते हैं और ऐसे ही लोगों को स्वार्थी कहा जाता है। लेकिन जिन्हें लौकिकता का पर्याप्त ज्ञान होता है वे कभी भी स्वयं के लाभ की बात जवान पर नहीं आने देते। राज-नारायण को ऐसे लोगों में तो शामिल नहीं किया जा सकता, फिर भी कम-से-कम विभाव तो उसके स्वार्थ का अनुमान न लगा पाया था।

गत दो-ढाई वर्षों में विभाव तो कई बार राज के घर आता-जाता रहा था किन्तु राज को अपने घर पर आमंत्रित करने का साहस वह कभी न कर सका था। राज स्वयं ही कभी किसी काम से चला जाता तो बात दूसरी थी।

उस दिन किताब के माध्यम से ३०-४० रुपये घर से प्राप्त कर राज तथा उसकी बहन रजनी को किसी बढ़िया से होटल में 'ऐण्टरटेन' करने का उसका विचार था। वह चाहता था कि उसे भी अपने मित्र राज को कभी-कभी सिनेमा आदि दिखाना चाहिए। किन्तु दुर्भाग्य से बात बनने की अपेक्षा बिगड़ गई।

गत वर्ष जब रजनी इण्टर साइन्स की परीक्षा देने को थी तो उसने अपने भैया से 'ट्यूटर' की व्यवस्था करने को कहा। राज को भला इतना समय कहाँ था कि वह ट्यूटर की व्यवस्था करता। अतः जब विभाव के कानों में यह बात पड़ी तो वह स्वयं ही सप्ताह में दो-तीन बार रजनी को घर जाकर पढ़ा देता था। विभाव समझता था कि ऐसा कर वह राज के अह-सानों के भार को कुछ हल्का कर सकेगा।

संयोग से रजनी परीक्षा में सफल हो गई और अब उसने तृतीय वर्ष विज्ञान में प्रवेश ले लिया था। जब कभी भी आवश्यकता होती थी तो वह विभाव से अध्ययन के सम्बन्ध में सहायता लेने में नहीं झिझकती थी।

: ६ :

अपने पिता श्रीनाथ का पत्र लक्षणा बड़े चाव से माँ को सुना रही थी। अनुभाव, संचारी, अभिधा, अधीर आदि सब ही माँ को घेरे बैठे थे। पत्र सुनते-सुनते कभी-कभी अधीर बीच में बोल पड़ता था। पत्र के समाप्त होते ही लक्षणा खिल-खिला कर माँ से बोली—"लो अम्माँ—मैंने क्या कहा था। मैं तो पत्र हाथ में लेते ही समझ गई थी कि पिताजी ने किस सम्बन्ध में लिखा है। यदि शादी की बात न होती तो पिता-जी क्या लिफाफा लिखने वाले थे। जब देखो, तब कार्ड ही लिखते हैं। तुम्हें विभाव से आज ही बात चलाने की कोई जरूरत नहीं। उससे मैं खुद ही बात कर लूँगी। वह चाहे नौकरी लगने न लगने का कितना ही बहाना क्यों न करे अब हमें पीछे नहीं हटना है। उसकी ज़िद के कारण तीन सम्बन्ध पहले से ही हाथ से निकल गये हैं। सच्ची कहती हूँ, अम्माँ अब तो बात बन कर ही रहेगी।"

इसी बीच में संचारी कुछ कहना चाहता था लेकिन सुलोचना को बोलता देख बेचारा चुप रह गया। माँ कहने लगी—"बेटी, मैं तो पिछले तीन वर्ष से पीछे पड़ रही हूँ कि विभाव को जल्दी से जल्दी बाँध देना चाहिये। उसका आज-कल कुछ ठीक नहीं है। तुम्हें तो मालूम है कि वह रात को ११-१२ बजे से पहले कभी नहीं लौटता। घर पर रात तक

खाना लिये बैठे रहो, लेकिन आये दिन '—मैं खाना खाकर आया हूँ'—यही बात सुनने को मिलती है। भला ऐसे कब तक चलेगा। मुझे तो दिखता है कि यदि ऐसा ही रहा तो न जाने परीक्षा में क्या होगा।"

माँ के चुप होते ही लक्षणा बोली—"यही तो मैं भी कह रही हूँ, माँ। वैसे हमेशा की तरह इम्तहान से बीस-पच्चीस दिन पहले वह दिन-रात एक करके पास तो जरूर हो ही जायेगा, लेकिन इससे शादी का कोई वास्ता नहीं। बीवी आकर खुद ही उसे ठीक-ठिकाने लगा देगी। पहले तो पिताजी ही तैयार नहीं थे, अब कुछ-कुछ बात मानते हुए से मालूम होते हैं। उनसे यदि यह बात कहें कि विभाव के उठने-बैठने में अब कुछ और ही बात दखाई देने लगी है, तो वे ठीक मतलब नहीं समझेंगे। खैर, अपने को भी इस बात पर जोर देने की क्या पड़ी है, मन से तो सभी जानते हैं।"

इससे पहले कि सुलोचना उत्तर में कुछ कहती, अनुभाव बोल पड़ा—"तुमने क्या कहा जीजी। मन में सभी क्या जानते हैं? तुमने कल सुना नहीं था कि भैया को रजनी को पढ़ाना जो पड़ता है और पढ़ाने में समय का ख्याल नहीं रहता। इस साल उन्हीं के पढ़ाने से तो रजनी इण्टर से 'थर्ड इयर' में आ सकी।"

अनुभाव की बात समाप्त होने से पूर्व ही संचारी कुछ हँसता-मुस्कराता-सा बोला—"अनुभाव भैया, बात तो तुम ठीक ही कह रहे हो। कौन नहीं जानता कि भैया को रजनी को पढ़ाना पड़ता है। लेकिन जरा यह तो बताओ कि आज से दो

वर्ष पहले जब वे बी० एस-सी० में थे तब पिताजी ने एक ट्यूशन की बात भैया से कही थी, तो उन्होंने समय न होने की ऐसी शिकायत की, कि फिर कभी भी पिताजी उनसे इस सम्बन्ध में कुछ न कह सके। एम० एस-सी० की पढ़ाई तो और भी कठिन होती है। फिर रजनी के लिये भैया कैसे समय निकाल पाते हैं। ट्यूशन फीस-वीस की भी कोई बात नहीं है।"

अनुभाव, संचारी के स्वभाव से पूर्णतया परिचित था। वैसे तो दोनों की आयु में ढाई-तीन वर्ष का अन्तर था तथापि बाल्यकाल से एक साथ खेलने-कूदने से दोनों में कुछ मित्रता का-सा भाव भी उत्पन्न हो गया था। अनुभाव पहले तो संचारी का मुँह ताकता रहा फिर बोला—"तो संचारी अपने मित्र की बहन को पढ़ाने में कौन बुराई है, जरा मुझे भी तो मालूम पड़े। यदि भैया उससे लेन-देन की बात करें तो अच्छा लगेगा। काम पड़ने पर सहायता करनी ही चाहिये। रजनी को संगीत का तो बड़ा शौक है, पर पढ़ाई-लिखाई के मामले में भगवान ही मालिक है……।"

संचारी भला कब रुकने वाला था। चट से बोल पड़ा—"व्यंजना जीजी तथा अभिधा शायद बहन नहीं। मैं ही जब मैट्रिक में था तो एक जरा-सी बात समझाने के लिये भैया पन्द्रह दिन तक टालते रहे और उसके बाद उन्हें आज तक समय नहीं मिला। फिर रजनी को क्या मैं नहीं जानता। अभी परसों ही हारमोनियम सुनने के लिये मैं एक-दो घण्टे बैठा रहा। तुम उससे कभी मिले तक नहीं, तुम क्या जानो।"

अनुभाव के कुछ कहने के पूर्व ही सुलोचना दोनों को चुप

कराती हुई लक्षणा से बोली—"तो बिटिया तुम अपने पिताजी को आज ही लिख दो कि जल्दी ही हमारा विचार लड़की देखने जाने का है। विभाव को भी कह दो और तुम संचारी उन लोगों को लिख दो कि हम लड़की देखने आ रहे हैं। लड़की देखने के बाद ही सारी बात तय होगी।"

"मैं लड़की देखता-देखता तंग आ चुका हूँ माँ, अब रहने ही दो तो अच्छा हो···" कहता हुआ विभाव ऊपर कमरे में आ पहुँचा। लक्षणा तुरन्त बोल उठी—"तुमसे सलाह किसने माँगी है, विभाव। यदि अकेले जाने का डर न होता तो तुमसे साथ जाने को कभी न कहती। जरा बहाने-बाज़ी कम किया करो। दाई से पेट क्यों छिपाते हो।

संचारी ने पत्र लिखना अभी आरम्भ ही किया था। लक्षणा की बात सुनकर उससे चुप न रहा गया। उसके पास बैठता हुआ बोला—"तुमने भी खूब कहा जीजी। भैया की बात तो छोड़ो। अभी यदि तुम मुझसे ही शादी-विवाह की बात करने लगो तो मैं ही शरमा जाऊँगा। तुम क्या यह चाहती हो कि तुम्हारे कहते ही भैया घोड़े पर सवार हो जायें।"

विभाव को जब कभी बात-चीत का 'मूड' आता था तो वह छोटे-बड़े का कोई विचार नहीं करता था। संचारी के सिर पर हल्के से चपत लगाता हुआ बोला—"चाहे जो हो मिस्टर संचारी, इस बार तुम लड़की को देखने हमारे साथ नहीं चलोगे। लोगों को धोखा हो जाता है, और यदि चलना ही है·········"

"ठीक है भैया मैं तुम्हारा मतलब समझ गया। इसमें तो कोई सन्देह है ही नहीं कि मेरे बिना जाये इतना महान् कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। इसलिये—'माई विज़िट इज़ नैसेसरी।' हाँ, इस बार ज़रा कम शरमाऊँगा, और तुमसे पीछे जीजी की आड़ में बैठूँगा। मुझे अभी क्या जल्दी है।"

सुलोचना बच्चों की बात सुन-सुन कर खूब प्रसन्न हो रही थी। उसे लग रहा था कि अब शीघ्र ही उसके परिवार में भी एक सुन्दर-सी बहू आने वाली है। संचारी की बात सुनते ही सब हँस पड़े। इतने में अभिधा ने विभाव के सामने भोजन की थाली परस दी। विभाव भोजन करते-करते बहन को संकेत कर बोला—

"पर जीजी, तुमने रुपये-वुपये की तो कोई बात नहीं बताई। कुछ आशा है या नहीं।—'हमारे पास तो साब केवल कन्या है'—यह बात कम से कम मेरी समझ में नहीं आने वाली। पिताजी तो आदर्श के चक्कर में पड़े हैं। अरे, इन बातों में क्या रखा है। जरा सोचो तो जीजी, दयाशंकर जो मैट्रिक भी नहीं, उसे ही दहेज में चार-पाँच हजार रुपये तो नकद मिले है। मैं एम० एस-सी० होने जा रहा हूँ—ज़रा इस बात का ख्याल रखना। और अम्माँ—तुम्हारी सुन्दर-सी-बहू वाली बात भी अब पुरानी हो गई। केवल सुन्दरता को लेकर चाटना है क्या?"

संचारी पत्र लिखकर डालने जाने वाला ही था कि विभाव की बात उसके कानों में पड़ी। वह बोला—"भैया 'ब्यूटी इज़ ट्रुथ" काली-पीली भाभी को कम से कम मैं तो साथ लेकर

चलने वाला नहीं। फिर यदि पढ़े-लिखे लोग ही रुपये को विवाह का प्रधान अंग मानेंगे तो दहेज की समस्या कभी सुलझने वाली नहीं। मैं कहता हूँ कि विवाह तो लड़की से होता है रुपये से नहीं.........।"

संचारी आगे कुछ और भी कहता किन्तु विभाव न आगे सुनने से पूर्व ही ज़ीने की ओर संकेत करते हुए कहा—

"आप का कहना बिल्कुल ठीक है। देश की सब समस्याएँ आप ही को सुलझानी हैं। पहले सीधे से पत्र डाल कर आओ। फिर इस समस्या पर विचार करना।"

संचारी सीटी बजाता हुआ ज़ीने से उतरा और जल्दी से पत्र डालकर घर आ गया। उसके आते ही लक्षणा बोली—

"संचारी कल शाम तक तू अपनी सब तैयारी कर रखना, ऐन वक्त पर यदि पेण्ट में 'क्रीज़' नहीं है, कमीज़ के कॉलर की 'आयरन' बिगड़ गई है—जैसी बात बनाई तो तुम यहीं रह जाना।"

: ७ :

दिन-भर अपने पापा की प्रतीक्षा करते-करते जब शाम हो गई तो रजनी की चिन्ता क्रमशः बढ़ने लगी। वैसे तो फर्म के काम से जब कभी उसके पापा ब्रजनाथ बाहर जाते थे तो लौटने में एक-दो दिन का विलम्ब हो ही जाता था, किन्तु इस बार तो पूरे चार दिन निकल गये थे। इस बीच में ब्रजनाथ का कोई तार या पत्र भी न आया।

राजनारायण का सुबह से पता न था। फर्म का काम भी इस कारण कुछ शिथिल-सा पड़ गया था। रजनी अपने कमरे की सामने वाली छत पर खडी-खड़ी इन सब बातों पर ही विचार कर रही थी कि विभाव नीचे सड़क पर जाता हुआ दिखाई दिया। उसने पहली बार तो साधारण स्वर में ही आवाज दी किन्तु जब विभाव ने नहीं सुना तो कुछ आगे बढ़ कर वह ऊँचे स्वर से बोली—"अरे जरा सु नये तो, मैं कब से आवाज दे रही हूँ।"

विभाव सुनते ही ठिठक कर खड़ा हो गया और बोला—"अरे रजनी, तुम कैसे खड़ी हो। क्या काम है। मैं जरा जल्दी में हूँ। लौटते समय आऊँगा। राज नहीं है क्या ......"

रजनी ने कहा—"राज भैया हों या न हों इससे क्या। बात बहुत जरूरी है। इसलिए आवाज दी। यदि आपका काम जरूरी है तो जाइये ; मैं कैसे रोक सकती हूँ।"

विभाव बिना कुछ बोले ऊपर चला आया और सीधा रजनी के पीछे-पीछे उसके कमरे में चला गया। रजनी सामने कुर्सी पर बैठती हुई बोली—"आपने तो समझा होगा कि मैं अपनी कोई 'डिफीकल्टी, 'रिमूव' करना चाहती हूँ, इसलिए बचना चाहते थे। लेकिन वास्तव में पापा का कोई समाचार न आने से मुझे बहुत चिन्ता हो रही है। भैया का सुबह से कोई पता नहीं। एक आप हैं जो भैया को कभी समझाते तक नहीं। उनकी दिनचर्या मुझसे ज्यादा तो आपको पता है, आप से क्या कहूँ।" विभाव बैठा-बैठा किसी अँग्रेजी पत्रिका के पन्ने पलट रहा था लेकिन रजनी की बात सुनते ही उसने पत्रिका बन्द कर दी और कुछ गम्भीर स्वर में बोला—

"रजनी, तुम्हारा ख्याल गलत है। जब भी तुमने मुझसे कुछ पूछा है, मैंने हमेशा तुम्हें बताया है। भला आज क्यों बहाना बनाने लगा। वैसे मैं खुद ही परसों बाहर से लौटा हूँ। मुझे पापा जी के सम्बन्ध में कुछ भी पता नहीं था। रही राज को समझाने की बात, तो भई वह तो जिद्दी आदमी है। मैं स्वयं समझाते-समझाते थक गया हूँ। संचारी तो प्रायः हारमोनियम सुनने तुम्हारे पास आता है, तुमने मुझे कहला भेजा होता।"

रजनी एक मिनट तक विभाव की ओर ताकती रही, फिर कुछ शान्त स्वर में बोली—

"संचारी के आने न आने से क्या मतलब। मैं तो आपके आने की बात कर रही हूँ। मैं कहलाती तब आप आते। अभी तो परीक्षा के लिये तीन महीने पड़े हैं। फिर आप जैसे 'इण्टेलीजेण्ट' 'स्टुडेंट' यदि अभी से दिन-रात एक करने लगेंगे तो

हम जैसों का क्या होगा।"

विभाव मुस्कराता हुआ बोला—"मैं जैसा 'इण्टैलीजेण्ट' हूँ सो तो मुझे पता है, पर मेरे आने न आने का पढ़ाई से क्या सम्बन्ध। संचारी से सब समाचार मिलते ही रहते हैं।"

"में अभी आई"—कह कर रजनी दो मिनट के लिये अन्दर गई और जब लौटकर आई तो विभाव के समीप, खड़ी होकर बोली—"देखिये चाहे जो हो, आपको मुझे तो कम से कम एक-आध घण्टा पढ़ाना ही होगा। वरना पास होने के कोई 'चान्सेज' नहीं। इस बहाने कम से कम आपको यहाँ तक आने का समय तो मिलेगा। राज भैया तो आप पर भरोसा कर लेते हैं और एक आप हैं कि बिना कुछ कहे, बाहर चले जाते हैं। क्या मैं आपके बाहर जाने का कारण जान सकती हूँ?"

विभाव इस प्रश्न के उत्तर के लिये तैयार न था अतः कुछ घबड़ाता हुआ-सा बोला......"कारण-वारण तो कुछ नहीं था यों ही ज़रा कुछ काम हो गया था। अफसोस है कि तुम्हें सूचना न दे सका। वैसे तो कोई विशेष बात नहीं।"

रजनी ने तुरन्त कहा—

"आपका 'कुछ काम' ही तो मैं जानना चाहती हूँ। आपका काम था या संचारी व आपकी जीजी का। वे भी तो गये थे। चार-पाँच दिन बाद कल ही संचारी मुझसे मिला है। कोई 'प्राइवेट अफेयर' हो तो न बताइयेगा।"

इतने में नौकर ने चाय की 'ट्रे' दोनों के बीच में रख दी। विभाव को बात टालने का मौका मिल गया। वह

तपाक से बोल उठा……"अरे, इस 'फार्मेलिटी' में क्या रखा है। आपने बड़ा कष्ट किया। थोड़ी देर प्रतीक्षा कर लेतीं सम्भवतः राज भी आ जाता…।"

रजनी ने चाय बनाकर एक प्याला विभाव की ओर बढ़ा दिया, दूसरा अपने होंठों से लगाती हुई बोली—

"आप ठीक कहते हैं। हम लड़कियों को 'फार्मेलिटी' ही आती है, 'रियलिटी' का ठेका तो आप लोगों ने लिया हुआ है। मैं और कुछ नहीं कर सकती हूँ तो कम से कम चाय तो पिला ही सकती हूँ। राज भैया के आने न आने का चाय से क्या सरोकार।"

विभाव चाय पीता हुआ बोला—"तुम मेरे कहने का मतलब नहीं समझीं। बात यह है कि चाय तो मैं घर से पीकर ही चला आ रहा हूँ भला……।"

विभाव का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही रजनी बोल उठी—"प्यासे तो हमीं हैं आप तो सदा चाय पीकर ही आते हैं।"

विभाव उत्तर में कुछ कहने ही वाला था कि राजनारायण 'रजनी-रजनी' करता हुआ कमरे में आ पहुँचा और बाहर से बोला—"अरे प्यासा तो मैं भी हूँ। 'आई एम इन टाईम'।"

विभाव उठकर खड़ा हो गया और राजनारायण के साथ दूसरे सोफे पर बैठता हुआ बोला—"मैं मिस्टर आपकी शिका-यत सुनते-सुनते तंग आ गया हूँ। जब आपको मालूम है कि पापा जी बाहर गये हैं और रजनी घर पर अकेली है तब आप समय पर घर क्यों नहीं लौटते।"

राजनारायण ने विभाव की पीठ पर एक जोर की थपकी दी और बोला—"माई डीयर फ्रेंड', तुम्हें तो मेरे काम का पता है ही। 'आई एम वैरी बिज़ी'। इसी कारण कल तुम से भी न मिल सका। और तुम्हारी बेवकूफी इससे जाहिर हो रही है कि तुम रजनी के सामने मुझसे देर से आने का कारण पूछ रहे हो।"

विभाव के उत्तर देने से पूर्व ही रजनी बोल पड़ी—"अरे भैया, तुम्हारे कामों का मुझे भी पता है। तुम इसकी चिन्ता न करो। कुछ नहीं तो इतना तो बता दो कि आज कौन-सी 'पिक्चर' से लौट रहे हो।"

राज ने तुरन्त उत्तर दिया—"यू आर रौंग माई सिस्टर', मैं सीधा···सीधा याने 'डाइरेक्ट' घर चला आ रहा हूँ। पिक्चर या तो मैं विभाव के साथ देखता हूँ या अपनी डियर सिस्टर रजनी के साथ······।"

रजनी बीच में ही बोल पड़ी—"या फिर···फिर···बोलो, बता दूँ नाम। नहीं तो सच-सच बता दो।"

राजनारायण पोल खुलने के भय से रजनी के सिर पर हल्की सी चपत लगाते हुए बोला—"बस बस रहने दे भाई, जरा रेडियो तो शुरू कर, कोई गाना-वाना आ रहा है या नहीं।"

इतना कह कर राजनारायण विभाव से बोला—"अब कहिये मिस्टर आपकी सवारी कहाँ से आ रही है और कहाँ जा रही है। तुम्हें मालूम होना चाहिये कि रज़नी को वॉयलन

सिखाने के लिये मैंने मिस मँजू को 'एप्वाइण्ट' कर दिया है। तुम्हारा क्या कहना है।"

विभाव बोला—"आप तो हर एक काम सोच-समझकर ही करते हैं। आपको मिली भी तो मँजू। उसे क्या मालूम कि वॉयलन होता क्या है। सिखाना तो दूर रहा।"

राज भला कब चुप रहने वाला था, बोला—"खैर सो तो मुझे भी नहीं मालूम पर 'मँजू इज़ मँजू आफटर ऑल।' कल चार बजे घर आओ तो 'इण्ट्रोडक्शन' करा दूँगा।"

"आप ही 'इण्ट्रोडक्शन' कीजिये" कहता हुआ विभाव उठा और चलने के लिये मुड़ा ही था कि रजनी ने कल पिक्चर जाने का 'प्रोमिस' करने को विभाव से कहा। राज ने भी सिफारिश कर दी। विभाव कुछ कहने ही जा रहा था कि राज ने अपनी पेंट की जेब से एक लिफाफा निकाला और रजनी को पकड़ाता हुआ बोला—

"बातों-बातों में मैं पापा का पत्र देना भूल गया। सुबह ही पोस्टमैन मुझे दे गया था। पापा को आने में अभी समय लगेगा। अच्छा ही है। मैं जरा विभाव को नीचे तक पहुँचा कर अभी आया।"

इतना कहकर राज ने विभाव के गले में हाथ डाला और दोनों नीचे सड़क पर आकर खड़े हो गये। विभाव ने घड़ी देखी तो साढ़े सात बज चुके थे। शहर बिजली की रोशनी से जगमगा रहा था। इतने में अनुभाव शहर से साईकिल पर लौटता दिखाइ दिया। दोनों साइकिल पर बैठकर घर

की ग्रोर चल दिये। राज ने सिगरेट का टुकड़ा सड़क पर फेंका ग्रौर सीधा पड़ोस की ग्रँगरेजी शराब की दुकान पर जाकर जम गया।

रजनी रह-रह कर ग्राज शाम की सब बातें याद करने लगी।

: ८ :

रेणु ने कल रात आत्म-हत्या कर ली। क्यों कर ली ? क्या कारण था ? वह बेचारी तो बड़ी सीधी-साधी लड़की थी। इस वर्ष एम० ए० फाइनल की परीक्षा दे देती। बस फिर क्या था ! तो फिर उसने आत्म-हत्या की तो क्यों की ?

इस प्रकार के अनेक प्रश्नों को लेकर कॉलेज के छात्र-छात्राओं में परस्पर खूब विवाद हो रहा था। जितने मुँह उतनी बातें थीं। सामने वाले लॉन में इमली के पेड़ के नीचे बैठे कई विद्यार्थी इस सम्बन्ध में बड़े जोश से वाद-विवाद कर रहे थे। विभाव तथा उसके तीन-चार साथी भी अपनी-अपनी बात रखने का पूर्ण प्रयत्न कर रहे थे। ऐसा लग रहा था कि मानो रेणु की आत्म-हत्या का प्रधान कारण जानने का महत्वपूर्ण कार्य पुलिस-विभाग द्वारा इन्हीं लोगों को सौंपा गया हो।

विद्यासागर एम० ए० (अँग्रेजी) के छात्र थे और कॉलेज में 'फिलॉसफर' के नाम से प्रसिद्ध थे। थोड़ी देर तक बैठे-बैठे तो वे सब की बातें सुनते रहे, फिर बड़े जोश से बोले—

"आपने भी खूब कहा—मिस्टर सुरेश। कोई भी जवान लड़की-लड़का यदि आत्म-हत्या कर ले तो निःसन्देह उसकी आत्म-हत्या का कारण कोई न कोई "लव अफेयर' ही होना चाहिये। क्यों आप यही कहना चाहते हैं न। मैं कहता हूँ कि

मैं रेणु के पड़ौस में गत चार वर्षों से रह रहा हूँ। बाल्यकाल से बेचारी अपने चाचा-चाची के हाथों की कठपुतली बनी हुई थी। भला अत्याचारों को सहन करने की भी एक सीमा होती है। आये दिन उस पर नये-नये आरोप लगाये जाते थे। न तो घर से समय पर फीस मिलती थी और न पुस्तकों की ही कोई व्यवस्था की जाती थी। मैट्रिक से ट्यूशन कर-कर के बड़े परिश्रम से वह एम० ए० में आ सकी थी। इस साल प्रीवियस में कम 'पर्सेण्टेज' आने से वह घर पर सबकी आलोचना का विषय बन गई। वह प्राय: चुप रहती थी, तो इसमें भी कोई न कोई कारण ढूँढा जाता था। वह कविता करती थी तो कहा जाता था कि अर्थशास्त्र के विद्यार्थी का कविता से क्या सम्बन्ध। घर के झगड़ों से तथा असहनीय अत्याचारों से तंग आकर अब बेचारी ने कल अपने चाचा-चाची की खुशी के लिये अपना जीवन त्याग दिया तो उसके प्रति सहानुभूति के स्थान पर चरित्र-सम्बन्धी नाना प्रकार के दोष लगाये जा रहे हैं। खूब साब, आपके विचारों की मैं खूब दाद देता हूँ।"

सुरेश बड़ी मुश्किल से अब तक अपने को रोके हुए था। विद्यासागर के चुप होते ही बोला—"फिलॉसफर साहब, जरा यह तो बताइयेगा कि रेणु का सम्पूर्ण इतिहास आपको कैसे पता है। आपके पड़ोस में तो पचासों लोग रहते हैं। आपने क्या सबकी खीर खाई है ?"

विद्यासागर ने उसी स्वर में उत्तर दिया—"दु:खी व्यक्ति के प्रति सहानुभूति होनी ही चाहिये। मेरे पड़ोस-भर में सम्भवत: रेणु के बराबर किसी का जीवन इतना कष्टपूर्ण नहीं।

और यदि इतिहास जानने की ही बात है तो आप लोग ही अब क्यों इतना वाद-विवाद कर रहे हैं। अब तो रेणु का संसार में नाम निशान तक नहीं।"

विभाव अभी तक सुन रहा था, सुरेश को चुप रहने का संकेत कर स्वयं बोल उठा—"आपने गलत फ़रमाया है, मिस्टर फिलॉसफर। रेणू का निशान भले ही न हो नाम तो कम से कम अमर हो गया है। प्रत्येक क्रिया अथवा कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। रेणु के प्रति आपकी इतनी 'सिम्पेथी' क्यों।"

विद्यासागर ने तर्क में आज तक किसी से भी पराजय स्वीकार नहीं की थी। समाज तथा राष्ट्र-सम्बन्धी विषयों में तो उसके पास तर्क का अभाव था ही नहीं। उसने तुरन्त उत्तर दिया—"आप लोग कितने 'गिल्टी' है। मेरी सहानुभूति का भी कोई न कोई कारण होना चाहिये। यही है न आपका मतलब। खैर, मुझे इस कुतर्क में नहीं पड़ना। मैं तो मिस्टर सुरेश से केवल यह पूछना चाहता हूँ कि रेणु के चरित्र पर वे खुल्लम-खुल्ला जो आरोप लगा रहे हैं उसके लिये उनके पास क्या प्रमाण है।"

सुरेश तो पहले ही तैयार था। तत्काल बोल उठा—"अजी साहब, आप तो न जाने किस दुनिया में रहते हैं। केवल फिलॉसफर बनने से काम नहीं चलता। प्रमाण तो उस बात का चाहिये जिस में कुछ सन्देह हो। मेरा पूर्ण विश्वास है कि कॉलिज में सब को पता है कि गत एक-डेढ़ वर्ष से राजनारायण तथा रेणु की 'कोर्ट शिप' चल रही है। स्वयं राज इस बात

को स्वीकार कर चुका है। आपको कैसे समझाऊँ कि ऐसी स्थिति आ गई थी कि विवाह करना अनिवार्य हो गया था। हो सकता है राज ने मना कर दिया हो।"

सुरेश के चुप होते ही विद्यासागर बोल उठे—"होने को क्या नहीं हो सकता। फिर तुम्हारे कहने के अनुसार तो राज ही उसकी आत्म-हत्या का कारण हुआ। लेकिन आप सारा दोष रेणु के सिर पर मढ़ रहे हैं।

"दोष सिर मढ़ने की क्या बात है" सुरेश आगे बोला, "लड़के तो सब ऐसा करते ही हैं, लड़कियों की 'चैस्टिटी' सबसे जरूरी चीज है।"

विद्यासागर अब कुछ क्रोध के स्वर में बोला—"आप भी खूब कहते हैं। चूँकि सब लड़के बुराई करते हैं, इसलिये बुराई बुराई नहीं। आपके कहने से तो ऐसा लग रहा है कि सारे 'करपशन' की जड़ लड़कियाँ ही हैं। यदि मैं यह मान भी लूँ कि रेणु किसी से 'लव' करती थी, तो इसमें क्या बुराई है। यौवन तथा उन्माद के शिकार लड़के-लड़की दोनों हो सकते हैं। यदि एक के लिये यह पाप है तो दूसरे के लिये पुण्य क्यों ?"

सुरेश उठकर खड़ा हो गया और बोला—"खैर साब, पुण्य-पाप के चक्कर में तो हमें पड़ना नहीं। हम तो केवल इतना जानते हैं कि रेणु और राज में 'लव' था। मेरा तो ख्याल है कि कॉलेज में लड़कों के साथ पढ़ने वाली कोई भी लड़की इस 'यंगमैन डिज़ीज' से बची नहीं।"

सुरेश की बात पूरी भी न होने पाई थी कि राजनारायण

अपनी कार से उतर कर आता दिखाई दिया। राज के आते ही सुरेश व विभाव बोले—"लीजिये मिस्टर विद्यासागर अब आपकी बात का फैसला हो जाता है। क्यों बे राज रेणु तुझ से 'लव' करती थी या नहीं। अबे, तूने शादी करने से साफ मना क्यों कर दिया। एक साल और 'ऐण्टरटेन' करता रहता फिर देखी जाती।"

राज ने जल्दी-जल्दी सिगरेट के दो कश खींचे। फिर बोला—"यस, मिस्टर सुरेश, बजाय यह पूछने के कि रेणु मुझसे लव करती थी या नहीं तुम्हें यह पूछना चाहिये था कि कौन ऐसी लड़की है जो मुझसे लव नहीं करती। और हाँ, मिस्टर फिलाँसफर 'यू शुड नॉट वॅरी'। यदि तुम्हें भी 'लाइफ एन्जॉय' करनी है तो पहले 'लव' करना सीखो। आजकल विभाव तो मेरे 'अण्डर' में ट्रेनिंग ले रहा है। खैर, जब आवश्यकता हो तो 'यू मे रिमेम्बर मी।' अभी मैं जल्दी में हूँ। रेणु ने यदि 'सुसाईड' कर लिया तो मैं क्या करूँ। 'इट इज़ हर वीकनेस'।"

उसका इतना कहना था कि सब खिल-खिला कर हँस पड़े। राजनारायण ने विभाव को साथ लिया और सीधा अपने घर पहुँचा।

घर पहुँचते ही विभाव को रजनी ने पिक्चर जाने की बात याद दिलाई तो राज बीच में ही बोल उठा—

"देखो भाई, मुझे तो एक जगह जरूरी काम है। इतना कहकर उसने विभाव की ओर देखा और धीरे से कहा 'यू अण्डर इस्टैण्ड माई पॉइण्ट।' तो तुम और रजनी कार से या टैक्सी से पिक्चर चले जाओ। मैं बहुत जल्दी में हूँ।"

पिक्चर से लौटने के बाद विभाव रजनी को छोड़ने जब घर आया तब तक राज अपने ज़रूरी काम से नहीं लौटा था। रजनी ने विभाव को कॉफी पिलाई। रात काफी अधिक हो गई थी, अतः विभाव शीघ्र ही घर की ओर चल पड़ा।

आज की सारी रात रजनी ने सपने देखते-देखते ही बिताई!

: ९ :

आज की सारी रात विभाव अच्छी तरह से न सो सका। अभी तक तो वह यह सोचकर निश्चिंत था कि विवाह की बात चल रही है, लड़की देख लेने का अर्थ यह नहीं कि बात पक्की ही हो जाय। पर पिछली शाम को जब सबके सामने लक्षणा ने विभाव का शोभा के सम्बन्ध में निश्चय जानना चाहा तो वह तत्काल लड़की में कोई ऐसा खोट न बता सका जिससे बात टल जाती। इधर-उधर की अनेक बातें बनाकर रुपये के प्रश्न पर उसने बात अटका तो अवश्य दी थी किन्तु वह स्वयं ही अपने तर्क से सन्तुष्ट न था। जब लक्षणा तथा माँ ने यह कह दिया कि उसे रुपये की चिन्ता नहीं करनी है केवल लड़की ही पसन्द करनी है तो वह बड़े संकट में पड़ गया।

गर्मी के दिन थे। रात के लगभग ग्यारह-बारह बजे तक विभाव शहर से लौटा। थोड़ा-सा खा-पीकर सीधा बिस्तर पर गया। किन्तु नींद का कोई पता न था।

विभाव पड़ा-पड़ा सोचने लगा—

"यदि मैं केवल रुपये के कारण बात टालने का प्रयत्न करूँ तो यह एक तो उचित भी नहीं, दूसरे घर वाले सभी अब विवाह करने के लिये कमर कसे बैठे हैं। माना यह बात टल भी जाय। तो कल को फिर कोई अन्य सम्बन्ध की बात आ खड़ी होगी। इन लोगों का क्या ठीक-ठिकाना। न हो कहीं

विज्ञापन दे बैठें। यदि मैं किसी-न-किसी प्रकार प्रत्येक नवीन प्रस्ताव को उड़ाता चलूँ तो भी बात बनने वाली नहीं है। सब से बड़ी समस्या तो यह है कि उर्मिला के साथ विवाह करने की बात कैसे और किसके द्वारा घर वालों तक पहुँचाई जाय।"

"मैं यह भी जानता हूँ कि यह बात वैसे तो घर में किसी को भी पसन्द नहीं आने की लेकिन माँ विशेष रूप से इसका विरोध करेंगी। पिताजी तो सम्भवत: मान भी जायें किन्तु यदि उर्मिला घर में आ गई तो माँ निश्चित ही अन्न-जल छोड़ देंगी।"

विभाव को याद आया कि कुछ दिनों पहले जब हँसी-मजाक के प्रसंग में माँ से संचारी ने कह दिया था कि विवाह लड़की-लड़के का होता है। यह तो दो दिलों के मिलने की बात है। जात-पाँत इसमें बाधक नहीं होनी चाहिये। तो उसकी बात समाप्त होने से पूर्व ही माँ क्रोध-से बोल उठी थीं।

"क्यों संचारी तुम में भी पर लगने लगे हैं। अभी तो बी०ए० पास भी नहीं हुए हो। कॉलेज में क्या यही सीखते हो। दुनियाँ में ब्राह्मण, बनिया सब बराबर हैं—यह बात किसी दूसरे को सिखाना। इस घर में तो कम-से-कम जब तक मैं जिन्दा हूँ ऐसा कभी नहीं हो सकता। यदि तुम्हें भविष्य में ऐसा ही करना है तो बता दो। हम समझ लेंगे कि हमारे दो ही लड़के हैं।"

विभाव सोचने लगा कि जब हँसी-हँसी में बात इतनी बढ़ गई थी तो यदि मैंने वास्तव में ऐसा किया तो न जाने क्या होगा। माँ कहीं जहर न खा बैठें। फिर इस हिन्दू समाज से

भी भगवान बचाये । कल ही सब कहने लगेंगे—"तुमने सुना या नहीं, भाई, पंडित श्रीनाथ शर्मा के लड़के ने बनिया की लड़की से विवाह कर लिया । अब क्या बाकी बचा है । ब्राह्मण बनिये सब एक हो गए ।"

किन्तु इस विचार के आते ही उर्मिला की सम्पूर्ण आकृति विभाव की आँखों में नाच गई । सबसे पहले जब उसने उर्मिला को देखा था तब ही से उसका मन उसके स्वरूप पर केन्द्रित हो गया था । उर्मिला के परिवार से विभाव के घर वालों का वैसे तो बहुत अच्छा सम्बन्ध था लेकिन विवाह का प्रसंग आते ही घोर विरोध होगा, यह बात भी विभाव खूब जानता था ।

"तो क्या उर्मिला के कारण मैं माँ-बाप, भाई-बहन सबको छोड़ दूँ । नहीं, ऐसा सम्भव नहीं । उचित नहीं । लेकिन क्या शोभा अथवा अन्य किसी लड़की से विवाह कर मैं उर्मिला को भुला सकूँगा ? क्या उर्मिला से बढ़कर कोई अन्य लड़की अधिक सुन्दर हो सकती है । यह ठीक है कि उर्मिला का तथा मेरा बहुत घनिष्ठ परिचय नहीं, और न ही आज तक उसने अपने मुँह से ऐसी कोई बात ही कही है, लेकिन उसके व्यवहार से तो प्रत्यक्ष है । यदि उर्मिला की माँ के हृदय में ऐसी कोई बात न होती तो वे मेरे में इतना 'इण्ट्रेस्ट' ही क्यों 'शो' करतीं । उर्मिला संचारी, अनुभाव आदि सबसे सबके सामने बोलती है, केवल मुझसे ही क्यों कतराती है ।

लेकिन इन सब बातों के होते हुए भी कुछ नहीं हो सकता । तभी विभाव के मन में अपने मित्र सुरेश की बात याद आई कि 'लव' जीवन में केवल एक बार ही होता है । राज के

कारण रेणु ने आत्म-हत्या कर ली, उसका किसी ने क्या बिगाड़ लिया। उमाकान्त ने शादी-शुदा होकर 'क्रिश्चन' लड़की से शादी कर ली उसे किसने रोक लिया। फिर उर्मिला के न अन्य कोई भाई-बहन है न पिता। केवल माँ ही है। मामा अथवा चाचा-चाची से क्या मतलब। सारी सम्पत्ति भी अन्त में मुझे ही मिलेगी।

लेकिन उर्मिला से विवाह करते ही मुझे अपने परिवार से प्रथक् होना पड़ेगा। लोग यही तो कहेंगे कि विभाव न बुढ़ापे में माँ-बाप तथा छोटे भाई-बहनों को असहाय छोड़ दिया। तो क्या सबका ठेका मैंने ही ले लिया है। शादी-विवाह के बाद भी कितने ही लड़के माँ-बाप से अलग हो जाते हैं। इसका अर्थ यह तो नहीं कि विवाह किया ही न जाय।"

"माना कि शोभा भी सुन्दर लड़की है। पर उर्मिला की तुलना में तो वह टिक ही नहीं सकती। इसके अलावा विवाह मुझे करना है या माता-पिता, भाई-बहन को। मुझे जीवन-निर्वाह करना है या अन्य सगे-सम्बन्धियों को। 'इण्टर कास्ट मैरिज' करने से मेरा पढ़ना तो बन्द नहीं हो जायेगा। मुझसे नौकरी अथवा नागरिकता का अधिकार तो नहीं छिन जायेगा। फिर इसमें बुराई ही क्या है। शोभा ही क्या यदि अन्य कोई लड़की उर्मिला से अधिक सुन्दर हो तो मैं उस पर भी विचार करूँ।"

"तो बस ठीक है। एक दो दिन में अवसर देखकर राज से इस मामले में सलाह लूँगा। वह उस्ताद आदमी है। आगे बढ़ा हुआ लड़का है। मेरा 'फास्ट फ्रेंड' है। अवश्य मेरी बात

की दाद देगा । उर्मिला की माँ तो जानती है कि अब उसके सामने अन्य कोई पुत्र, पुत्री के विवाह का प्रश्न नहीं । उसकी लड़की ऊँचे ही वर्ण में जा रही है । फिर वे ईसाई या मुसलमान होते तो बात भी थी । हिन्दू-हिन्दू सब एक हैं ।"

इतने में विभाव को पाँच घण्टे सुनाई दिये और उसकी विचार-धारा भंग हो गई । किसी तरह करवट बदल-बदल कर सोने का प्रयत्न वह कर ही रहा था कि अभिधा ने कमरे के बाहर से ही पुकारा..."भैया सुबह हो गई है । चाय तैयार है । कल से माँ की तबियत ठीक नहीं । चाय पीकर आपको डाक्टर के यहाँ जाना होगा । जल्दी से आ जाओ...।"

विभाव उठा और भुनभुनाता हुआ मुँह-हाथ धोने चला गया ।

: १० :

कभी-कभी ऐसा होता है कि व्यक्ति परिवार, समाज अथवा राष्ट्र के सम्मुख स्वयं को एक अनुकरणीय उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करने के लिये पागल-सा हो उठता है। वह चाहता है कि चाहे उसे कितना भी त्याग क्यों न करना पड़े, अपने को अस्वाभाविक रूप से नियन्त्रित भी क्यों न करना पड़े लेकिन किसी तरह लोग उसका नाम तो लें। उसका जीवन एक स्वर्ण-उदाहरण बने। हम लेकिन यह नहीं सोचते कि वास्तव में जिन महान् पुरुषों के जीवन के अनुकरणीय उदाहरण आज विश्व के सामने हैं, उन्होंने सम्भवतः कभी भी आदर्श का एक निश्चित पैमाना अपने सामने न रखा। वस्तुतः उनके महान् जीवन ने ही आदर्श तथा महानता को स्वरूप प्रदान किया। यदि केवल नाम कमाने तथा आदर्श प्राप्ति के ही उद्देश्य से वे कार्य करते तो निसन्देह स्वाभाविकता तथा मौलिकता नाम की कोई वस्तु ही नहीं रह जाती।

जहाँ तक स्त्री-पुरुष की स्वाभाविक इच्छाओं का प्रश्न है, वहाँ यह बात माननी होगी कि शारीरिक वासनाओं का तीव्र प्रभाव आयु तथा वातावरण के अनुसार सब पर पड़ता है। प्रभु की इस विचित्र सृष्टि में असंख्य प्रलोभन हैं, मनुष्य इन प्रलोभनों से घिरा हुआ है। बाह्य जगत् में नाना प्रकार के आकर्षण हैं तो अन्तरिक जगत् में, प्रलोभन के दलदल में मनुष्य

कहीं समा न जाय, इस सुरक्षा के लिये परमेश्वर ने मनुष्य को विवेक, तर्क, इच्छा-शक्ति तथा चुनाव करने की अनुपम भेंट प्रदान की है। इन साधनों के सही प्रयोग में ही मनुष्य की परीक्षा है, इसी में उसके व्यक्तित्व की महानता निहित है, यही सहज आदर्श का माप-दंड है।

रजनी को संगीत के प्रति सहज रूचि थी इस कारण केवल एक माह में मँजू के निर्देशन में वॉयलन बजाने की कला में उसने पर्याप्त सफलता प्राप्त की। मँजू को भी इससे बहुत प्रसन्नता थी। रजनी के कला-प्रेम के अतिरिक्त उसके स्नेह-भाव का प्रभाव भी मँजू पर पूर्ण रूप से पड़ा, फलतः वह उसके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना न रह सकी।

मँजू की आयु लगभग २६-२७ वर्ष की होगी। गत् सात वर्षों से वह एक इण्टरमीडियेट कॉलेज में संगीत के अध्यापक का कार्य कर रही थी। वैसे तो मँजू के पिता किसी रेलवे-ऑफिस में हेड क्लर्क थे लेकिन उनकी आय इतनी अधिक न थी कि अन्य तीन लड़कियों तथा एक लड़के की शिक्षा का उचित प्रबन्ध हो सके ! मँजू अपने भाई-बहनों को उच्च शिक्षा दिला कर बड़ी बहन के अनुकरणीय आदर्श की स्थापना करना चाहती थी। नौकरी तथा प्राईवेट ट्यूशन करने का एक कारण यह भी था !

रजनी द्वारा एक मास में लगभग एक-दो बार मँजू रजनी के पापा ब्रजनाथ से भी मिल चुकी थीं। वैसे उनका परिचय घनिष्ठ न था ! हाँ, राजनारायण से तो प्रायः नित्य ही भेंट हो जाती थी !

आज रजनी को अपनी सहेली के जन्म-दिवस के शुभ अवसर पर 'टी पार्टी' में जाना था, अत: प्रात: काल ही उसने राज से कह दिया था कि वह मँजू को सूचित कर दे कि वे शाम को न आयें। लेकिन सम्भवत: राजनारायण जानबूझ कर मिस को फोन करना भूल गया।

प्रतिदिन की भाँति जब मँजू ने शाम को चार बजे 'कॉल वैल' बजाई तो नौकर न आकर दरवाजा खोल दिया। मँजू के ड्राईंग रूम में पहुँचते ही राज ने भी पीछे से आकर कहा—

"गुड इवनिंग मँजू" उत्तर में मँजू ने 'गुड इवनिंग' कह दिया और सोफे पर बैठती हुई बोली— "क्या रजनी अभी तक कॉलेज से नहीं लौटी, मिस्टर राज......?"

राज इस प्रश्न के लिये प्रस्तुत न था अत: कुछ रुकता हुआ-सा बोला—"यस मिस, अभी रजनी आई नहीं है, आती ही होगी या किसी सहेली-वहेली के यहाँ 'टी' पर चली गई होगी। आप तो जानती हैं कि उसकी बहुत-सी सहेलियाँ हैं, पाँच-सात को तो मैं ही जानता हूँ। खैर, कोई बात नहीं, आप बैठियेगा, मैं......मैं एक मिनिट में आया, कहिये तो 'फैन' 'ऑन' कर दूँ।

"जी नहीं, मैं ही कर लूँगी, आप जाईये," कह कर मँजू उठी और 'फैन ऑन' कर दिया। एक मिनिट तक आँखें बन्द-सी किये वे सोफे पर आराम से बैठी रही कि राज ने हाथ में वॉयलन लिये कमरे में प्रवेश करते हुए कहा—

" 'वैल' मिस, आज जब तक रजनी नहीं आती आप-मुझे ही वॉयलेन पर कुछ बताईये, मैं भी 'म्यूजिक' में काफी

इण्ट्रेस्टेड' हूँ, एक दो 'लाइट साँग' निकाल लेता हूँ……।"

मँजू बोली—"आप भी क्या बातें करते हैं। म्यूजिक में आप 'इण्ट्रेस्टेड़' भले ही हों लेकिन आपको बातचीत तक के लिये तो समय मिलता नहीं, म्यूजिक सीखने का तो सवाल ही नहीं उठता।"

"आपका कहना गलत है, मिस मँजू" राज ने उत्तर दिया, "मुझे बताइयेगा कि मैं आपसे किस दिन नहीं मिला। आपसे तो कई बार एक-एक घण्टे तक बात-चीत हुई है। जब घर पर मिलने का समय मुझे नहीं मिला है तब भी रास्ते में या आपको घर तक छोड़ने जाने में तो बात-चीत होती ही रही है। फिर भी आप मुझ पर ब्लेम लगा रही हैं।"

इतने में नौकर ने एक ट्रे में 'मिल्करोज' के दो गिलास दोनों के बीच में लाकर रख दिये

मँजू बोल उठी—"आपने यह कष्ट क्यों किया। इसकी क्या जरूरत थी।"

"अरे छोड़िये भी इसमें क्या रखा है" कह कर राज ने एक गिलास मँजू को पकड़ा दिया। 'थेंकस' कह कर मँजू ने गिलास ले लिया।

एक घूंट शर्बत पीकर राज बोला—"तो मिस मँजू आज आपसे बात-चीत ही होगी ताकि आपकी शिकायत दूर हो। वॉयलेन तो मैं क्या सीख पाऊँगा, कभी और देखा जायेगा। अभी तो दुनियाँ में बहुत-से काम करने को बाकी हैं।"

राज की बात समाप्त होने से पूर्व ही मँजू ने शीघ्र प्रश्न किया—"अरे हाँ मिस्टर राज। आपके कॉलेज की रेणु ने

'सुसाईड' क्यों कर लिया। क्या बात थी। पेपरों से भी सच बात का पता नहीं चला। आपको तो मालूम ही होगा।"

मँजू लम्बे सोफे पर बैठी हुई थी। राज फौरन उठा और यह कहता हुआ कि—"पंखा 'मूव' नहीं कर रहा, मुझ तक हवा नहीं आरही" वह भी लम्बे वाले सोफे पर जा बैठा और बोला—

"मिस, आप जानती हैं कि अपनी जिन्दगी सबको प्यारी होती है। बिना किसी कारण के कोई भी, विशेष कर जवान लड़की-लड़का, कभी 'सुसाईड' नहीं कर सकता।"

मँजू ने कहा—"अरे वही कारण तो मैं जानना चाहती हूँ।"

राजनारायण कुछ गम्भीर होकर बोला—"कारण क्या था—यही कि वह कॉलेज के किसी लड़के से 'लव' करती थी और दोनों विवाह के लिये तैयार थे किन्तु जब घर वाले न माने तो बेचारी क्या करती। आप जानती हैं कि 'वूमैन इज़ आलवेज वीक।"

मँजू ने उत्तर दिया—"यह तो ठीक है लेकिन उस लड़के ही ने क्यों न साहस किया। अब क्या वह जीवन भर शादी नहीं करेगा।"

"लड़का भी क्या करता," राज बोला, "वह भी डरपोक था। अब यदि शादी नहीं करेगा तो उसके जैसा वेवकूफ कौन हो सकता है। दुनियाँ यों ही चलती है मिस।"

मँजू तत्काल बोल उठी—"लेकिन राज 'मैरिज' तो 'परसनल' चीज है। ऐसे अवसर कई लड़के तथा लड़कियों के जीवन

में आते हैं कि अन्य बन्धनों के कारण जिसे वे परस्पर चाहते हैं उससे शादी नहीं कर पाते। चाहे उन्हें सारे जीवन कुँवारा ही क्यों न रहना पड़े। तो क्या ऐसे सब लड़के-लड़कियों को 'सुसाईड' कर लेना चाहिये ?''

''क्यों नहीं, मिस,'' राज ने उत्तर दिया, ''ट्रू लव के सामने 'लाईफ' क्या चीज है। जो लोग ऐसा होने पर भी विवाह नहीं करते उन्हें भविष्य में और किसी से 'लव' तथा विवाह की आशा होती है। वे इसके लिये गुप्त रूप से प्रयत्न भी करते रहते हैं, 'एण्ड इटिज़ क्वाईट नेचुरल''। यदि इतना करने पर भी उन्हें सफलता नहीं मिलती तो उन्हें समय निकल जाने पर पछताना पड़ता है। यह बात वैसे तो लड़के-लड़की दोनों पर सामान रूप से लागू होती है। पर जिन लड़कियों की 'ऐज़' निकल जाती है और जिन्हें विवाह की आशा नहीं रह जाती वे प्रायः इसी कारण चिड़-चिड़ी तथा गर्म मिजाज वाली हो जाती हैं। उन्हें अपनी गलती पर पछतावा और निराशा होने लगती है। इसी द्वन्द्व में उनके जीवन की 'ट्रेजेडी' तक हो जाती है। इसलिये यदि 'ट्रू लव' है तो उसकी रक्षा के लिए 'लाइफ' की भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए, यदि ऐसा नहीं तो जब तक अवसर है, विवाह अवश्य कर लेना चाहिये।''

राज की बात सुनते-सुनते मँजू बहुत उदास हो गई और एक दीर्घ निश्वास लेकर बड़े ही निराश-भरे स्वर में बोली—

''आप का कहना भी ठीक हो सकता है, लेकिन आपको मालूम होना चाहिए कि फूल के पौधे पर की प्रत्येक कली खिलती ही हो यह आवश्यक नहीं। कई हवा के झौंके से

जमीन पर आ गिरती हैं और कई डाली पर ही खिलने से पूर्व मसल दी जाती हैं। वे फिर ऐसे ही सूख जाती हैं। झर जाती हैं।"

मँजू इसके आगे सम्भवतः कुछ और कहती पर कह न सकी। राज ने मँजू की आँखों को जब कुछ तर पाया तो वह अत्यन्त ही सहानुभूति भरे स्वर में बोला—

"मिस आखिरकार बात क्या है। एक-दो बार पहले भी जब कभी ऐसी कोई बात आती है तो आप 'अपसैट' सी हो जाती हैं। रजनी से भी इस प्रसंग में मुझे कुछ ऐसी ही बातें सुनने को मिली हैं।"

इतना कहते-कहते राज ने मँजू के कन्धे पर हल्के-से हाथ रख दिया और बोला—

"मँजू आज तुम्हें अपना दर्द मुझे बताना ही होगा। बोलो बात क्या है?"

मँजू की आँख से आँसू टपक पड़े और वह बोली—

"आप सब जानते हैं राज बाबू। रजनी ने आपको सब बता दिया होगा। यदि आप नहीं जानते तो अब जान जायेंगे। दर्द तो सब कोई पूछते हैं किन्तु दवा..."

मँजू का वाक्य पूरा होने से पूर्व ही विभाव कमरे में आ पहुँचा। राज तुरन्त खड़ा हो गया। मँजू भी विभाव की नमस्ते का उत्तर दे सम्भल कर बैठ गई।

विभाव ने राज से कहा—

"राज में आया तो एक जरूरी काम से था। पर अब कभी और मिलूँगा। रजनी रास्ते में मिली थी। उसने कहलाया है कि पार्टी में देर हो जायेगी अतः ७ बजे तक तुम गाड़ी लेकर उसे लेने पहुँच जाना।"

इतना कहकर विभाव तुरन्त चला गया। राज ने पहले मिस मँजू को कार से उनके घर छोड़ा। फिर रजनी को लेने चला गया।

: ११ :

संयोग का तात्कालिका परिणाम चाहे अनुकूल हो या प्रतिकूल, मानव जीवन में इसका तात्विक महत्व है। कल शाम को विभाव घर से यह निश्चय करके निकला था कि वह राज से उर्मिला के सम्बन्ध में सलाह लेगा और यदि आवश्यक हुआ तो इस कार्य में वह उससे सहायता की प्रार्थना करेगा। लेकिन मार्ग में ही उर्मिला की माँ से उसकी भेंट हो गई।

उर्मिला की माँ सर्वदा की आयु लगभग ३५-३६ वर्ष की अवश्य होगी, किन्तु उनको देखकर कोई भी व्यक्ति उन्हें २९-३० का ही समझता था। वे बाजार से हाथ में दो-तीन थैले लिये हुए आ रही थी कि पीछे से आकर विभाव थैले अपने हाथ में लेता हुआ बोला—

"आप कहाँ से आ रही हैं? लाइये थैले मुझे दे दीजिये मैं पहुँचा दूँगा।"

पहले तो सर्वदा ने आनाकानी की लेकिन जब विभाव नहीं माना तो उन्होंने एक थैला उसे पकड़ा दिया। रास्ते में इधर-उधर की बात-चीत करते हुए वे घर पहुँचे।

सर्वदा ने सामान ज्यों का त्यों रख दिया और आँगन में एक पड़ी चारपाई पर स्वयं बैठ गई। विभाव के लिये एक कुर्सी रख दी। पास पड़े हुए पंखे को सर्वदा ने उठा लिया और झलते हुए बोली—

"चलो, इस बहाने आज आपका इस घर में आना तो हुआ। वरना, हमें कौन पूछता है।"

विभाव बीच में ही बोल उठा—"आपका खयाल गलत है। भला बताइये कि आपने मुझे कभी बुलाया हो और मैं न आया हूँ। रही पिछले रविवार को बात तो उस दिन मुझे मित्रों के चक्कर में पड़कर सिनेमा जाना ही पड़ा।"

विभाव की बात के उत्तर में सर्वदा ने हल्की-सी हँसी हँस दी और फिर कुछ उत्सुकता के भाव से पूछा—

"मैंने सुना है कि आपका सम्बन्ध आगरे में तय हो गया है। आप लोग लड़की भी देख चुके हैं। सुनकर बड़ी खुशी हुई।"

"लड़की तो अवश्य देख ली है," विभाव बोला, "किन्तु सम्बन्ध अभी तय नहीं हुआ। मुझे पहले एम० एम-सी० पास करना है। शादी-विवाह तो बाद की चीज है।"

सर्वदा तुरन्त बोल उठी—"विवाह के बाद भी पढ़ाई हो सकती है। यदि आपको यह पसन्द नहीं तो शादी भले ही न कीजिये, बात तो निश्चित हो जानी चाहिये। मैंने तो यह भी सुना है कि घर काफी सम्पन्न है। लड़की भी पढ़ी-लिखी है।"

"घर के सम्पन्न होने या रिश्तेदारों के ऊँचे-ऊँचे पदों पर होने से क्या होता है," विभाव कहता गया, "विवाह तो लड़की से होता है। जब लड़की ही मन पसन्द न हो तो सब बातें बेकार हैं। मैं तो लड़की को ही 'फस्ट प्रिफरेन्स' देता हूँ।"

सर्वदा ने कुछ गम्भीर स्वर में उत्तर दिया—"आज के जमाने में केवल लड़की से विवाह करने वाले मैंने बहुत ही कम लड़के तथा उनके माता-पिता देखे हैं। लड़की चाहे कितनी ही सुन्दर तथा गुणवती क्यों न हो उसके साथ दान-दहेज, सगे सम्बन्धी, भाई-बहन आदि सभी बातों को इतना अधिक महत्व दिया जाता है कि अच्छी-से-अच्छी लड़की ठुकरा दी जाती हैं। यदि लड़का आगे बढ़ा होने से मान भी जाय तब भी माता-पिता तथा सगे-सम्बन्धी कभी तैयार नहीं होते। अन्त में लड़के को भी झुकना ही पड़ता है।"

विभाव ने कहा—"मैं ऐसे संकुचित विचार वाले व्यक्तियों का घोर विरोधी हूँ। लड़की के पिता से या भाई से विवाह करना है या स्वयं लड़की से। वास्तव में हमारे समाज का कुछ विधान ही ऐसा त्रुटिपूर्ण है कि लड़की वालों को सदा नीचा समझा जाता है। पर मेरा तर्क यह है कि जैसे बिना लड़के के विवाह सम्भव नहीं वैसे ही बिना लड़की के भी विवाह की कल्पना करने वाला मूर्ख है। इसी कारण दोनों का समान महत्व है। ऊँच-नीच, छोटे-बड़े का प्रश्न ही नहीं उठता।"

"लेकिन ऐसा सोचने वाले कितने लोग हैं" सर्वदा ने उत्तर दिया, "और जो हैं वे जात-पाँत या सगे-सम्बन्धियों के चक्कर में पड़े होने के कारण विचारों में जितने उदार तथा स्वतन्त्र होते हैं उतने व्यवहार में नहीं हो पाते। कारण यह है कि केवल विचारों की स्वतन्त्रता एक निरपेक्ष वस्तु है किन्तु व्यवहार सापेक्ष है। फिर केवल लड़की के कारण माता-पिता तथा अन्य स्वजनों को त्यागा भी नहीं जा सकता।"

विभाव भी कुछ गम्भीर हो उठा और बोला —"ऐसे लोग तो और भी गये-बीते हैं। हिन्दू यदि मुसलमान अथवा ईसाई की लड़की से विवाह नहीं करता तो किसी सीमा तक बात सही है। क्योंकि यह दो जातों का अन्तर है, देश-स्थान व वातावरण का अन्तर है। हमारे संस्कार मुसलमानों तथा ईसाईयों से भिन्न हैं और इस भिन्नता में मौलिकता है। लेकिन ब्राह्मण-बनिये आदि के अन्तर को मैं सकीर्ण बन्धन मानता हूँ। इतना ही नहीं कई ऐसे भी लोग हैं जो अन्तर्जातीय विवाह तक करते हैं, चाहे उन्हें समाज तथा जात से बहिष्कृत ही क्यों न होना पड़े। मैं व्यतिक्गत रूप से ऐसे लोगों का भी विरोधी नहीं। विवाह तो अपने-अपने मन की बात है।"

"मैं आपके विचारों का सम्मान करती हूँ और मुझे आपकी विचारधारा को जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है" सर्वदा ने उत्तर दिया, "लेकिन यदि यही बात आप पर आ पड़े तो आप को भी अपने सिद्धान्तों का परित्याग करना होगा, चाहे आपको व्यक्तिगत रूप से कितनी भी ग्लानि क्यों न हो।

आप जानते हैं कि आदर्श तथा यथार्थ में कितना गहरा अन्तर है। एक मानसिक जगत की वस्तु है तो दूसरी लौकिक-व्यवहार की। दोनों में सामंजस्य यदि असम्भव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है।"

विभाव तुरन्त बोल पड़ा—"यह आपका भ्रम है। वास्तव में आदर्श है क्या? वही जो कल्पना जगत की वस्तु है? नहीं, ऐसा सोचना युक्ति-युक्त नहीं। जब आदर्श की प्राप्ति हो जाती है और वह हमारे व्यवहार की

वस्तु बन जाती है तब वही जो अब तक आदर्श था यथार्थ हो जाता है। जो आज यथार्थ है वह पहले कभी आदर्श रहा होगा… फिर आप केवल लड़के या उसके परिवार वालों पर ही इन सब बातों का क्यों दोष लगाते हैं। कई लोग ऐसे भी हैं जो एक गये-बीते परिवार तथा अयोग्य लड़के को भी अपनी लड़की सौंप सकते हैं, केवल इसलिये कि वह उनके वर्ण का है, लेकिन अन्य वर्ण में, चाहे वह उनसे ऊँचा ही क्यों न हो, वे अपनी लड़की नहीं देते। या तो वे स्वयं ही इसे धर्म तथा नीति विरुद्ध मानते हैं या समाज व सगे-सम्बन्धियों से डरते हैं। इसका दुष्परिणाम माँ-बाप को नहीं वरन् उनकी लड़की को भुगतना पड़ता है। लेकिन वह कर ही क्या सकती है।"

सर्वदा ने उत्तर में कहा—"हो सकता है आपका विचार सही हो लेकिन जो स्त्री स्वयं इस कटुता तथा संकीर्ण बन्धन का शिकार बन चुकी है, इसके दुष्परिणाम भोग रही है, वह तो कम-से-कम अपनी लड़कियों के सम्बन्ध में ऐसा नहीं कर सकती। चाहे समाज उस पर अँगुली ही क्यों न उठाये, चाहे उसे अपने सगे-सम्बन्धियों से विमुख ही क्यों न होना पड़े।"

विभाव बोला—"मैं आपके विचारों से पूर्णतया सहमत हूँ। लेकिन………

उसका वाक्य समाप्त भी न होने पाया था कि उर्मिला हाथों में किताब दबाये आँगन में आ खड़ी हुई। विभाव को देखकर वह कुछ ठिठक गई फिर नमस्ते कर जल्दी से कमरे में चली गई।

सर्वदा अपने स्थान पर बैठी-बैठी ही बोली—

"मैं तेरी ही प्रतीक्षा में थी, उमा जरा कपड़े बदल कर तीन कप चाय तो बना ला। बातचीत के चक्कर में मैं विभाव जी को चाय भी न पिला सकी। जरा जल्दी कर।"

विभाव शीघ्र कुर्सी पर से खड़ा हो गया और बोला— "इस समय तो केवल एक गिलास पानी ही पी सकूँगा। बहुत ही आवश्यक कार्य है। क्षमा कीजियेगा। घर पर भी आप ही की चाय पीता हूँ। कभी और देखा जायेगा। आपका तो अनुग्रह व आर्शीवाद ही बहुत है।"

इतने में उर्मिला काँच के गिलास में पानी लाकर विभाव को देने लगी तो जल्दी में थोड़ा-सा पानी छलक कर विभाव के पेंट पर जा गिरा।"

उर्मिला सकुचा गई और धीरे से बोली 'सौरी'। विभाव ने कहा—"अरे कोई बात नहीं। ऐसा तो हो ही जाता है।"

फिर सर्वदा से कल-परसों आने का वायदा कर जब वह चलने लगा तो सर्वदा ने कहा—

"मेरी बात पर विचार कीजियेगा।" विभाव यह कहता हुआ कि "आप चिन्ता न करें" घर से बाहर आया और राज के घर की ओर चल पड़ा।

रास्ते में विभाव सोचने लगा—"अगले क्षण में क्या होगा कुछ नहीं कह सकते। जो बात होनी होती है, वह अपने आप ही हो जाती है। राज को जाते ही सारा किस्सा सुनाऊँगा। उसकी सलाह मागूँगा। वह मेरी सहायता अवश्य करेगा।"

विभाव के कदम बड़ी तेजी से उठ रहे थे। तभी उसे पानी के छलकने वाली बात याद आ गई। इसके साथ ही

उर्मिला का सम्पूर्ण चित्र उसकी आँखों के सामने नाच गया। वह सोचने लगा—'साड़ी, सलवार, कुर्त्ती, चाहे कोई 'ड्रेस' हो, उर्मिला सब में कितनी खिलती है। उसने कितनी धीरे-से 'सौरी' कहा था। वह यह कह कर हल्के से मुस्कराई क्यों ? उसने मुझसे चाय पीने को क्यों न कहा ? उसकी माँ सर्वदा कितने सुलझे विचारों की स्त्री है।"

इस प्रकार की बातें सोचते-सोचते वह थोड़ी ही देर में राज के यहाँ जा पहुँचा। लेकिन वहाँ मँजू के होने से बात बनी नहीं। अतः वह सीधा घर लौट पड़ा।

विभाव ने अभी अपने घर में कदम रखा भी न था कि अधीर भागा-भागा आया और बोला—"भैया, पिताजी घर बैठे हैं। जब से आये हैं तब से आपकी प्रतीक्षा हो रही है। आप चलो, मैं अभी दही लेकर आया।"

विभाव बोला—"अबे, पैरों में तो कुछ पहन लिया होता। जरा मोटर-ताँगा देख कर जाना।"

: १२ :

जब लड़के पढ़-लिख कर किसी योग्य हो जाते है, कमाने-खाने लगते हैं, अथवा उन्हें इस बात का विश्वास हो जाता है कि वे अब स्वतन्त्र रूप से किसी का भार अपने कन्धे पर ले सकते हैं, तब ऐसी स्थिति में प्रायः वे यह चाहने लगते हैं कि उनके माता-पिता का कर्त्तव्य कार्य समाप्त हुआ, उन्हें व्यर्थ ही उनके विवाह आदि की चिन्ता क्यों करनी चाहिये। उनकी यह धारणा बन जाती है कि विवाह नितान्त व्यक्तिगत वस्तु है, जिसमें माता-पिता या अन्य सगे-सम्बन्धी यदि आवश्यक समझें तो अवसर के अनुरूप सलाह मात्र भले ही दे सकते हैं किन्तु विवाह में हस्तक्षेप करने अथवा सक्रिय भाग लेने का प्रयत्न उन्हें नहीं करना चाहिये।

उक्त विचार-धारा उचित है अथवा अनुचित तथा इसका मूल कारण क्या है, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन बहुत कम माता-पिता ऐसे हैं जिन्हें उक्त विचार-धारा उचित प्रतीत होती हो और जिन्हें इसके कारण आन्तरिक क्षोभ न होता हो।

कल की शाम और रात्रि के लगभग १०-११ बजे तक का समय तो सुलोचना की बीमारी तथा इधर-उधर की बात-चीत करते-करते बीत गया। बीच-बीच में एक दो बार लक्षणा तथा संचारी ने विभाव के विवाह की चर्चा की भी

लेकिन बात आगे नहीं बढ़ी ।

आज दुपहर को भोजन आदि से निवृत्त होते ही विभाव जब शहर जाने को तैयार हुआ तो श्रीनाथ बोले—"कहाँ जा रहे हो बेटा ? क्या कोई आवश्यक कार्य है ? तुमसे तो बहुत-सी बातें करनी हैं । शाम को अवसर मिले-न-मिले ।"

विभाव मन में जानता था कि बात बहुत-सी नहीं बल्कि एक ही है, अतः छुटकारा पाने के लिये बोला—

"वैसे तो कोई बात नहीं, पिताजी, जरा अपने एक मित्र से मिलना था । कुछ सलाह लेनी थी । आप कहें तो न जाऊँ ।"

श्रीनाथ बोले—"हाँ, मित्र से बाद में मिलना अभी तो धूप भी बहुत है । शाम को डाक्टर के यहाँ जब अपनी माँ की दवाई लेने जाओ तभी मिल लेना ।"

विभाव चक्कर में पड़ गया । इतने में लक्षणा और संचारी भी कमरे में आ पहुँचे । लक्षणा ने माँ को दवा की एक गोली दी । पानी का गिलास पकड़ाया और पास बैठते हुए बोली—

"आपने क्या निश्चय किया, पिताजी । अम्मा की हालत तो आप देख रहे हैं । अब इनकी सहायता करने वाला कोई न कोई होना ही चाहिए ।"

श्रीनाथ बोले—"निश्चय क्या करना है, बिटिया बस हमें तो विभाव की स्वीकृति लेना और शेष है । घर-बार तथा लड़की तो तुम लोग देख ही आये हो । विभाव को भी लड़की पसन्द है ही ।

विभाव ने इस भय से कि कहीं वह बात के फेर में न पड़ जाय तत्काल उत्तर दिया—

"पिताजी जहाँ तक लड़की का प्रश्न है, लड़की ठीक-सी ही है, बहुत 'ब्यूटीफुल" तो नहीं। मेरे अनुसार पढ़ी-लिखी कम है। 'इण्टर मीन्स नो क्वालीफीकेशन।' इसके अतिरिक्त परिवार विशेष सम्पन्न नहीं। फिर हमें अभी इतनी जल्दी ही क्या है। यह मेरा 'फाईनल' इयर है। आगामी वर्ष यदि सफल हो गया तब भले ही नौकरी मिल जाये अन्यथा तो फिर एक वर्ष को गई। यदि लड़की वहुत ही सुन्दर होती तो दूसरी बातों पर विचार नहीं भी किया जाता।"

विभाव की बात समाप्त होते ही लक्षणा बोल उठी— "यह बात तो विभाव तुम आज कह रहे हो। लड़की देखने के बाद जब मैंने तुमसे पूछा था तब तो तुमने कहा था कि लड़की अच्छी है। और अब कह रहे हो ठीक-सी ही है, बहुत सुन्दर नहीं।"

विभाव को लक्षणा की यह बात बहुत बुरी लगी। उसे लगा कि सब मिल कर उसे फँसाना चाहते हैं। उसके मन में आया कि साफ-साफ कह दे कि 'होगी लड़की सुन्दर तुम्हारी आँखों में। मुझे अच्छी नहीं लगती, बात खत्म।' लेकिन फिर भी वह कुछ गम्भीर स्वर में बोला—

"तो क्या मेरी बात पत्थर की लकीर हो गई। अच्छा, यदि, जीजी, मैं यह मान भी लूँ कि लड़की अच्छी है तो इससे क्या होगा? अच्छी लड़की चाटनी है क्या? और सब बातें भी देखनी पड़ती हैं। इसके अलावा जब तक मेरी नौकरी नहीं

लग जाती मैं चाहे जो हो विवाह नहीं करने का।"

लक्षणा के उत्तर देने के पूर्व ही श्रीनाथ बोले—"देखो बेटा विभाव, जहाँ तक लड़की के परिवार का प्रश्न है मेरे मित्र प्रेमचन्दजी पर मुझे पूरा विश्वास है। वे उन सब लोगों से गत २५ वर्ष से परिचित हैं। अपने परिवार से भी उनका काफी अच्छा सम्बन्ध रहा है। इसके अतिरिक्त तुम भी तो एक दिन उनके घर पर रह चुके हो।"

"अजी, एक दिन रहने से क्या होता है" विभाव बीच में ही बोल उठा, "पिताजी आप तो दुनियाँ भर को अपने जैसा भोला-भाला समझते हैं। कल को यदि कोई बात हुई तो प्रेमचन्द जिम्मेदार होंगे या आप ! उनका गला कौन पकड़ेगा।"

सुलोचना गत सप्ताह से अस्वस्थ थी। अस्वस्थता का एक कारण हार्दिक चिन्ता भी थी। जब कभी भी विवाह के सम्बन्ध में बात-चीत होती थी तो विभाव या तो गरम होने लगता था, या बात टाल देता था। उसके ऐसे व्यवहार से सुलोचना को यह भय होने लगा था कि विभाव के मन में कोई और ही बात है।

सुलोचना कुछ समझाने के स्वर में बोली—"बेटा तुम यों ही बिगड़ रहे हो। हमें तो सुन्दर-सी बहू चाहिये उसके परिवार वगैरह से हमें क्या मतलब। अगर ज्यादा ही हुआ तो बहू को पीहर नहीं जाने देंगे।"

विभाव भला अब क्यों चूकता तुरन्त बोल उठा—"जब मैं यह बात कहता हूँ अम्मा—तब आप विरोध करने लगती हैं। लड़की का घर भरा-पूरा होना ही चाहिए, माता-पिता

होने ही चाहिए, अनाथ लड़की हमें नहीं लानी। भाई का होना तो बहुत ही जरूरी है। दहेज हम नहीं चाहते फिर भी इज्जत तो बनी रहनी चाहिए। ये सब बातें आप ही की कही हुई हैं। लेकिन अभी मुझे दबाने के लिये आप केवल बहू का आदर्श मेरे सामने रख रही हैं।"

सुलोचना कुछ क्षणों के लिए चुप हो गई तो श्रीनाथ बोल पड़े—"अरे तुम पिछली बातों को व्यर्थ दोहरा रहे हो। रही नौकरी की बात, तो उसकी चिन्ता तो हमें भी है। सम्बन्ध तय हो जाए, विवाह नौकरी लगने के बाद हो सकता है।"

"होने को तो क्या नहीं हो सकता," विभाव ने कुछ चिढ़ कर उत्तर दिया, "लेकिन इतनी जल्दी क्या है। दुनियाँ भर में यही एक लड़की है क्या। अच्छा जरा मैं भी तो सुनूँ कि विवाह के लिए पैसा कहाँ से आयेगा। गुड्डे-गुड्डियों का ब्याह रचाने की तबियत है क्या?

लक्षणा अभी तक अपने को रोके हुए थी। अवसर मिलते ही श्रीनाथ को संकेत देती हुई बोली—"पिताजी, हमारा अनुमान है कि लगभग १,००० रुपया तो टीके में आ जायेगा। शेष का प्रबन्ध इधर-उधर से हो जायेगा।"

श्रीनाथ कुछ कहते लेकिन विभाव तीखे स्वर में बोल उठा—"बेवकूफी की बात मत करो, जीजी। इधर-उधर से तुम्हारा मतलब कर्जा लेने से है। देखिये पिताजी कर्जा लेकर कम से कम लड़के का ब्याह रचाना बड़ी मूर्खता होगी। आज आप अपने पर मेरे कारण और कर्जा चढ़ा लें और कल नौकरी लगते ही मैं कर्जा उतारना शुरू कर दूँ, बोलिये आप यही

चाहते हैं। ये लोग तो उल्टी-सीधी बातें करते हैं।

श्रीनाथ को विभाव की बातों से खेद हो रहा था, वे गम्भीर स्वर में बोले—"आज से पहले भी, विभाव, तुम्हारी पढ़ाई-लिखाई के लिये कई बार मैंने ऋण लिया है और उतारा है। तुमने मुझे तब कभी न रोका। जब तक मुझमें शक्ति है, अपना कर्ज—जो मैंने लिया है—चाहे अपने लिये, या तुम लोगों के लिये वह मैं तुमसे उतारने को कभी न कहूँगा। यदि ऐसा न हो सका तो भी तुम्हारे सिर पर अपने कर्ज का भार मैं न पड़ने दूँगा। प्रत्येक माता-पिता जानते हैं कि उनके बाल-बच्चे, जिन्हें वे अपना रक्त देकर पालते हैं; अनेक प्रयत्न करने पर भी, उनके ऋण से कभी भी मुक्त नहीं हो सकते। तुम्हें क्या समझाना है, तुम स्वयं पढ़े-लिखे हो, समझदार हो।"

"समझदार ही होता तो कहना ही क्या था," विभाव उसी स्वर में बोला, "आप तो भावुकता में बहते हैं, वास्तविकता का आपको अनुमान नहीं। क्या सारे आदर्श का ठेका हमारे ही सिर पर है। जब लड़की बहुत सुन्दर नहीं तो उसका बाप कम से कम पाँच-छः हजार रुपये तो नकद दे। रुपया भी नहीं, लड़की भी 'ऑर्डनरी', पढ़ाई-लिखाई भी नहीं के बराबर तो क्या इस सम्बन्ध को लेकर चाटना है।"

श्रीनाथ ने अपने सिद्धान्तों की रक्षा और निर्वाह के लिये ही अभी तक इतने कष्ट सहे, लेकिन अपनी बात से कभी न टले। विभाव की बात सुन कर उन्हें क्रोध आ गया, वे कुछ तीखे स्वर में बोले—

"विभाव, लगता है कि तुम्हारा कोई सिद्धान्त ही नहीं

है, इसीलिये तुम स्वयं अपना एक निश्चित मत प्रकट नहीं कर रहे हो। मैं किसी भी स्थिति में नकद रुपये लेने के पक्ष में नहीं चाहे विवाह हो या न हो। मैंने अपने अब तक के जीवन में रुपये को केवल साधन के तौर पर ही प्रयोग किया है, साध्य के रूप में नहीं और आज भी मेरा यही मत है। तुम्हारे सामने भी एक बहन और है। हम ही ने अपनी दोनों लड़कियों को कितने का देहज दिया था जो आज हम दहेज माँगें। यह कोरा भिगमंगापन है। मेरी बात तुम्हें आदर्श अनुभव होती है, क्योंकि तुमने अभी तक उसे व्यवहार में लाने का प्रयत्न ही कब किया है। मेरे लिये वही वास्तविकता है। रही भावुकता की बात तो तुम्हे मेरी भावुकता को ठुकराना तो नहीं चाहिये।"

विभाव का क्रोध भड़क उठा। वह और भी जोर से बोला—

"आपने अपनी लड़कियों को दहेज नहीं दिया तो मैं क्या करूँ। आप तो बीते जमाने की बात कर रहे हैं, मैं जो आज है उसका हामी हूँ। मेरे सामने कोई बहन-वहन का प्रश्न नहीं है। आप देखेंगे कि अभिधा के विवाह में भी लोग कितना मुँह फाड़ेंगे। तब देखूँगा आप कैसे किसका मुँह पकड़ेंगे।"

श्रीनाथ को कुछ अपना अपमान अनुभव हुआ। वे चीख पड़े—"विभाव, तुम पढ़-लिख कर भी मूर्ख ही रह गये। अरे उनका मुँह मैं क्या पकड़ूँगा, जब मैं तुम्हें ही कुछ नहीं कह सकता। दहेज के रुपयों पर बड़े आदमी कहलाने का तुम्हारा शौक थोथा है। यदि रुपया कमा कर ही बड़ा बनना है तो अपनी कमाई के बल पर बनो। कर्म करना सीखो।"

"जब मैं मूर्ख हूँ और मेरी बात थोथा शौक है तो मेहर-बानी करके आप इस सम्बन्ध में मुझसे आगे कभी कोई बात न कीजिये। मेरे विवाह की चिन्ता करके आप क्यों परेशान हो रहे हैं..." कहता हुआ विभाव सीधा ज़ीने से नीचे उतरा, साईकिल उठाई और सीधा राज के यहाँ चल दिया। आज उसने उर्मिला के सम्बन्ध में अन्तिम निश्चय करने की ठान ली थी।

विभाव के कुव्यवहार से श्रीनाथ को अत्यन्त खेद हुआ। उनके मन में आया कि भविष्य में सदा के लिये वे विवाह के प्रसंग को स्थगित कर दें। वे शान्त स्वर में सुलोचना से बोले—"तुम व्यर्थ ही आँसू बहा रही हो। हमारा कर्तव्य पढ़ा-लिखा-कर लड़कों को योग्य बनाने का था, जो उसके पालन में अपनी सामर्थ्य से अधिक हमने प्रयत्न किया और हम सफल भी हुए। अब विभाव यदि हमारी बात नहीं मानता तो हमें चुप ही रहना चाहिये। ताकि अपने किये पर उसे पछताने का अवसर मिले। तुम कहो तो उन लोगों को आज ही नहीं लिख दूँ।"

माँ के उत्तर देने के पूर्व ही लक्षणा बोल उठी—"पिताजी, इच्छा तो हम लोगों की भी होती है कि इस प्रसंग को सदा के लिये समाप्त कर दें, लेकिन यदि कल को उल्टी-सीधी बात हुई तो लोग यही कहेंगे कि माँ-बाप ने लड़के की शादी पर ध्यान नहीं दिया। इसलिये अभी उन लोगों को साफ मना न कीजिये। हम और प्रयत्न करेंगे।"

"मुझे कोई आपत्ति नहीं," श्रीनाथ ने कहा, "लेकिन मुझे

साथ ही कोई आशा भी नहीं रही। यदि नहीं मानता तो जाने दो, जो होगा सो देखा जायेगा।"

इस सम्बन्ध में बातचीत चल रही थी कि अनुभाव कालेज से लौट आया और कमरे में प्रवेश करते ही बोला—"लीजिये पिताजी, 'आरमी' में जाने वाले कालेज के लड़कों में मेरा 'सिलेक्शन' हो गया है। मैंने तो पहले ही कहा था। अच्छा हुआ। पढ़ाई तो मेरे बस की नहीं। इस समय हमारे देश को एक 'अपटूडेट आरमी' की आवश्यकता है। यही देश व समाज-सेवा का अवसर है। मुझे बड़ी ही खुशी हो रही है। बोलो माँ, तुम्हारा क्या कहना ।"

सुलोचना बिस्तरे पर पड़े-पड़े अनुभाव की ओर ताकती रह गई। उसकी आँखों से आँसू टपक रहे थे, पर मुँह से वह कुछ न कह सकी।

: १३ :

आवेश चाहे कितनी ही बुरी वस्तु क्यों न हो, इससे मनुष्य में चौगुनी शक्ति आ जाती है। शुभ-कार्य तथा उसके उत्तम परिणाम में उत्साह व प्रेरणा का जो महत्व है वही बिना सोचे-समझे किये गये कार्य में आवेश का है। आवेश के मूल में प्रायः क्रोध अथवा निराशा की तीव्र भावना कार्य करती है तो उत्साह के मूल में आशा व प्रेरणा का सतत स्रोत बहता है।

कल शाम को जब क्रोध में जलता-भुनता विभाव घर से बाहर आया तो उसे इस बात का ख्याल ही नहीं आया कि साईकिल के पिछले पहिये में हवा का नाम निशान नहीं। राज से मिलकर उर्मिला के सम्बन्ध में शीघ्र निश्चय करने की धुन में जब वह एक दम साईकिल पर सवार होने लगा तो उसे अपनी भूल अनुभव हुई। उसके क्रोध की अग्नि और भी भभक उठी। उसने फौरन साईकिल पड़ौस की एक दुकान पर पटकी और सीधा बस में सवार हो गया। बस यात्रियों से खचाखच भरी थी। विभाव अन्दर प्रवेश करते ही दो-तीन यात्रियों से झगड़ बैठा। एक-दो के मुँह से भद्दी-भद्दी गालियाँ भी सुननी पड़ीं। उसे जैसे ही स्थान मिला, वह तपाक से बैठ गया। उसने अभी सिगरेट सुलगाई ही थी कि पास में बैठे एक वृद्ध महाशय ने आपत्ति की और यात्री भी बोल पड़े। बात बढ़ गई। कण्डेक्टर से भी झगड़ा हो गया। किसी तरह से विभाव

अपने गंतव्य स्थान पर लगभग पौन घण्टे में पहुँच पाया।

विभाव ने राज के बँगले में प्रवेश कर बाहर से ही आवाज लगाई तो टाईगर जोर से भौंक पड़ा। किसी तरह उसे शान्त किया। विभाव ने ऊपर पहुँचते ही देखा कि ड्राइंग-रूम का दरवाजा थोड़ा-सा खुला था और अन्दर कुछ लोगों के बातचीत करने की आवाज आ रही थी। कमरे में प्रवेश करते ही रजनी, उर्मिला तथा मिस मँजू को एक ही सोफे पर बैठा देख वह कुछ ठिठक गया। उसे अपनी भूल अनुभव हुई, कुछ लज्जा भी आई। वह गिड़गिड़ाता हुआ बोला······"ओ, सौरी···रजनी···मैं राज से जल्दी ही मिलना चाहता हूँ। क्या वह घर नहीं है···? मेरा मतलब, कहाँ गया है···कब तक आयेगा ?"

रजनी सोफे पर से खड़ी हो गई और बोली—"क्या बात है ? आप इतने परेशान से नज़र क्यों आ रहे हैं। पहले ज़रा बैठियेगा, पसीना सूखने दीजिये तब सब बातें पूछियेगा। कल परसों भी आप जिस पैर आये उसी पैर लौट गये।"

पास के सोफे पर बैठते हुए विभाव बोला—"बैठ तो जाऊँगा। बात तो कुछ नहीं, पर···पर राज कहाँ है। मैं जल्दी में हूँ।"

रजनी के उत्तर देने के पहले ही मँजू कुछ हँसती हुई बोली—

"आप भी खूब हैं मिस्टर विभाव। जब देखो जब मिस्टर राज के चक्कर में ही पड़े नज़र आते हैं। इस घर में और लोग भी तो हैं। सम्भवतः आप उनमें से किसी से भी परिचित नहीं।"

"नहीं, नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं, मिस मँजू," विभाव ने कुछ सम्भलते हुए उत्तर दिया, "लेकिन मेरा काम बड़ा आवश्यक था। गत तीन-चार दिनों से राज से बिल्कुल मिलना न हो सका।"

रजनी तुरन्त बोल उठी—"मिलना तो तब होता जब भैया यहाँ होते। आप जैसा मित्र मैंने नहीं देखा। आपको पता नहीं कि पापा को फर्म के काम से बाहर गये लगभग एक माह होने को आया। गत सप्ताह से उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं। पत्र से मालूम हुआ कि उन्हें 'हार्ट अटैक' हो गया है! भैया पत्र पाते ही शिवपुर गये हैं। उनका अभी तक कोई पत्र नहीं आया है। इस कारण मेरी चिन्ता बढ़ती जा रही है। दिन-भर से किसी भी काम में मन नहीं लग रहा है।"

रजनी की बात समाप्त होते-होते उर्मिला सोफे पर से उठ गई और बोली—

"अच्छा रजनी मुझे तो इजाजत दो। यहाँ बैठे-बैठे दो-एक घण्टे से अधिक हो गया। तुम्हें भी वॉयलेन सीखना है। मँजू दीदी को भी देर हो जायेगी। घर की ताली मेरे पास है, माँ व्यर्थ परेशान होंगी। कल फिर मिलूँगी।"

"अभी थोड़ी देर तो और बैठती, उमा" रजनी ने कहा, "लेकिन कैसे रोकूँ, काफी समय हो गया है। अच्छा तो कल जरूर मिलेगी न। तू कहे तो बस तक मेवा दादा को भेज दूँ। घर पर काम ही क्या है।"

"नहीं-नहीं, रहने दे," कहती हुई उर्मिला धीरे से चल दी। चलते समय उसने मँजू को नमस्ते की, लेकिन विभाव की ओर

केवल हाथ जोड़ दिये, मुँह से कुछ कहा नहीं। विभाव भी उठकर खड़ा हो गया और उर्मिला की ओर एक टक ताकता रह गया।

ज्यों ही रजनी उर्मिला को विदा कर कमरे में आई त्यों ही विभाव चलने को तैयार हो गया। रजनी ने जब ठहरने को कहा तो वह बोला—

"रजनी, ठहरने का मतलब एक कप चाय, लेकिन अभी समय नहीं है। मैं शीघ्र ही एक तार राज को देता हूँ। कल तक उत्तर आ जायेगा। तब विचार करेंगे।"

रजनी मुँह ताकती रह गई और विभाव जीने से जल्दी-जल्दी उत्तर कर नीचे आ पहुँचा। तारघर पास ही था अतः दस मिनिट में ही वह तार देकर जब बस स्टैंड पर आया तो देखा उर्मिला हाथ में अपना बैग लिये खड़ी थी। वह कुछ परेशान-सी नजर आ रही थी।

विभाव पहले तो उसे एक मिनिट तक दूर से देखता रहा फिर पास आकर बड़े मीठे स्वर से बोला—"अरे, आप अभी तक यहीं खड़ी हैं, आधा घण्टा हो गया। मुझे मालूम पड़ा है कि एक बस खराब है, और एक कुछ समय पहले ही राम बाग जा चुकी है। मुझे भी घर जाना है।

इतना कहते-कहते विभाव ने फौरन एक ताँगा रुकवा लिया। उर्मिला ने पहले तो कुछ आनाकानी की लेकिन जब विभाव न माना तो उसे ताँगे में बैठना ही पड़ा।

उर्मिला तथा उसकी माँ सर्वदा शहर से बाहर रहती थीं। शहर के शोरगुल तथा गन्दी गलियों से सर्वदा को बहुत घृणा

थी। उर्मिला का कालेज यद्यपि दूर था तथापि रजनी अपनी कार से प्राय: जाते समय उसे साथ ले जाती थी। आते समय वह बस से आती थी या कभी जब रजनी को घूमने का मूड आ जाता तो कार से वह उर्मिला को घर छोड़ भी जाती थी।

उर्मिला तथा रजनी गत कई वर्षों से एक साथ पढ़ रही थीं। यद्यपि द्रव्य की दृष्टि से दोनों में पर्याप्त अन्तर था तथापि रजनी ने अपने स्नेहपूर्ण व्यवहार से उर्मिला को कभी भी इस अन्तर को अनुभव न होने दिया। दोनों का प्रेम क्रमश: बढ़ता ही गया। रजनी को भी सर्वदा से माँ का-सा स्नेह प्राप्त होता था। जिसके लिये वह तीन-चार वर्ष की आयु से तृषित थी। रजनी को यह बात मालूम हो गई थी कि उसका भाई राज उर्मिला की मुक्त कंठ से प्रशंसा करता है। स्वयं रजनी भी चाहती थी कि उर्मिला तथा उसका स्नेह किसी प्रकार और भी दृढ़तर हो जाये।

न जाने क्यों ताँगा कुछ मन्द गति से चल रहा था। लगभग तीन-चार मिनिट चुप रहने के बाद विभाव बड़े धीरे से बोला—

"देखो, अभी तक बस का कोई पता नहीं, उर्मिला जी। मैं पहले ही जानता था। बस के चक्कर में तो आप वहाँ खड़ी ही रह जातीं।"

"आप ठीक कहते हैं पर यह ताँगा भी तो एक घण्टे से पहले घर पहुँचाने वाला नहीं। इतनी देर में तो पैदल ही पहुँच जाते।"

विभाव ने कुछ मुस्कराते हुए कहा—

"लगता है आपको बहुत जल्दी है। आप घबराती क्यों हैं ? आपकी ममी से मैं क्षमा माँग लूँगा।"

"आपने क्या अपराध किया है जो आप क्षमा माँगें। देर आपके कारण तो नहीं हो रही है।"

उर्मिला का वाक्य समाप्त होते ही विभाव बोल उठा—"क्षमा माँगने में क्या बुराई है। इसमें तो आदमी का बड़प्पन ही झलकता है। लेकिन यदि आप नहीं चाहतीं तो मैं चुप रहूँगा।"

उर्मिला ने दूसरी ओर देखते हुए कहा—"आप मेरे मना करने से क्षमा माँगे या न माँगे मुझे कोई आपत्ति नहीं किन्तु मेहरबानी करके मेरे नाम के बाद 'जी' लगाने और 'आप' कहकर सम्बोधित करने का कष्ट न करें।"

विभाव अब की बार कुछ खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला—"लीजिए, इसमें क्या बात है। अच्छा तो आप मेरा नाम क्यों नहीं लेतीं मेरा नाम भी तो लेने के लिए ही रखा गया है।"

उर्मिला ने धीरे से कहा—"आप और मैं बराबर हैं क्या ? मैं हर बात में आपसे छोटी हूँ।"

विभाव ने चट से उत्तर दिया—"छोटे-बड़े के अन्तर को मैं नहीं मानता। दुनिया में सब बराबर हैं। आयु की या शिक्षा की छोटाई-बड़ाई भी भला कोई चीज है।"

उर्मिला ने कुछ गम्भीर स्वर में कहा—"आप भले ही ऐसा सोच सकते हैं। लेकिन व्यवहारिकता की दृष्टि से आपका सिद्धान्त केवल आदर्श है। हमारे समाज में अन्तर्भेद सदा से

रहता आया है और आगे भी रहेगा। हमें न चाहते हुए भी समाज के विधान को मानना पड़ेगा।"

विभाव ने उर्मिला की बात का उत्तर देने से पूर्व ताँगे वाले से कहा—"अरे भाई ! तुम तो अपने गुनगुनाने में मस्त हो। जरा धीरे-धीरे चलाओ। बहुत धक्के लग रहे हैं।"

विभाव की बात सुन उर्मिला धीरे से मुस्करा दी। लेकिन विभाव न देख सका। वह फिर गम्भीर हो गया और बोला—

"तुम्हारी बात को मैं नहीं मानता। यदि हम व्यक्तिगत रूप से ऊँच-नीच तथा वर्ण-भेद को त्याग दें तो कुछ समय में सारे समाज से ऐसी मान्यता स्वतः बहिष्कृत हो जायेगी। मुझे समझ में नहीं आता कि ब्राह्मण क्यों बड़ा है, शूद्र क्यों छोटा है।"

"क्योंकि वह ब्राह्मण है इसलिए वह बड़ा है ;" उर्मिला ने तपाक से उत्तर दिया, "आप चाहे मानें या न मानें परमेश्वर की सृष्टि में, यहाँ तक कि प्रकृति में भी अन्तर है। सब एक समान नहीं। और तो और हाथ की पाँचों अँगुलियाँ तक बराबर नहीं।"

"तुम्हारा विचार ठीक है, उर्मिला !" विभाव ने गम्भीरता से उत्तर दिया, "लेकिन पाँचों अँगुलियाँ छोटी-बड़ी होते हुए भी समान रूप से मिलकर कार्य करती हैं। एक के बिना दूसरी बेकार हो जाती है, सारा काम रुक जाता है। वर्ण तो कर्म के अनुसार होता है। जन्म से तो मैं केवल एक जात और एक वर्ण को ही मानता हूँ, और वह है मानव-मनुष्य-जात। यही सबसे बड़ा वर्ण है, सर्वोपरी धर्म है। यदि वर्ण जन्मगत

होता तो ब्राह्मण-वनिये में स्नेह तथा मित्रता का निर्वाह असम्भव हो जाता। उर्मिला जरा लौकिता के दलदल से बाहर निकलकर सोचो तो तुम्हें अनुभव होगा कि हम सब एक हैं। परमेश्वर को सभी ने परमपिता के रूप में स्वीकार किया है।"

विभाव की बात सुनते-सुनते उर्मिला गम्भीर हो उठी। इतने में ही ताँगे के पहिए के नीचे एक बड़ा-सा पत्थर आ जाने से जोर का धक्का लगा। विभाव ने तुरन्त उर्मिला की बाँह थाम ली, लेकिन तत्काल ही उसने अपना हाथ खींच लिया।

उर्मिला ने "सौरी" कह दिया और बोली—"मैं आपके विचारों का आदर करती हूँ। लेकिन हम मानसिक जगत में जितने स्वतन्त्र हो सकते हैं व्यवहारिक जगत में उतने नहीं। कभी-कभी वर्ण-भेद के कारण स्नेह का भी गला घुट जाता है।"

विभाव तुरन्त बोल पड़ा—"ऐसा तभी होता है, जब दो में से एक व्यक्ति समाज-भीरू तथा परम्पराओं का गुलाम हो। यदि दो मित्र समान रूप से एक-दूसरे को चाहते हैं, तो विश्व की कोई शक्ति उन्हें कभी भी अलग नहीं कर सकती।"

विभाव की बात समाप्त होने पर उर्मिला दो क्षण मौन रही। फिर बोली—"यदि सब ही व्यक्ति आपके समान उदार तथा सुलझे विचार के हों तो इसी पृथ्वी पर स्वर्ग की कल्पना की जा सकती है।"

इतने में ही उर्मिला का क्वार्टर आ गया। ताँगे के रुकते ही दोनों उतर पड़े। उर्मिला अपने बेग से पैसे निकाल ही

रही थी कि विभाव ने तत्काल एक रुपये का नोट ताँगे वाले को पकड़ा दिया। वह चल दिया।

उर्मिला बोली—"आइए, थोड़ी देर बैठिये। ममी आती ही होंगी।"

विभाव ने कहा—"इस समय तो नहीं कल-परसों जरूर आऊँगा। अपनी ममी से मेरा प्रणाम कहियेगा। यदि मेरी कोई बात आपको अनुचित लगी हो तो क्षमा कीजिएगा।"

उर्मिला बीच में ही कुछ नाराज होती हुई बोली—"सब बातों में केवल 'आप' शब्द का आपने अनुचित प्रयोग किया। उसके लिए मैं क्षमा नहीं कर सकती। यहाँ तक साथ देने के लिये बहुत-बहुत धन्यवाद।" इतना कहकर उर्मिला मुस्करा दी।

दोनों एक मिनिट तक एक-दूसरे को देखते रहे। "साथ मैंने अकेले ने ही तो नहीं दिया" कहकर विभाव धीरे-धीरे घर की ओर चल पड़ा।

: १४ :

यद्यपि सुलोचना अभी पूर्णरूप से स्वस्थ तो नहीं हो पाई थी तथापि अवकाश के अभाव के कारण श्रीनाथ को पुनः गंगापुर जाने को वाध्य होना पड़ा। इस बार उन्हें विभाव के उदासीन व्यवहार के कारण अत्यन्त क्षोभ व निराशा हुई। इन पन्द्रह दिनों में उन्होंने ही क्या परिवार के सभी व्यक्तियों ने अपने-अपने ढंग से विभाव का विवाह के सम्बन्ध में निश्चित मत जानने का पूर्ण प्रयत्न किया, लेकिन सब को निराश होना पड़ा।

यदि सन्तान योग्य होती है तो पिता का नाम होता है, यश मिलता है, लेकिन यदि बच्चे बिगड़े हुए निकल जायें तो बुराई माँ को मिलती है। इसमें सन्देह नहीं कि माँ और पिता दोनों के सहयोग व स्नेह से ही बच्चों का निर्माण होता है लेकिन प्रायः पिता में स्नेह व आत्मीयता के स्थान पर कर्त्तव्य की भावना अधिक होती है। माँ अपने बच्चों के पालन-पोषण तथा शिक्षा में सर्वस्व त्यागने को तत्पर रहती है। इस त्याग को जो लोग केवल कर्त्तव्य जनित मानते हैं वे मातृ-हृदय के प्रति पूरा न्याय नहीं करते। वास्तव में इस उत्सर्ग के मूल में स्नेह की सतत् प्रेरणा होती है। प्रत्येक माँ, जो सच्चे अर्थों में माँ है, वह अपने बच्चों को स्नेह इसलिये करती है कि इसके बिना वह रह नहीं सकती। यही कारण है कि सन्तान के योग्य

होने पर माँ को अपेक्षाकृत अधिक हर्ष तथा अयोग्य होने पर विषाद् होता है।

अनुभाव को देश व समाज के प्रति आरम्भ से ही विशेष अनुरक्ति थी। वह बाल्यकाल से ही अत्यन्त भावुक था। तर्क तथा बुद्धि का उसके लिये कोई महत्व न था। इस कारण भावुक की अपेक्षा स्वजन तथा उसके मित्र आदि ने उसे 'सनकी' की संज्ञा दे डाली थी।

लगभग दो तीन वर्ष पहले की बात है कि अनुभाव ने एक कहानी लिखी। बड़े प्रयत्नों के बाद बेचारा उसे लिख पाया था। उसने अपनी कहानी कईयों को सुनाई पर किसी ने भी उसकी पीठ न ठोंकी। वैसे लक्षणा को कहानी पढ़ने का बड़ा शौक था। लेकिन अनुभाव की कहानी पढ़ने के बाद जब उसे कहानी समझ में ही न आई तो वह बोली—

"अनुभाव तुम्हारी कहानी का 'प्लाट' भले ही कितना अच्छा क्यों न हो तुमने लिखी ऐसी है कि पढ़ते ही नहीं बनती। जरा साफ-साफ लिखने की कोशिश किया करो।"

लक्षणा का वाक्य समाप्त होते ही बिना एक शब्द कहे अनुभाव ने कहानी के चार-पाँच पृष्ठ अपने हाथ में लिये और देखते-देखते उसने उन्हें जला डाला। कहानी राख हो गई।

बच्चों से वैसे तो इतना स्नेह था कि यदि वे कोई बुरी आदत भी सीखें तो भी अनुभाव उन्हें सिर पर ही बिठाता, चाहे कोई कितना ही विरोध क्यों न करे, लेकिन जब वह सोता हो और कोई बच्चा चूँ भी करदे तो उसे वह चीर कर दो टुकड़े करने को तैयार हो जाता था। यदि जूते के फीते

एक बार में ठीक से नहीं कसे जायें तो या वह उन्हें ही तोड़ डालता था या नंगे पैर ही निकल पड़ता था। मित्रों में यदि कोई मूड में आकर प्रसंग वश कह दे—

"क्यों अनुभाव तुम कभी संचारी के साथ रजनी के यहाँ हारमोनियम सुनने नहीं जाते—" तो कहने वाले का भगवान ही मालिक होता था।

शेव बनाते-बनाते यदि ब्लेड ठीक काम न करे तो वह फौरन इतनी जोर से उसे रगड़ डालता था कि खून की धारा बहने लगती थी या मूँछ को बजाये कोई निश्चित रूप में बनाने के वह उन्हें सफाचट कर डालता था।

संचारी ने बड़े प्रेम से अनुभाव को कहा—"अनुभाव, तुम घर की दशा देख रहे हो। माँ बीमार रहने लगी हैं, भैया को घर से कोई मतलब ही नहीं है, मैं अभी तुम लोगों पर निर्भर हूँ, ऐसी दशा में तुम्हारा घर छोड़कर फौज में भर्ती होना क्या उचित है?" संचारी का वाक्य अभी समाप्त भी न हुआ था कि अनुभाव ने गम्भीर होकर माता-पिता तथा बड़ी बहन की उपस्थिति की उपेक्षा करते हुए कहना आरम्भ किया—

"संचारी तुम छोटे भी हो और मूर्ख भी। अच्छाई-बुराई समझ ही नहीं सकते। तुम्हें घर के हाल की पड़ी है। घर एक छोटी सी इकाई है, यदि यह नष्ट भी होगई तो कोई हानि नहीं होगी। समाज, देश और राष्ट्र एक बहुत बड़ी इकाई है। यदि सब लोग तुम्हारी तरह अपना-अपना घर देखने लगेंगे, अपनी-अपनी माँ की सेवा में लग जायेंगे तो देश का क्या होगा? समाज सेवा कौन करेगा? बड़े-बड़े नेताओं

ने, तुम्हें मालूम होना चाहिये, देश व समाज-सेवा के लिये ही सब कुछ त्याग दिया। अपने स्वार्थ के लिये तो सभी जीते हैं किन्तु मानव हित के लिये जीने वाला निसन्देह महान् है।

सुलोचना अनुभाव के स्वभाव से पूर्णरूप से परिचित थी। कई बार उसने उसे समझाने का प्रयत्न किया लेकिन सब व्यर्थ रहा। फिर भी इस बार वह अपने को रोक न सकी, बोली—

"लेकिन अनुभाव देश व समाज सेवा जैसा महान् कार्य अपने ऊपर लेने से पहले तुम्हें यह मालूम होना चाहिये कि घर में अन्धेरा करके मस्जिद में दिया जलाने वाला अव्वल दर्जे का मूर्ख होता है! जो अपने छोटे-से परिवार की जिम्मेदारी अनुभव नहीं कर सकता, समयानुकूल कार्य नहीं कर सकता, वह देश व राष्ट्र की जिम्मेदारी निभाना तो दूर रहा, उसे ले ही नहीं सकता, समझ ही नहीं सकता। ऊँट जब तक पहाड़ पर नहीं चढ़ जाता बिल-बिलाता रहता है। तुम्हारी बातों से लगता है कि कल ही तुम देश के सबसे बड़े नेता बन जाओगे। सम्पूर्ण राष्ट्र की आँखें तुम्हारे पर ही लगीं हैं। पहले माँ-बाप की आँख का तारा बनना सीखो फिर परिवार समाज, देश तथा राष्ट्र की चिन्ता करना। पहले जिसने तुम्हें जन्म दिया है, पालन-पोषण किया है उसके प्रति कर्त्तव्य परायण होना सीखो, बाद में मातृभूमि की सेवा करने की सोचना...।"

अनुभाव का क्रोध भड़क उठा—सुलोचना का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही वह गरज पड़ा। "आपके विचार मैं पहले भी कई बार सुन चुका हूँ, आप कोई नयी बात नहीं कह रहीं हैं। विभाव भैया जहाँ चाहें घूमें, किसी से मिलें, चाहे

जितने सीनेमा रोज देखें, मन चाहा खर्च करें, लेकिन मैं कर्त्तव्य करने के लिये भी स्वतन्त्र नहीं। देश-सेवा जैसे शुभ-कार्य में भी मुझे आप लोगों का मुँह तकना पड़ रहा है। क्यों? केवल इसलिये कि मैं बीच का हूँ। बीच का होने का मतलब सब की सुनो और जानवरों की तरह जो जिधर हाँक दे बिना जबान हिलाओ उस ओर मुड़ जाये। आप माँ हैं, आपने जन्म दिया है, इसलिये आप जब चाहे मुझे निगल सकती हैं। पृथ्वी को भी माता की संज्ञा प्राप्त है, हजारों-करोड़ों की संख्या में पेड़-पौधे और न जाने क्या-क्या पृथ्वी में से उत्पन्न होते हैं, पनपते हैं, फलते-फूलते हैं लेकिन पृथ्वी कभी उन्हें निगलना तो नहीं चाहती। जीवन देने और लेने का एकाधिकार तो केवल परमेश्वर को ही है।"

संचारी को वाक्-चातुर्य की परमेश्वरी देन प्राप्त थी वह तत्काल बोल उठा—

"तुम ठीक कहते हो अनुभाव भैया, लेकिन पृथ्वी से उत्पन्न होकर फलने-फूलने वाले पेड़-पौधे और अन्य सब वस्तुएँ अन्त में पृथ्वी की ही गोद में तो समा जाती हैं उन्हें इसी में चिर शान्ति मिलती है। मैदान में उत्पन्न होने वाला वृक्ष समुद्र में जाकर तो नहीं डूबता।

अनुभाव ने और भी तीखे स्वर में कहा—"लेकिन पेड़ निर्जीव है, हम सजीव हैं।"

संचारी ने तुरन्त उत्तर दिया—"पहले तो में यह मानने को ही तैयार नहीं कि पेड़-पौधे निर्जीव हैं और यदि तुम यह मानते हो तो पेड़ तथा पृथ्वी की उपमा देने से पहले तुम्हें

बुद्धि से काम लेना चाहिये था। इस समय तुम में देश व समाज-सेवा का स्थाई भाव नहीं वरन् ज्वार उठ रहा है जो तात्कालिक है, अस्थाई है। ऐसा न हो कि तुम्हें कल को अपने किये पर पछताना पड़े और देश व समाज-सेवा केवल झूठा नशा ही साबित हो। इसके अलावा जिसमें सच्चे अर्थों में सेवा का सहज-भाव है वह हर दशा में हर स्थान पर सेवा का अवसर प्राप्त कर लेगा, फौज में जाने या रेड-क्रास 'ज्वाइन' करने की उसे कोई आवश्यकता ही न होगी। माता-पिता, भाई-बहन, सगे-सम्बन्धी भी किसी न किसी रूप में समाज ही के अंग हैं। एक अंग को रुग्ण स्थिति में छोड़कर दूसरे अंग के पोषण करने पर स्वस्थ शरीर की कल्पना तक नहीं की जा सकती। भावना में बहने का अर्थ तर्क व विवेक की उपेक्षा तो नहीं।"

तर्क व वाद-विवाद में परास्त होने पर व्यक्ति या तो हाथ-पैर का जोर अजमाने लगता है, क्रोधित होने लगता है, या फिर कोई मार्ग न होने पर किसी तरह खिसकने का प्रयत्न करता है।

अनुभाव, संचारी की बात का भला क्या उत्तर देता अतः तर्क के अभाव में वह क्रोध में चीख उठा—

"खैर, मुझे तुम्हारे उपदेशों से कोई मतलब नहीं। चाहे तुम लोग कितना ही क्यों न रोको अब मैं रुकने वाला नहीं। मेरे लेखे तो घर भी अब बाहर जैसा है, जहाँ स्वयं की अभिलाषा की कोई कीमत नहीं की जा रही है। मैं जानता हूँ कि कोई भी महान् कार्य करने से पूर्व अनेक व्यवधान पैदा किये

जाते हैं। कारण यह कि मनुष्य इतना स्वार्थी है कि वह दूसरे की उन्नति से जल उठता है। चाहे जो हो मैं परसों......"

अनुभाव का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही नीचे से आवाज आई—

"तार लेना जी, तार"। संचारी ने फौरन जाकर तार लिया। तार विभाव के नाम था जिसका आशय था—

"पापा बहुत अस्वस्थ हैं, मैं परीक्षा में नहीं बैठूँगा, मेरे आने का अभी कोई ठीक नहीं, तुम रजनी और घर का खयाल रखना।

राज

तार पाकर विभाव ने सोचा—"पढ़ाई के दिनों में ही सारी आफतें आने को हैं। घर वाले अलग पीछे पड़े हैं। यही हाल रहा तो 'डीविजन' की कोई आशा नहीं। एक समाज व देश-सेवा के लिये दीवाने हो रहे हैं, एक मैं हूँ कि स्वयं की सेवा के लिये पर्याप्त समय नहीं निकाल पा रहा! किस-किस से मिलूँ। रजनी का क्या ख्याल रखना है। सब ठीक तो है। संचारी से समाचार मिलता ही रहता है। उर्मिला तथा उसकी माँ से मिले भी तीन चार दिन हो गये हैं।"

इस प्रकार की बातें सोचते-सोचते विभाव कुछ झुँझला-सा गया। कुछ देर तक वह पुस्तकें इधर-उधर उलटता-पलटता रहा। एक किताब के बीच में शोभा का चित्र जो कई दिनों से पड़ा था, खसक कर विभाव के सामने आ गिरा।

चित्र को एक दो बार उटल-पलट कर देखा और मन में कहा—

'वैसे लकड़ी तो यह भी 'सो-सो' है लेकिन उर्मिला...।'

इतने में लक्षणा ने चाय का कप विभाव की मेज पर लाकर रख दिया । विभाव ने जल्दी से चित्र किताब के नीचे दबाना चाहा लेकिन लक्षणा न देख लिया !

: १५ :

अपने पापा की अस्वस्थता का समाचार पाते ही राजनारायण तत्काल शिवपुर पहुँचा, लेकिन वहाँ पहुँचने पर उसे विदित हुआ कि ब्रजनाथ का स्वास्थ्य लगभग एक माह से ठीक नहीं था। फर्म के एक दो कर्मचारियों ने बताया कि इस बार जब से वे घर से आये थे तभी से बहुत ही खिन्न तथा व्याकुल से थे। वैसे वे बातचीत तो सदा से ही कम किया करते थे लेकिन गत एक माह से उन्होंने अपने 'प्राईवेट सेक्रेटरी' आनन्द से भी बहुत ही संक्षिप्त बात-चीत की; फर्म के काम में भी वे तटस्थ से रहे, सारा कार्य आनन्द के हाथ में था। स्वयं आनन्द ने कई बार ब्रजनाथ से उनकी उदासीनता का कारण जानना चाहा, लेकिन उन्होंने कभी भी साफ-साफ कोई बात नहीं की। एक बार तो इसी सम्बन्ध में आनन्द के जोर देने पर उन्होंने उसे इस बुरी तरह फटकारा कि अन्त में जब वे शिमला जाने को एक-दम तैयार हो गये, तब भी वह उनसे कुछ पूछने का साहस न कर सका। आनन्द ने गुप्त रूप से राज को बताया कि इन दिनों ब्रजनाथ बाबू शराब का प्रयोग भी दिन-रात करने लगे थे। शिमला जाते समय उन्होंने आनन्द से केवल इतना कहा—

"आनन्द, परसों रात को मैं शिमला जा रहा हूँ। मैं नहीं कह सकता कि कब तक पुनः लौटूँगा। इस बीच में जैसे ही राज यहाँ आये तुम उसे तत्काल शिमला भेज दो। समय-

समय पर तुम लोग घर का समाचार भी पता लगाते रहना। ऐसा न हो कि रजनी या राज को किसी भी प्रकार का कष्ट हो। इसके साथ मेरी अस्वस्थता की बात इधर-उधर सबसे कहने की कोई जरूरत नहीं। समझे।"

इसके उत्तर में आनन्द "जी हाँ, ठीक है।" इतना ही कह सका।

इस प्रकार की बातें सुनकर राज को कुछ चिन्ता होने लगी। किसी भी व्यक्ति से उसे अपने पापा के विक्षुब्ध रहने का कारण पता न लग सका।

वह तत्काल ही शिमला चल दिया।

राज जब अपने पापा से कुछ दिनों बाद मिला करता था तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता होती थी। यह ठीक है कि ब्रजनाथ अपने स्वभाव तथा समय के अभाव के कारण बहुत कम समय रजनी व राज के पास व्यतीत कर पाते थे। लेकिन उन्हें जब कभी भी अवसर मिलता था तो वे अपने बच्चों की सब इच्छाएँ पूरी करने का प्रयत्न करते थे। राज के सम्बन्ध में वे सब कुछ जानते थे, उन्हें यह भी पता था कि राज उनके धन तथा नाम दोनों का उचित निर्वाह न कर पायेगा, लेकिन उन्होंने उसके आचरण के विरुद्ध कभी कोई शिकायत नहीं की। जब भी राज ने जो माँगा उन्होंने दिया। परिणामतः राज दिन-प्रतिदिन बिगड़ता गया लेकिन ब्रजनाथ के ऐसे स्वभाव के कारण दोनों में कभी मत-भेद अथवा कहा-सुनी नहीं हुई। रजनी अपने पापा को जितना स्नेह करती थी उससे कहीं अधिक उनके प्रति उसका आदर-भाव था।

दोनों भाई-बहन अपने पापा के स्वभाव के सम्बन्ध में परस्पर कई बार बात-चीत करते थे लेकिन उन्हें भी कोई शिकायत नहीं थी। हाँ, दोनों को इस बात को सोचकर बहुत आश्चर्य होता था कि जब कभी वे अपनी माँ के सम्बन्ध में पापा से कोई प्रश्न करते तो वे या तो उसे टाल देते या बात ही समाप्त कर देते थे। कभी-कभी झुंझला भी जाते थे। इस कारण चाहते हुए भी वे अपनी माँ के सम्बन्ध में कुछ न जान सके। जब दोनों भाई-बहन समझदार हो गए तब उन्होंने स्वयं ही इस बात को जानने के लिये विशेष जोर देना छोड़ दिया था। राज की अपेक्षा रजनी को अपनी माँ की बहुत याद आती थी। लेकिन उसने कभी किसी से इस सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं।

राज जब अपने पापा के पास पहुँचा तो वे विश्राम कर रहे थे। राज ने देखा कि उनका स्वास्थ्य बहुत गिर गया था। उसने जब ब्रजनाथ से यकायक शिमला आने का कारण पूछा तो वे एक दीर्घ निश्वास लेते हुए बोले—

"तुम्हें पता है बेटा मैं गत कई वर्षों से 'हार्ट-ट्रब्ल' का रोगी हूँ। पिछले दिनों में तो यह तकलीफ इतनी बढ़ गई थी कि मुझे जीवन की कोई आशा ही नहीं रह गई थी। डाक्टरों ने मुझे निश्चिन्त रहने तथा जलवायु परिवर्तन के लिये पहाड़ी प्रदेश में जाने की सलाह दी और मैं शीघ्र ही यहाँ चला आया। मैं जानता हूँ कि मेरे यहाँ आने से फर्म के काम में बहुत नुक-सान हो रहा है, सब अपनी मनमानी कर रहे हैं लेकिन मैं असमर्थ हूँ। तुमसे यह भी छिपा नहीं कि मैं 'ड्रिंक' करने का

आदी हूँ। चिन्ता को कम करने के लिये न चाहते हुए भी मुझे बहुत अधिक मात्रा में शराब का उपयोग करना पड़ रहा है। तुम इसे चाहे अच्छा कहो या बुरा, मेरे पास इसका दूसरा कोई इलाज नहीं। मैं जब तुम्हारी आयु का था तब से यह समझता रहा था कि यदि मनुष्य के पास रुपया है, जमीन-जायदाद है तो वह सदा खुश रह सकता है। उसे और किसी चीज की आवश्यकता नहीं। लेकिन आज मैं अपनी इस भूल पर पछता रहा हूँ।"

राज चुपचाप गम्भीरतापूर्वक अपने पापा की बात सुन रहा था। कुछ क्षण ठहरकर उन्होंने आगे कहना आरम्भ किया—

"खैर, छोड़ो इन बातों को। समय आने से पहले यदि मनुष्य अपनी गलती समझ सके तो शायद वह कभी गलती करे ही नहीं। मैं अपनी चिन्ता का भार तुम्हारे पर नहीं डालना चाहता। लेकिन एक-दो प्रश्न ऐसे हैं जिनसे तुम्हारा व्यक्तिगत सम्बन्ध है इसलिए मैं उन्हें तुम्हारे सामने रखने को उत्सुक हूँ!"

राज कुछ घबरा-सा गया लेकिन अपने को संयत करता हुआ बोला—

"हाँ, हाँ, आप जरूर प्रश्न कीजियेगा। मैं अपनी समझ के अनुसार उत्तर अवश्य दूँगा।"

ब्रजनाथ पलंग पर उठकर बैठ गए। उन्होंने ब्रांडी का एक पैग पिया, फिर सिराहने का सहारा लगाते हुए बोले—

"तुम जानते हो बेटा, कि मैं एक माह में बड़ी मुश्किल

से एक-दो दिन घर टिक पाता हूँ। घर पर भी मुझे हमेशा कोई-न-कोई काम लगा ही रहता है। इस कारण आने-जाने वालों के सम्बन्ध में तथा घर की व्यवस्था का मुझे कोई निश्चित ज्ञान नहीं। खैर जो हो, रजनी के पत्रों से मुझे उसकी सहेली उर्मिला के सम्बन्ध में कुछ जानकारी अवश्य है। तुम बता सकोगे यह कौन लड़की है ?

राज ने बड़ी सतर्कता से उत्तर दिया—"अरे पापा, उर्मिला तो गत दो वर्षों से रजनी के निकट सम्पर्क में है, कई बार घर आ चुकी है। मुझे भी जानती है, आपसे भी एक बार मिल तो चुकी है। रजनी की क्लास-फैलो है।"..."इसके पिता क्या करते हैं, उनका क्या नाम है ?" ब्रजनाथ बीच में ही प्रश्न कर बैठे। राज ने उत्तर दिया—

"वैसे इस सम्बन्ध में मुझे निश्चित रूप से कुछ नहीं पता लेकिन सुना है कि उर्मिला के पिता ने उर्मिला के जन्म के लगभग एक-दो वर्ष बाद ही किसी कारणवश उर्मिला की माँ को छोड़ दिया था। यह भी सुना जाता है कि उन्होंने दूसरा विवाह कर लिया है। बड़ी कठनाई से उर्मिला की माँ उसका पालन-पोषण कर रही है। बेचारी को अब जाकर एक हाईस्कूल में अध्यापिका का स्थान मिला है। एक-दो बार तो ऐसी स्थिति हो गई थी कि रजनी ने उर्मिला की फीस भरी। कई बार रुपये भी उधार दे चुकी है। दोनों सहेलियों में बहुत प्रेम है।"

ब्रजनाथ सुनते-सुनते और भी गम्भीर हो गये। बोले—"उर्मिला की माँ को इस स्कूल में आये शायद एक-दो वर्ष हो

हुए हैं। पहले वह शहर से बाहर किसी प्राइमरी स्कूल में पढ़ाती थी।"

"जी हाँ, आपका कहना ठीक है।"

"उर्मिला की क्या आयु है ?" ब्रजनाथ ने बड़ी उत्सुकता से प्रश्न किया।

जी, आयु के सम्बन्ध में निश्चित रूप से तो मैं कुछ नहीं कह सकता—यही १८-१९ वर्ष के लगभग होगी। रजनी भी तो इसी के आस-पास है।

"और उर्मीला की माँ तीस-चालीस के बीच में होगी।" ब्रजनाथ ने कहा।

"हाँ, मेरा भी यही ख्याल है, लेकिन आप..." राज का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही ब्रजनाथ ने तत्काल प्रश्न किया—"माँ का नाम क्या है ?"

"सर्वदा" राज ने उत्तर दिया।

ब्रजनाथ एक मिनिट तक राज की ओर एकटक ताकते रहे। फिर तुरन्त उनके मुँह से निकल पड़ा—'सर्वदा'।

अपने को शीघ्र ही संयत करते हुए वे बोले—"खैर जाने दो। मैंने तुम्हें यह कहने को बुलाया है कि मैंने तुम्हारा विवाह देहली के सेठ श्याम नारायण की लड़की से करने का विचार किया है। मुझे आशा है कि तुम्हें कोई आपत्ति न होगी। इतना बड़ा सेठ है कि तुम्हें भविष्य में कभी किसी वस्तु के लिये मुँह न खोलना पड़ेगा।"

राजनारायण आश्चर्यचकित होकर बोला—"लेकिन पापा पहले तो रजनी के विवाह की बात होनी चाहिए। मेरी

क्या जल्दी है। वैसे तो आप जो कहेंगे वही होगा लेकिन मुझे कुछ सोचने का अवसर दें तो बड़ा अच्छा होगा। इस सम्बन्ध में रजनी से भी तो सलाह लेनी चाहिए। लेकिन आप इतने परेशान से क्यों हो रहे हैं। नौकर को बुलाऊँ, दवा दूँ ?"

"नहीं, तुम जाओ आराम करो। मुझे केवल यही पूछना था। तुम जल्दी ही घर जाओ और देहली वाले सम्बन्ध में अपना निश्चित मत सूचित करो। रजनी के विवाह की चिन्ता तुमसे अधिक मुझे है। फर्म के काम में अधिक हानि न हो इस कारण भी तुम्हें यहाँ से जल्दी ही चले जाना चाहिए। रजनी की परीक्षा भी समीप है। पता नहीं मुझे यहाँ कब तक रहना होगा।"

कल रात जब शिमला से लौटकर राज घर आया तो उसे विदित हुआ कि इन सात दिनों में जब से राज का तार विभाव को मिला है। वह केवल एक दिन घर आया, संचारी से कुशल समाचार अवश्य पुछवाता रहा। राजनारायण को कुछ क्षोभ हुआ लेकिन यह सोचकर कि विभाव परीक्षा की तैयारी में लगा है वह उससे बहुत कम मिलता और घर न आने-जाने की शिकायत भी उसने नहीं की। रात को जब राज सोने जाने लगा तो रजनी ने कहा—

"भैया, एक बात तो मैं कहना ही भूल गई। खेद की बात है कि एक-दो दिन हुए उर्मिला के किसी सम्बन्धी की, जो दूर के रिश्ते में उर्मिला के मामा लगते थे, अचानक मृत्यु हो गई कल-परसों में सर्वदा-मौसी वहाँ जाने को हैं।"

राज ने सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए कहा—

"यह तो तुमने बुरी खबर सुनाई। तुम लोगों की परीक्षा भी आरम्भ होने को है। मैं कल ही उनके घर जाऊँगा।"

इतना कहकर राज सोने चला गया। अपने पापा की अस्वस्थता का हाल सुनकर रजनी व्याकुल हो गई। उस रात उसे नींद नहीं आई।

: १६ :

विद्यार्थी जीवन की मधुरता की प्रशंसा कई लोगों के मुँह से सुनी जाती है। लेकिन परीक्षा के लगभग एक माह पूर्व से लेकर परिणाम घोषित होने तक का समय किस प्रकार व्यतीत होता है इसका अनुमान वही व्यक्ति लगा सकता है जो एक बार बड़ी तत्परता से परिश्रम कर परीक्षा में बैठा हो। ज्यों-ज्यों परीक्षा की तथा परीक्षा देने के पश्चात् परिणाम घोषित होने की तिथि समीप आती जाती है तदनुसार ही चिंता भी बढ़ती जाती है। इन दिनों में कई लोगों में आस्तिकता की भावना इतनी प्रखर हो उठती है कि कह नहीं सकते। ज्योतिषियों को भी यदा-कदा लाभ होने लगता है, समाचार पत्रों का क्रय-विक्रय भी चौगुना हो जाता है। परीक्षा-परिणाम के मौसम में मन्दिरों में प्रसाद की मात्रा अपने-आप बढ़ने लगती है।

वैसे तो विभाव के प्रथम प्रश्न-पत्र के अतिरिक्त अन्य सभी प्रश्न-पत्र अत्यन्त सन्तोषजनक हो रहे थे तथापि उसे उत्तम श्रेणी के सम्बन्ध में कभी-कभी शंका होने लगती थी। अतः उसने अपने कमरे में टंगे शिव के चित्र को झाड़-पोंछ कर साफ किया और अब नित्य स्नान आदि से निवृत्त होने के बाद लगभग पाँच-दस मिनिट वह उपासना में लगाना नहीं भूलता था।

विपत्ति की आशंका मात्र मनुष्य को परमेश्वराधीन बना

देती है, लेकिन सुख-समृद्धि के काल में कइयों को परमेश्वर का नाम-मात्र ही अरुचिकर अनुभव होता है।

आज प्रात:काल जब राज सोकर उठा तो वह अपने को अस्वस्थ-सा अनुभव कर रहा था। रजनी परीक्षा की तैयारी में लगी थी। अत: उसने राज से कहा कि वह अब मिस मँजू को एक माह का अवकाश दे दे। राज ने इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया।

सारी रात राज अपने पापा तथा उनकी विचित्र बातों और व्यवहार के सम्बन्ध में सोचता रहा। उसने अनुभव किया कि अपने विवाह के सम्बन्ध में उसे अब सक्रिय होना पड़ेगा।

प्रात:काल राज शीघ्र तैयार होकर जब सर्वदा के क्वार्टर पर पहुँचा तो उर्मिला ने उसका स्वागत किया। सर्वदा पड़ौस में किसी काम से गई हुई थी। राज ने उर्मिला से हँसते हुए पूछा—

"क्यों उर्मिला जी, क्या हाल हैं, आपकी ममी कहाँ हैं? मैं तो पन्द्रह-बीस दिनों से बाहर था। रजनी से आपके मामा जी के देहान्त की अशुभ सूचना पाकर बहुत खेद हुआ।"

उर्मिला ने कुछ गम्भीर होकर उत्तर दिया—"जी हाँ, मामा जी का और हमारा सम्बन्ध यद्यपि दूर का था तथापि उनकी हम पर सदा बड़ी कृपा रही। उन्होंने आरम्भ से हर क्षेत्र में यथाशक्ति हमारी सहायता की। लेकिन न जाने क्यों परमेश्वर ने एकमात्र सहारा भी हमसे छीन लिया। ममी बहुत ही दु:खी हैं। इधर मेरी परीक्षा भी निकट आ रही है। उनका मामा जी के यहाँ जाना बहुत ही अनिवार्य है। बड़ी टेढ़ी समस्या आ

खड़ी हुई है। कुछ समझ में ही नहीं आता। आप थोड़ी देर बैठियेगा, मैं ममी को बुला लाती हूँ।"

राज ने देखा कि उर्मिला के नेत्र बात कहते-कहते सजल हो गये। वह उसके समीप अपनी कुर्सी खींचता हुआ बोला—

"नहीं-नहीं, मुझे कोई जल्दी नहीं है, आप बैठिए तो। भगवान् ने चाहा तो सब ठीक होगा, आप इतनी व्याकुल न हों। मेरा इस वर्ष परीक्षा में बैठने का कोई इरादा नहीं है। आपने अपनी फीस आदि तो जमा करा दी होगी।

"जी......जी मैंने तो नहीं......रजनी ने ही अपनी फीस के साथ मेरी फीस...भी... दे दी थी...।"

"ठीक है, ठीक है मैं भी यह सोचता था।" राज ने आगे कहना आरम्भ किया, "मेरा विचार यह है कि......"

राज की बात समाप्त होने से पूर्व ही सर्वदा ने प्रवेश किया। उसका चेहरा उदास था, लगता था कि गत दो-तीन दिन से वह पूरी नींद भी न ले सकी थी। सर्वदा राज की कार बाहर खड़ी देख कर समझी थी कि रजनी आई होगी लेकिन राज को बैठा देख वह ठिठक गई।

सर्वदा को देखते ही राज कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और बोला—

"आइये, ममी जी मैं तो आपकी ही प्रतीक्षा कर रहा था। सच्च कहता हूँ आपके भाई साहब की मृत्यु की सूचना पाकर मुझे बहुत ही दुःख हुआ। लेकिन अब हो ही क्या सकता है। आप लोग भी व्यर्थ दुःखी न हों।"

सर्वदा की आँख में आँसू झलक पड़े। वह भरे गले से बोली—

"क्या करें भैया, विपत्ति एक साथ आती है। मेरा वहाँ जाना बहुत ही आवश्यक है। उधर उमा की परीक्षा का प्रश्न है।"

"लेकिन आप इतनी चिन्तित तथा निराश क्यों हो रही है।" राज तुरन्त बोला, "आखिरकार रजनी भी तो परीक्षा देगी। आप आज ही चली जायें और उर्मिला जी को हमारे घर छोड़ दें, कोई भी कष्ट न होगा। आप निश्चिन्त रहियेगा…।"

सर्वदा ने कुछ संतोष के साथ कहा—"आप लोगों की तो वैसे ही बहुत कृपा रही है। अब और कष्ट कहाँ तक दूँ। रजनी भी तीन-चार दिन से इसी बात के पीछे पड़ रही है…लेकिन…।"

"लेकिन-वेकिन क्या!" राज ने तुरन्त उत्तर दिया, "आपको हमारी बात माननी ही होगी। वरना आप उर्मिला जी को कहाँ छोड़ेंगी? यहाँ अकेले रहना तो ठीक नहीं। मुझे विश्वास है कि आप मेरी बात नहीं टालेंगी। आपके मना करने पर रजनी को तो बहुत ही खेद होगा।

"अच्छा जैसी आपकी इच्छा। वैसे आपको कष्ट तो बहुत होगा, लेकिन दूसरा कोई रास्ता भी तो नहीं। यदि परीक्षा का सवाल न होता तो इसे भी साथ ले जाती।"

इतना कहकर सर्वदा अपने स्थान से उठी और चाय बनाने की तैयारी करने लगी। लेकिन राज शीघ्र ही उठ खड़ा हुआ और बोला—

"आप कोई तकलीफ न कीजिए। मुझे आवश्यक काम से

हास्पिटल जाना है। तो शाम को मैं आपको स्टेशन तक छोड़ आऊँगा और लौटते समय उर्मिला जी को साथ ले लूँगा। रजनी भी शायद साथ हो। क्यों ठीक है न।"

उत्तर में सर्वदा ने सिर हिला दिया।

रजनी और राज रात को सर्वदा को छोड़ने स्टेशन गये। राज ने पहले से सीट रिजर्व करवा दी थी। रात को उर्मिला उसके कपड़े और अन्य आवश्यक वस्तुएँ लेकर दोनों लगभग १२ बजे अपने घर आये। रजनी उर्मिला के साथ बहुत प्रसन्न थी।

रात को जब बिस्तरे पर पड़े-पड़े राज को नींद नहीं आई तो वह सोचने लगा—

'इसी का नाम संयोग तथा भाग्य है। रजनी जैसी समझ-दार बहन भगवान् सब को दे। मेरे घर आने से पहले ही उसने सर्वदा को मना लिया था। मेरा काम उसके कारण कितना सरल हो गया। आज भी बेचारी मुझ अकेले को ही स्टेशन भेज रही थी। आज से पहले भी उसने मुझे और उर्मिला को मिलने-जुलने का कितना अवसर दिया। और यह उर्मिला तो उर्मिला ही है। इसको देखते ही मैं सब कुछ भूल जाता हूँ। परमेश्वर भी किसी को स्वरूप देता है तो खुल कर देता है। इन दोनों सहेलियों में परस्पर शायद मेरे और विभाव से भी अधिक स्नेह है। हो भी तो क्यों न। दोनों मामलों में बात एक ही है। मुझे क्या जरूरत कि मैं विभाव की प्रत्येक बात सदा मानता रहूँ, उसे कभी किसी वस्तु का अभाव न होने दूँ। मेरे और भी तो मित्र हैं। सबको मैं किताबें

क्यों नहीं दिलाता फिरता। रजनी के 'बर्थ डे' पर विभाव देवता ही क्यों आमन्त्रित किये जाते हैं। ऐसे ही चलती है दुनिया। सबका एक-दूसरे से स्वार्थ है।'

'अब रजनी को ही देख लो। स्वयं से ज्यादा वह उर्मिला पर रुपया व्यय करती है। आये दिन अच्छी-से-अच्छी साड़ी भेंट की जाती है। और भी कई लड़कियों के मामा-काका मरते रहते हैं। सबको क्यों नहीं आश्रय दिया जाता। सहानुभूति का दरिया भी मौसम के अनुकूल ही बहता है।'

राज ने करवट बदली और फिर सोचने लगा—'लेकिन मैं रजनी की साधना में पूरा सहयोग नहीं दे रहा हूँ। विभाव के घर वाले कई वर्षों से शादी-शादी चिल्ला रहे हैं कहीं बेचारा फँस गया तो बाद में रजनी का क्या होगा। इसके अलावा फर्म का काम भी विभाव जितनी योग्यता से कर सकता है और कोई नहीं कर सकता। मैं भी कितना मूर्ख हूँ। सब जानते-बूझते भी बाहर से लौटे हुए दो दिन होने को आये विभाव से मिलने तक नहीं गया। मुझे तो अपनी पड़ी है। उर्मिला के सम्बन्ध में भी तो मुझे विभाव को अपने मन की बात बतानी चाहिए। वह सुनकर खुश होगा, शादी के मूड में आयेगा और तब रजनी के विवाह की बात भी 'फिट्' बैठ जायेगी।'

इतना सोचते-सोचते राज खुशी से नाच उठा। उसने उठ कर घड़ी देखी तो साढ़े तीन बजे थे। वह उठकर इधर-उधर टहलने लगा। न जाने कितनी तरह की बातें उसके हृदय में उथल-पुथल मचाने लगीं। इसी समय रजनी 'बाथ रूम' से

लौट रही थी, राज को घूमते हुए देख कर बोली—

"क्यों भैया, नींद गायब हो गई, चक्कर काट रहे हो न। कोई कहानी सुनाऊँ क्या ?"

राज चौंक गया लेकिन हँसता हुआ बोला—"झूठी कहीं की। मैं तो अभी उठा हूँ, पानी पीने नीचे गया था। ज्यादा बात बनाई नहीं कि चोटी पकड़ कर मैंने नीचे फेंका नहीं।"

रजनी हँसते हुए चट से बोल पड़ी—"अरे नीचे फेंकने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। मैं दाल-भात में मूसलचन्द क्यों बनने लगी। पर अभी तो सोने की कोशिश करो।"

यह कहती हुई रजनी हँसती हुई सोने चली गई। राज ने भी निश्चय किया कि वह यथाशीघ्र विभाव से मिल कर तत्काल सारी बातें तय करेगा। यदि विभाव के घर वालों ने 'इण्टर कास्ट मैरिज' का विरोध किया तो कोर्ट सबके लिए खुला है। पापा को मैं विवाह के बाद ही खबर दूँगा। भगवान् ने चाहा तो मेरा काम भी साथ-ही-साथ अपने-आप बन जायेगा। एक-साथ दो ग्रेंड टी पार्टी दे डालूँगा। पापा भी विवाह होने के बाद क्या करेंगे। उन्हें तो स्वास्थ्य-सुधार करने दो। मैं भी यहाँ समाज-सुधार करने में कोई कसर उठा न रखूँगा।

राज जानता था कि व्यक्ति की असमर्थता का लाभ कैसे उठाया जाता है। अतः सर्वदा की सम्मति का प्रश्न उसके दिमाग में उठता ही कैसे। सारी रात सोचते-विचारते ही व्यतीत हुई। प्रातःकाल राज बहुत प्रसन्न था।

: १७ :

ऐसा लगता है कि बुढ़ापे तथा चिन्ता का परस्पर गहरा सम्बन्ध है, चिन्ता से बुढ़ापा और भी कटु हो जाता है और बुढ़ापे में असमर्थता के कारण, मनुष्य की चिन्ताएँ विकराल रूप धारण कर लेती हैं।

सुलोचना बार-बार सोचती कि व्यक्ति को अपनी ही औलाद से परास्त होना पड़ता है, ऐसा क्यों ? विभाव के व्यवहार से वह पहले से ही क्षुब्ध थी और अब घर से लड़-झगड़ कर अनुभाव के 'आरमी' में जाने के कारण उसकी चिन्ता और भी बढ़ गई। संचारी अभी स्वयं ही दूसरों पर आश्रित था। बाल्यकाल से ही वह निराशावादी तथा शीघ्र ही जीवन से हताश होने वाला था। अभिधा भी समयानुकूल बड़ी होती जा रही थी। अधीर दूसरे की धरोहर तथा स्मृति-प्रतीक होने से अधिक स्नेह का अधिकारी था ! उधर अपने पति श्रीनाथ की आयु का विचार कर भी सुलोचना को निराशा ही होती थी। वैसे भी अब उनकी आयु इतनी हो गई थी कि अब उनसे गृहस्थी के भार-निर्वाह की आशा ही नहीं होनी चाहिये, वे तो परिस्थितियों वश बाध्य थे।

इन सब समस्याओं के कारण सुलोचना पूर्ण रूप से स्वस्थ न हो पाती थी। विभाव व संचारी के परीक्षा में लगे होने के कारण बाहर का काम भी सुलोचना पर आ पड़ा था ! इससे वह अधिक अस्वस्थ हो गई।

आखिरकार चाहे जो हो सुलोचना थी तो माँ। रक्त पानी से भी पतला होता है, अतः इसका सम्बन्ध अपना प्रभाव दिखा कर ही रहता है।

परीक्षा से निवृत होने के पश्चात् विभाव माँ के उपचार में जुट गया। वह संचारी के अध्ययन में बाधा नहीं होने देना चाहता था! माँ का स्वास्थ्य तो कुछ सम्भल गया लेकिन विभाव को राज से मिलने का अवसर न मिल सका। एक-दो दिन तक तो उसे राज के बाहर से लौटने की सूचना ही न मिल पाई, फिर जब राज आया तो एक प्रश्नपत्र शेष था, और अब परीक्षा से निवृत होने पर माँ की बीमारी के कारण वह राज से न मिल सका! इन सब कारणों से चार-पाँच दिन और टल गये!

राज को आजकल बाहर घूमने-फिरने में उतना आनन्द नहीं आता था जितना घर में—रजनी के आस-पास। शाम को वैसे तो तीनों ही कार से या पैदल सैर करने जाते थे लेकिन एक-दो दिन बीच में जब रजनी का 'मूड' न आता या तबियत खराब हो जाती तो उर्मिला और राज ही घूमने-फिरने चले जाते थे। एक दिन शहर में घूमते-घूमते राज का सिनेमा जाने का मूड आ गया तो वह उर्मिला के लाख मना करने पर भी न माना।

दोनों समय भोजन भी तीनों साथ-साथ करते थे। रजनी को अपने भैया के अधिकतर घर रहने की नई वृत्ति को देखकर आश्चर्य के स्थान पर प्रसन्नता होती। आश्चर्य उस समय होता

है जब व्यक्ति लाख प्रयत्न करने पर भी किसी बात का कारण नहीं जान पाता ।

राज ने बड़ी मधुरता से मिस मँजू को यह बात समझा दी थी कि वे पन्द्रह-बीस दिन आने का कष्ट न करें चूंकि रजनी अपनी परीक्षा की तैयारी में व्यस्त है। वैसे एक-दो बार राज मिस मँजू के घर जाकर या किसी भी स्थान पर मिल अवश्य लेता था। एक बार तो मँजू ने राज को अपनी कसम दिला दी, इस कारण रजनी के लाख मना करने पर भी उसे एक मित्र से फर्म सम्बन्धी कार्य का बहाना कर जाना ही पड़ा।

आज शाम को चाय के बाद राज अपने कमरे में बैठा हुआ विभाव की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने फोन से विभाव को मिलने का समय दिया था। रजनी और उर्मिला अध्ययन में व्यस्त थीं। इसी समय विभाव ने चुपचाप घर में प्रवेश किया। राज तैयार होकर निकल ही रहा था। विभाव को देखते ही राज बोला—

"हल्लो विभाव, क्या हाल है, पेपर्स तो तूने बहुत अच्छे किये होंगे। क्या कहूँ यार, तेरे इम्तहान के कारण मेरे दिल का भार इतना बढ़ गया कि बस······।"

विभाव ने फौरन उत्तर दिया—"राज बात बनाने की तेरी कोई नई आदत नहीं। मैं सब जानता हूँ। एक-दो बार मिस मँजू से 'वायलन' सुन लेता तो दिल का भार एक-दम हल्का हो जाता। तुझे क्या कहूँ। दिल के भार को हल्का करने का इलाज तो मुझे नहीं आता, इसी कारण तेरे चारों ओर चक्कर

काटता रहता हूँ। खैर, कोई बात नहीं, आज दोनों के दिल हल्के हो जायेंगे।"

दोनों बड़ी खुशी-खुशी गाड़ी में बैठ गये। एक बढ़िया से 'रेस्टूरेण्ट' में जाकर दोनों ने नाश्ता किया। इधर-उधर के अनेक विषयों पर चर्चा करते हुए दोनों शहर के बाहर निकल गये। वहाँ जाकर राज ने गाड़ी को पैट्रोल स्टेशन पर ही छोड़ दिया और वे दोनों—पास ही एक तालाब के किनारे आकर बैठ गये।

राज कुछ गम्भीर होकर बोला—"विभाव, इस वर्ष तेरी पढ़ाई का काम समाप्त हुआ, तेरा सेकिण्ड डिवीजन 'श्योर' है। अब बोल तेरा क्या विचार है ?"

विभाव तुरन्त बोल उठा—"भगवान ही जाने क्या होगा, एक पेपर तो बिगड़ गया है। यार, कभी-कभी तो बड़ी निराशा होती है। यदि पास भी हो गया तो नौकरी का सवाल है। आगे करना क्या है। नौकरी करनी है।"

विभाव की बात समाप्त होते-होते ही राज ने उसकी पीठ पर एक घूँसा जमा दिया और भारी आवाज करके बोला—

"विभाव, मैं तो समझ रहा था कि इन पन्द्रह-बीस दिनों में तेरी अक्ल काफी बढ़ गई होगी लेकिन बात उल्टी मालूम पड़ती है। देख सामने ही तालाब है, अपन किनारे पर बैठे हैं, छलाँग लगा जा तो सारी निराशा और नौकरी की चिन्ता एकदम हमेशा के लिये साफ हो जायेगी और मेरा भी······

विभाव कुछ झुँझला कर बोला—"तुझे तो जब देखो मजाक सूझता है। मैं 'सीरियसली' बात कर रहा हूँ और आप

अपनी औंधी-सीधी हाँके जा रहे हैं। छलाँग तो गम के मारे लगाते हैं।"

राज ने उत्तर दिया—"तेरा चाहे जो डिवीजन आये तेरी नौकरी 'श्योर' है। तुझे मालूम है कि पापा गत एक माह से अस्वस्थ होने के कारण जलवायु परिवर्तन के लिये शिमला गये हुए हैं, मैं दस-पन्द्रह दिन उन्हीं के पास रह कर आया हूँ। मैंने सब बात कर ली है। आप चाहें तो कल से ही आफिस का चार्ज ले लें और इसी समय से अपने नाम के आगे मैनेजिंग डायरेक्टर, शब्द जोड़ दें। आपसे पहले मुझे आपकी नौकरी की चिन्ता थी। लेकिन आपको समझाने वाला बेवकूफ ही ··"

"हाँ सो तो आप हैं ही" विभाव ने उत्तर दिया लेकिन-लेकिन········।"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं। अभी तो तुमने एक बात ही सुनी है, अब दूसरी सुनो। लेकिन बोल—नौकरी की बात फिर तो मेरे सामने नहीं कहेगा।"

विभाव गम्भीर होकर बोला—"वैसे मैंने आज तक कभी तेरा कहा नहीं टाला। लेकिन मैं तेरे अहसानों से इतना दबता जा रहा हूँ कि—

राज बीच में ही गम्भीर स्वर में बोल उठा—"विभाव, तुम मुझे नीचा दिखाना चाहते हो। पहले भी मैंने तुमसे इस तरह की बातें करने को सौ दफ़ा मना किया है, प्रार्थना की है। मैं स्वयं जानता हूँ कि तुमने रजनी की सफलता के लिये कितना प्रयत्न किया है, फर्म तथा बसों के सम्बन्ध में भी जब कभी कोई समस्या आई तुमने सुलझाई। आज तक मैं शायद

इण्टर में ही पड़ा रहता लेकिन तुम्हारे सहयोग से मैं आज एम० एस-सी० प्रीवियस में आ पहुँचा हूँ। यदि इस वर्ष भी 'अपीयर' होता तो गिरते-पड़ते अपना थर्ड डीविजन तो आ ही जाता। मैं सब समझता हूँ। लेकिन अहसान की बात मैंने तेरे मुँह पर कभी नहीं कही। अहसान की बात को मुँह पर करने को मैं चापलूसी मानता हूँ, यदि कोई व्यक्ति किसी के उपकारों को मन में अनुभव करता है तो इससे बढ़कर कृतज्ञता और क्या हो सकती है।"

विभाव को लगा कि वास्तव में वह अनुचित बात कह गया, जिससे राज को दुःख हुआ। अतः बड़े ही सरल स्वर में बोला—

"मेरा यह मतलब नहीं था राज, तू जरा गलत समझा। मैं स्वयं मानता हूँ कि यदि दो व्यक्तियों में सच्ची मित्रता है, सहज अनुरक्ति है, स्वाभाविक स्नेह है तो अहसान की बात कभी उनके मन में आ ही नहीं सकती। अपने पर ही कोई क्या अहसान करेगा। मेरा मतलब बिल्कुल भी ऐसा न था। हाँ शब्दों के चुनाव में अवश्य जल्दी कर बैठा। खैर, तू तो अपनी दूसरी बात कह, ताकि मुझे भी कुछ कहने का अवसर मिले।"

राज विभाव के और भी निकट आ गया और उसके कन्धे पर बड़े स्नेह से हाथ रखता हुआ बोला—

"विभाव मुझे बात तो कहनी है, लेकिन तू वादा कर कि निराश न करेगा?"

विभाव कुछ देर के लिये सोच में पड़ गया। अपने को संयत करता हुआ बोला—

"आज तक तो कभी ऐसा हुआ नहीं है, लेकिन यह बता कि अभी यदि मैं ही अपनी बात कहने से पहले तुझे उसे पूरी करने का वादा करने को कहूँ तो बिना बात जाने तू भी वादा न कर सकेगा। यही बात मेरे साथ, सबकें साथ लागू होती है। हमें एक-दूसरे पर विश्वास होना चाहिए विश्वास। और इसमें कम-से-कम मुझे तो दोनों ओर से कोई सन्देह नहीं।"

राज एक मिनिट तक चुपचाप विभाव की ओर देखता रहा फिर कुछ उत्सुकता के भाव से बोला—"मुझे विश्वास है कि तुझे मेरी बात सदा की तरह आज भी स्वीकार होगी।" विभाव के हाथ को थामते हुए राज ने कुछ याचना के स्वर में कहना आरम्भ किया—

'एक माह से पापा की तबियत बहुत ही खराब है। 'हार्ट ट्रब्ल' उनका पुराना रोग है। न जाने वे कब हम से हमेशा के लिये मुँह मोड़ लें। मेरी अपेक्षा रजनी पर उनका स्नेह अधिक है। मेरे लिये भी रजनी ही सब कुछ है। तुझसे विभाव कुछ भी छिपा नहीं है। मेरा अनुरोध है कि…कि… रजनी और तुम हमेशा के लिये…एक…हो जाओ।" मैं तेरे से योग्य वर की कल्पना ही नहीं कर सकता, फिर रजनी भी…।

"राज की बात सुनते ही विभाव के चेहरे का रंग उड़ गया, वह कुछ सोच-समझ ही न सका। लेकिन किसी तरह सम्भल कर बोला—

"राज तुम्हें विश्वास होना चाहिये कि रजनी को मैंने

सदा बहन की तरह माना है, वैसा ही व्यवहार किया है। मेरे लिये वह बिल्कुल अभिधा के समान है। मैं स्वप्न में भी कभी इस बात की कल्पना नहीं कर सकता। आज भी चाहे जो हो रजनी मेरी सगी बहन के समान ही है।"

राज ने बात को समझाने की कोशिश करते हुए कहा—

"विभाव, विवाह के पहले सभी लड़कियाँ बहन होती हैं, उन्हें बहन की दृष्टि से देखा जाता है लेकिन आगे चलकर उनमें से ही किसी न किसी के साथ विवाह हो जाता है। ऐसा हमेशा से होता आया है, हो रहा है और अनन्त काल तक होता रहेगा। मेरे से यह भूल अवश्य हुई कि मैं आज तक तुझे इस बात का संकेत न दे सका। मेरा अनुमान था कि रजनी ने अपनी भावना स्वयं ही व्यक्त कर दी होगी, और तुझे भी कुछ भान हो गया होगा। लेकिन जहाँ तक मेरा विश्वास है मैं कह सकता हूँ कि मेरा सम्बन्ध अभी कहीं निश्चित नहीं हुआ है। यदि ऐसी कोई बात हो तो उस पर भी विचार किया जाय।"

विभाव एक-दो सेकिण्ड तक मौन रह कर अत्यन्त ही गम्भीर ध्वनि में बोला—

"मैं स्वयं ही इसी सम्बन्ध में तेरी सम्मति लेना चाहता था, लेकिन कभी संयोग ही न बैठा। तुझे राज यह तो मालूम है ही कि ब्राह्मण, बनिये मेरे लिये सब समान हैं। तू यह न समझना कि जात-पाँत के चक्कर में पड़कर या समाज-भीरु होने से मैं तुझे टाल रहा हूँ। नहीं, ऐसा बिल्कुल भी नहीं। लेकिन तुझे सम्भवतः पता नहीं कि उर्मिला की माँ को मैं पहले

ही आश्वासन दे चुका हूँ। मुझे यह स्वीकार करने में भी कोई आपत्ति नहीं कि मैं उर्मिला को चाहता हूँ। मुझे इस बात का भी पर्याप्त संकेत मिल चुका है कि उर्मिला तथा उसकी माँ को भी इस सम्बन्ध में कोई आपत्ति न होगी। मैं तेरी सलाह की··· ।"

राज आगे न सुना सका। वह तुरन्त विभाव से अलग होता हुआ बोला—

"विभाव मैं नहीं कह सकता कि मैं क्या सुन रहा हूँ। मुझे स्वप्न में भी तुमसे ऐसी आशा न थी। अपने से अधिक मैंने तुम पर विश्वास किया। पहले तो तुमने बहन का बहाना कर रजनी को ठुकराया और अब तुम उर्मिला को भी मुझसे छीनना चाहते हो। शायद मेरे अहसानों का तुम बदला ऐसे ही चुकाना चाहते हो। विभाव कृतघ्नता से बढ़कर विश्व में दूसरा कोई पाप नहीं हो सकता। विश्वासघात करने वाला व्यक्ति कितना नीच और पतित होता है इसका सही अनुमान तुम्हें देखकर ही मैं कर पा रहा हूँ।"

विभाव को लगा कि राज आवश्यकता से अधिक आगे बढ़ रहा है। वह भी क्रोध के स्वर में बोला—

"राज तुमने मुझ पर कौन अहसान किये हैं, जरा मैं भी तो सुनूँ। अभी-अभी तुमने यह स्वीकार किया है कि तुम्हारा काम भी मुझसे बराबर निकलता रहा। तुमने जो कुछ किया एक बहुत बड़े स्वार्थ को दृष्टि में रख कर किया, जिसका मुझे तुमने अहसास तक न होने दिया। तुम्हारी इस चलाकी की तो मैं जरूर दाद देता हूँ लेकिन साथ ही तुम्हारी स्वार्थ परायणता

को देख मुझे तुमसे घृणा हो रही है। तुम्हें बताना होगा कि मैंने तुम्हारे साथ क्या विश्वासघात किया है। बोलो—"

राज क्रोध में भभक उठा। चिल्लाकर बोला—"दूध का धुला बनते हूए तुम्हे शर्म नहीं आती। कम से कम अपने वर्ण का नाम तो न डुबाया होता। तुम आज इतने भोले और आदर्शवादी महान् पुरुष बनने का झूठा अभिनय कर रहे हो लेकिन जब तुम रजनी के साथ अकेले चाय और शर्बत पिया करते थे, सिनेमा जाया करते थे, चाँदनी रात में घूमा करते थे, रात को घर पर सोया करते थे और न जाने क्या-क्या किया करते थे तब तुम्हारा यह भोलापन तथा बहन का आदर्श कहाँ था। तुमसे चालाक बगले-भगत की मैं कल्पना तक नहीं कर सकता। मुझे क्या पता था कि मैं दूध पिलाकर अपनी आस्तीन में साँप पाल रहा हूँ। दुनिया-भर को पता है कि तुम रजनी के पीछे दीवाने हो लेकिन आज उर्मिला के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर तुम उसका पान करने को ललायित हो रहे हो। न जाने अब तक तुमने कितने घर बिगाड़े होंगे...।"

"जबान सम्भाल कर बात करो राज" विभाव चीख उठा, "पहले अपने चरित्र पर निगाह डालो फिर क़िसी और की सोचना। रेणु की आत्मा तुम्हें आज भी धिक्कारती होगी। चाहे दुनियाँ के सामने तुम साधु ही क्यों न हो, तुम्हारे एक-एक पाप को मैं तुमसे अधिक जानता हूँ। तुमने रेणु को खत्म करके मँजू को अपने जाल में फाँस रखा है उसका भी आगे बुरा हाल करके मानोगे। लेकिन चूँकि तुम बड़े-बाप के बेटे हो, तुम्हारे पास सबका मुँह बन्द करने को रुपया है इसलिये लोग

तुम्हारे मुँह पर कुछ नहीं कह सकते । मन में तो सभी जानते हैं । तुमने मेरी निर्धनता और असमर्थता का पूरा-पूरा फायदा उठाया और अब उर्मिला पर आँख लगाये बैठे हो । जरा भगवान से तो..."

राज खड़ा हो गया । उसका चेहरा क्रोध से तमतमा उठा । विभाव का वाक्य समाप्त होने से पहले ही चिल्ला पड़ा...

"मालूम होता है कि तुम्हारा पेट अब भरने लगा है, इसलिये गलियों के कुत्ते के होने के बजाये अब तुम पालतू टाईगर बनना चाहते हो । मुझे खुशी है कि तुम जैसे नीच और पतित व्यक्ति के जाल से मेरी बहन बच गई । अन्यथा मैं जीवन-भर अपने पाप का प्रायश्चित्त न कर पाता । तुम्हें मौक़ा ही कब मिला कि तुम किसी को अपने जाल में फ़ँसाते । इसके लिये भी अक्ल और शक्ल चाहिये । उर्मिला के लिये तुम जाल बिछा रहे हो । लेकिन तुम्हें मालूम होना चाहिये कि गत पाँच-छः दिनों से उर्मिला मेरे घर पर ही रह रही है । उसकी माँ बाहर गई हुई है । यदि झूठी पत्तल ही चाटनी है तो कोई और रास्ता ढूँढो । तुम्हारा सारा जीवन उर्मिला के लिये तड़प-तड़प कर ही बीतेगा । मेरी बदनामी करने से पहले जरा अपनी जिन्दगी की कीमत आँक लेना विभाव । नमक हराम कहीं के...।"

इतना लहकर राज ने जोर से विभाव के सामने थूँक दिया । विभाव तो मानों जड़वत् हो गया । वह आगे कुछ सोच ही न सका । चकरा कर वहीं बैठ गया ।

घर पहुँचने से पहले राज ने अंग्रेजी शराब के दो तीन पैग

चढ़ाये और घर पहुँचते ही बिना किसी से कुछ बोले वह अपने कमरे में जाकर पलँग पर पड़ गया।

विभाव को लगा की उसका स्वप्न बीच में ही भंग हो गया। वह जल्दी-जल्दी सर्वदा के क्वाटर पर पहुँचा तो दर-वाजे पर बड़ा-सा ताला लगा देख वह हैरान हो गया। उसे लगा कि अब वह उर्मिला को कभी न देख सकेगा।

: १८ :

तुलनात्मक दृष्टि से किसी भी वस्तु को सर्वोत्तम कहना बड़ा कठिन है। परमेश्वर की इस विचित्र सृष्टि में प्रत्येक छोटी-बड़ी तथा अच्छी-बुरी समझी जाने वाली वस्तु का अपना मौलिक महत्व है। हाँ, चुनाव की समस्या आने पर दो वस्तुओं का तुलनात्मक महत्त्व उत्तम चुनाव में सहायक हो सकता है लेकिन कभी-कभी कुछ व्यक्ति इस कारण संशय तथा भ्रम में भी पड़ जाते हैं।

कल की सारी रात विभाव एक मिनिट भी न सो सका। उसने अंग्रेजी के दो-तीन उपन्यास उठाये लेकिन किसी में भी मन नहीं लगा। कभी वह कमरे में जाता, कभी आँगन में, कभी छत पर। बाहर से आने के बाद आज उसने अपने देर से आने की कोई सफाई भी नहीं दी, जैसा कि वह प्रायः किया करता था। उसको इस प्रकार बेचैन देख सुलोचना ने पूछा—

"क्या बात है बेटा, उदास क्यों हो? अब तो परीक्षा भी समाप्त हो गई। तुमने खाना भी नहीं खाया। दूध भी पड़ा-पड़ा ठण्डा हो रहा है। कुछ बताओ भी तो। क्या किसी से लड़ाई-झगड़ा हो गया है। संचारी से तो पता चला कि तुम राज के साथ घूमने-फिरने गये थे।"

विभाव चुपचाप सुनता रहा। बेचारा क्या उत्तर देता। एक बार तो उसके मन में आया कि माँ के पास बैठकर आज की सारी घटना सुना दे, अपनी भूल स्वीकार कर ले, लेकिन

तभी उर्मिला की सम्पूर्ण आकृति उसके सम्मुख साकार हो उठी। अपने मनोभावों को छिपाता हुआ बोला—

"कुछ नहीं माँ, यों ही नींद नहीं आ रही है। पहला पेपर बिगड़ जाने के कारण कभी-कभी रिजल्ट की बहुत चिन्ता होने लगती है, न जाने क्या होगा। संचारी क्या सो गया है ?"

सुलोचना कुछ समझाते हुए बोली—

"तुम यों ही चिन्ता कर रहे हो भैया, भगवान सब की सुनता है। आज तक जिसके आशीर्वाद से तुम्हें बराबर सफलता मिलती रही है उसकी कृपा से इस बार भी तुम सफल होगे ही। इस बार तो हमने पूरे पाँच रुपया का प्रसाद पहले ही बोल दिया है, काम करना अपने हाथ है, फल भगवान देने वाला है।"

विभाव को 'भगवान', 'परमेश्वर' आदि शब्द बार-बार सुन कर क्रोध आया लेकिन उसने अपने को संयत कर लिया। एक दो क्षण मौन रहकर बोला—

"माँ, कभी-कभी तुम्हारा भगवान भी अन्याय कर बैठता है। मनुष्य किसी वस्तु को पाने का प्रयत्न निरन्तर करता रहता है लेकिन ज्यों ही वह उसके समीप पहुँचता है, वस्तु उससे सदा के लिए छीन ली जाती है। मेरे साथ तो हमेशा से ऐसा होता आया है। मैडिकल कालेज में नाम भी आ गया था लेकिन 'एडमिशन' फिर भी न हो सका। 'स्कालरशिप' के मामले में भी सब बात बन गई थी लेकिन अन्त में निराश ही होना पड़ा।"

सुलोचना गम्भीर ध्वनि में बोली—"बेटा, भगवान जो

भी करता है अच्छा ही करता है। यदि तुम डाक्टरी का कोर्स करने लगते तो न जाने अभी कितने वर्ष और लग जाते। घर का हाल तो तुम जानते ही हो। प्रभु ने चाहा तो तुम शीघ्र ही अब नौकरी में भी आ जाओगे। कितनी खुशी की बात है। तुम्हारे पिताजी भी बुढ़ापे में चैन की साँस तो ले सकेंगे।"

"माँ तुम ठीक कहती हो लेकिन……………"

विभाव का वाक्य समाप्त भी न हो पाया था कि संचारी आ पहुँचा और बीच में ही बोल पड़ा—

"भैया, ऐसी कौन-सी चीज है जो तुमने चाही हो लेकिन तुमसे छीन ली गई हो। अभी तक एक भी बार किसी भी क्लास में तुम रुके तक नहीं। यही क्या कोई कम बात है। तुम्हें तो परमेश्वर के प्रति अत्यन्त श्रद्धालु होना चाहिए।"

विभाव को संचारी की बात बेतुकी लगी लेकिन वह शान्त ही रहा। उसकी बात का उत्तर दिये बिना ही वह संचारी को अपने कमरे में आने का संकेतकर भीतर चल दिया। पानी पीकर संचारी भी कमरे में पहुँच गया।

शोभा का चित्र पैड के नीचे पड़ा था, उसका एक कोना निकला था। संचारी ने चित्र पैड के नीचे से खींच लिया और मुस्कराता हुआ बोला—

"भैया, तुमने इस फोटू की क्या दशा कर रखी है। पैड के नीचे पड़े-पड़े बेचारी की साँस नहीं घुट रही होगी।"

इतना कहते-कहते संचारी ने चित्र अपनी जेब में रख लिया।

संचारी की बात सुन विभाव को हँसी आ गई। लेकिन शीघ्र ही उसने गम्भीर होकर पूछा—

"क्यों संचारी, आज राज के यहाँ कौन-कौन मिला था। तुम वहाँ कितनी देर ठहरे ?"

संचारी को इस प्रश्न पर कुछ आश्चर्य हुआ लेकिन उसने फौरन उत्तर दिया—

मैं जब घर पहुँचा तो कोई भी न था। मैं अपने एक मित्र के घर चला गया। आपको तो मैंने राज भाई साहब के साथ कार में जाते हुए देखा था। क्यों कहिए......?"

"कुछ नहीं ऐसे ही पूछ रहा था ? तुम्हारी परीक्षा कब से है ?"

"सो तो आपको पता है भैया, अगले मंगल से।" संचारी ने विस्मय के भाव से उत्तर दिया।

"ठीक है, स्टडी करो। जरा लाईट आफ करते जाना।" इतना कहकर विभाव पलँग पर पड़ गया। संचारी एक मिनिट तक वहीं खड़ा रहा फिर कमरे की लाइट आफ करके पढ़ने चला गया।

विभाव को कभी अपने पर क्रोध आता, कभी अपने भाग्य पर, कभी राज पर तो कभी सर्वदा और उर्मिला पर। कभी निराशा होती तो कभी इतना जोश आता कि राज को सदा के लिए खत्म कर दे। वह कभी करवट बदलता, कभी उठ बैठता। जब नींद किसी भी तरह न आई तो वह टहलने लगा। नाना प्रकार के भाव उसको व्याकुल किये हुए थे। वह सोचने लगा—

"कितना अच्छा होता यदि मैं कहीं या तो राज को तालाब में ढकेल देता या स्वयं छलाँग लगा जाता। अभी भी क्या बिगड़ा है। यदि यहीं से गली में कूद पड़ूँ तो भी सारा झंझट समाप्त हो जाये। नहीं, नहीं खुद मरने के बजाये इस राज के बच्चे को ही क्यों न खत्म कर दूँ। यों भी मरना ही है। लेकिन पापी को मारकर मरना लाख गुना अच्छा होगा। सजा ही तो होगी, हद से हद फाँसी पर ही लटका दिया जाऊँगा। बस।"

इतना सोचते ही विभाव को एक दम ध्यान आया।

"लेकिन राज के पास रुपया है। ज्यादाद है। वह बड़े बाप का बेटा है। मेरे जैसे दसों व्यक्तियों को जब चाहे खरीद सकता है—बेच सकता है। यदि मैं रेणु और मंजू के सम्बन्ध की बात लोगों से कहता फिरूँ तो भी क्या होगा। उसका कोई क्या बिगाड़ लेगा। बहुत-से लोग इस बात को जानते है, लेकिन कोई कुछ नहीं कर सकता। तो मैं कल ही सर्वदा के पास क्यों न पहुँच जाऊ। लेकिन उसके मामा के घर का पता कैसे मिले, कहाँ जाऊँगा। फिर सर्वदा से मिलने पर भी क्या होगा। उर्मिला········उर्मिला भी तो कहीं धोखा नहीं दे रही है। नहीं······नहीं···ऐसा त्रिकाल में नहीं हो सकता। वह बेचारी तो इस दुष्ट राज के चक्कर में पड़ गई है। तो उसे कैसे जाल से मुक्त करूँ। हो, सकता है उर्मिला ही राज को चाहने लगी हो, इन लड़कियों का क्या ठीक-ठिकाना। लेकिन उसकी बातों से ऐसी कोई बात आज तक प्रकट न हुई। यदि मैं उर्मिला को किसी तरह पृथक्

करके विवाह भी कर लूँ तो एक तो घर से हमेशा के लिये सम्बन्ध विच्छेद हो जायेगा, दूसरे मेरे स्वयं तथा उर्मिला के जीवन की रक्षा करना कठिन हो जायेगा। राज न जाने मेरी कितनी बदनामी कर सकता है। तो कल ही पिताजी को लिख दूँ कि मुझे शोभा वाला सम्बन्ध स्वीकार है। लेकिन उर्मिला क्या समझेगी। उसे तथा उसकी माँ को कितनी निराशा होगी। यह तो एक प्रकार का धोखा हुआ। लेकिन यदि उसकी माँ चाहती तो उर्मिला को यहाँ छोड़कर जा सकती थी। घर पर सभी लोगों से उसका परिचय है। इससे मालूम होता है कि स्वयं सर्वदा राज को मेरी अपेक्षा अधिक महत्व देती है। बात भी ठीक है। राज उन्हीं के वर्ण का है, बड़े बाप का बेटा है। उसकी बहन रजनी उर्मिला की पक्की सहेली है। समय-समय पर सहायता करती रहती है। मैंने क्या किया है। समाज में रहना है तो समाज के विधान को मानना पड़ेगा, चाहे विधान कितना ही त्रुटि-पूर्ण तथा बेढ़ंगा क्यों न हो।"

"………एक बार राज से ही क्यों न प्रार्थना करूँ। 'प्रार्थना' और राज से……उस नीच से। नहीं……ऐसा नहीं हो सकता। कभी नहीं हो सकता। तो इस मामले को भाड़ में जाने दूँ। ठीक है।"

इतना सोचकर विभाव ज्यों ही पलंग पर आकर लेटा तो उसे उर्मिला के साथ ताँगे की सम्पूर्ण यात्रा और बात-चीत की एक-एक करके याद आने लगी। वह फिर बिचार-सागर में गोते खाने लगा।

—उर्मिला खुशी-खुशी ताँगे में क्यों बैठ गई। उसने इतने धक्के लगने पर भी ताँगे वाले से धीरे ताँगा हाँकने को क्यों नहीं कहा। ताँगे से उतरने के बाद उसने मुझे घर चलने को क्यों कहा। उसकी माँ तो घर पर थी ही नहीं। वह फिर मेरी ओर एक टक क्यों ताकती रही। संचारी द्वारा उसने मेरे ही नोट्स क्यों मँगवाये। मैं उसका क्लास-फैलो तो नहीं। अच्छा सर्वदा ने ही क्यों मुझसे ऐसी-ऐसी बातें कीं। घर पर भी जब कभी उसका आना हुआ तो हमेशा मेरे से ही क्यों अधिक बोलती, और भी तो लोग हैं। उर्मिला के हाथ से उस दिन पानी क्यों छलक गया……आखिर इन सबका कोई न कोई कारण तो होना चाहिये…………लेकिन अब सब बेकार हैं। यह तो एक स्वप्न था जो भंग हो गया, केवल स्मृति मात्र शेष है। न जाने सर्वदा का आना कब तक होगा। उधर यदि शोभा का सम्बन्ध भी कहीं और हो गया या माँ, पिताजी ने मुझसे तंग आकर इस विवाह की बात को ही समाप्त कर दिया तो धोबी के कुत्ते का-सा हाल होगा।……"

"तो क्या करूँ……जहर खालूँ या राज को खिला दूँ ………। दुनिया में मेरे जैसे कई लोग हैं जिनके अरमान सदा अधूरे ही रहते हैं……लेकिन क्या सब जहर खा लेते हैं……। यदि आत्म-हत्या कर लूँगा तो दुनिया मुझ पर ही थूकेंगी। अभी तो किसी को कुछ भी पता नहीं।………शोभा भी ठीक-ठीक है। वैसे तो दुनिया में उर्मिला से भी सुन्दर लड़की हो सकती है……तो जाने दूँ……भगवान जो करेगा अच्छा

ही करेगा······।"

इतने में ही अधीर ने बाहर से आवाज लगाई—"भैया आज क्या उठना नहीं है। चाय कब की तैयार हो गई। मैं तो पी भी चुका और इम्ताहन के लिये जा रहा हूँ। आज सवालों का इम्ताहन है······।"

विभाव कमरे से बाहर निकला तो अधीर हाथ में पट्टी, कलम-दवात और रंग की डिब्बी लिये खड़ा था। विभाव को देखते ही बोला—

"भैया तुम्हें पता नहीं चौथी क्लास में कितने कठिन सवाल दिये जाते हैं। दूसरी तीसरी क्लास के लड़के तो यों ही······"

"हाँ, हाँ, सो तो मैं भी जानता हूँ लेकिन भैया तुम रंग की डिब्बी क्यों ले जा रहे हो। आज कोई······

विभाव का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही अधीर ने उसके पैर छुए। विभाव ने उसे उठा लिया। अधीर तुरन्त बोल उठा—

"तुम्हें नहीं मालूम भैया जो लड़का चौक की जगह रंग से सवाल करेगा उसे ज्यादा नम्बर मिलेंगे।"

इतना कह कर अधीर भाग खड़ा हुआ। विभाव को इसकी बात सुन हँसी आ गई।

: १९ :

प्रतिकार की भावना तो वैसे ही मनुष्य को अंधा बना देती है लेकिन यदि इसके मूल में सौन्दर्य-विषयक अथवा भोग की इच्छा अन्तर्निहित हो तो इसका प्रभाव और भी भयानक हो जाता है। नारी-आकर्षण के सम्मुख पाप-पुण्य, अच्छाई-बुराई आदि का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

राजनारायण को अपने ऐश्वर्य के कारण अपनी शक्ति पर पूर्ण विश्वास था। उसकी मान्यता थी कि रुपये से प्रेम, श्रद्धा, सहानुभूति, अनुग्रह आदि सब स्वतः सुलभ हो जाते हैं। आज के भौतिकवादी युग में रुपये का महत्व मनुष्य से भी अधिक है और इसका प्रमाण यह है कि रुपये के लिए एक व्यक्ति दूसरे की हत्या तक कर देता है। अभी तक ऐसा अवसर न आया था जिससे राज को अपनी विचारधारा में संशोधन या परिवर्तन की आवश्यकता पड़ी हो। परिणामतः उसे द्रव्य की शक्ति में अटूट विश्वास हो गया था।

आज प्रातः काल से राज कुछ खिन्न-सा था। रजनी ने भी एक-दो बार बातचीत करने का प्रयत्न किया तो तबियत का बहाना कर उसने जैसे-तैसे बात तो अवश्य टाल दी लेकिन रजनी को विश्वास न दिला सका।

रात को जब उसे नींद न आई तो एक दफा को तो वह यहाँ तक सोच बैठा कि कल प्रातःकाल ही उर्मिला के साथ कोर्ट-मैरिज ही क्यों न कर डाले। वकील आदि से मिले,

लेकिन वह तत्काल ही अपने निश्चय को क्रियात्मक रूप न दे सका।

भोजन आदि से निवृत्त होने के बाद रजनी उर्मिला की माँ का पत्र हाथ में लिए राज के कमरे में आई और बोली—

"भैया क्या बात है, कटे-कटे से क्यों नजर आ रहे हो। मुझसे नाराजगी है क्या ? मैंने तो कल रात ही तुमसे कहा कि जरा धैर्य रखो, सब अपने आप हो जायेगा। लेकिन तुम्हें मुझ पर विश्वास ही कहाँ।"

इतना कहकर सर्वदा का पत्र राज के सामने रखते हुए बोली—

"अच्छा, लो पत्र पढ़ लो। सर्वदा मौसी शीघ्र ही आना चाहती हैं। सो तो अच्छा ही हुआ। लेकिन उन्होंने उर्मिला से कुछ रुपये मँगवाये हैं। मैंने पत्र उर्मिला को नहीं दिखाया है। मेरा विचार तो यह है कि तुम आज ही ५० रुपये 'मनिआर्डर' से भेज दो। मंगलपुर रुपया पहुँचने में भी दो-तीन दिन आराम से लग जायेंगे, इसलिये जल्दी करने को कह रही हूँ। अब उर्मिला कब तो रुपया पोस्ट आफिस से निकलवायेगी और कब भेजेगी। फिर तुम्हारे रहते हुए यदि उर्मिला को कष्ट.........।"

रजनी का कथन समाप्त होने से पूर्व ही राज ने बड़ी गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा—

"मैं स्वयं ही अभी तुझ से मंगलपुर जाने की बात कहने वाला था। बात यह है कि मुझे भी कानपुर फर्म के आवश्यक कार्य के सम्बन्ध में जाना है। एक-दो व्यक्तियों से 'काण्ट्रेक्ट' के सम्बंध में बात करनी है। पापा के इधर-उधर जाने का तो

सवाल ही नहीं उठता। मंगलपुर भी रास्ते में ही पड़ता है। मेरा कार से जाने का विचार है। हद-से-हद चार-पाँच घण्टे लगेंगे और स्वतन्त्रता भी खूब रहेगी। आते समय मैं सर्वदा जी को साथ लेता आऊँगा। मनिआर्डर से रुपया भेजने की परेशानी कौन उठाये। जाना तो है ही लगे हाथ एक काम और हो जायेगा।"

रजनी तुरन्त बोल उठी—"बिल्कुल ठीक है, मुझे क्या आपत्ति। अच्छा है, सर्वदा मौसी को भी तकलीफ नहीं होगी। मेरा ख्याल है कि यदि उर्मिला भी आपके साथ कानपुर की सैर कर आये तो बड़ा ही अच्छा......।"

राज ने रजनी के कन्धे पर हल्के से एक चपत जड दिया और मुस्कराता हुआ बोला—

"ज्यादा मुँह मत लग, मुझे मज़ाक पसन्द नहीं। उर्मिला को क्या परीक्षा नहीं देनी है।"

"अरे भैया, परीक्षा तो होती रहेगी। फिर उसे अब परीक्षा से विशेष मतलब ही क्या..."

—कहती हुई रजनी हँस कर चली गई।

राज ने बैठे-बैठे सारी योजना बना डाली। उसे लगा कि वह अवश्य ही अपने कार्य में सफल हो जायेगा।

× × ×

आज रात की गाड़ी से सर्वदा का घर लौटने का निश्चय था। लेकिन दोपहर को लगभग दो-ढाई बजे यकायक राज को अपने मामा के घर आया देख पहले तो वह हैरान हो गई लेकिन सारी बात पता चलने पर प्रसन्न हो राज से बोली—

—"तुमने बड़ी तकलीफ की भैया । सत्तर-अस्सी मील कार से आये । ऐसी भी क्या बात थी । उमा भी बड़ी पागल लड़की है । मैंने तो रुपयों की बात यों ही लिख दी थी । वैसे कोई विशेष आवश्यकता नहीं । अब जब तुम यहाँ तक आये ही हो तो एक दिन तो ठहरो । कल चले चलेंगे ।

राज ने बात सुनते-सुनते बटुए से सौ रुपये का एक नोट निकाला और सर्वदा को देता हुआ बोला—

—"लो मौसी यह सम्भालो । और जरूरत हो तो कहो । रही एक दिन ठहरने की बात तो उसके लिये मैं क्षमा चाहूँगा । आपको पता है कि घर सूना है । उर्मिलाजी तथा रजनी के अलावा और कौन है । मेवा दादा भी एक-दो दिन की छुट्टी गए हुए हैं, शायद कल तक आयें । फिर ऐसे दुःख के अवसर पर मेरा यहाँ ठहरना ठीक नहीं ।"

शाम को पाँच बजे के लगभग राज सर्वदा को लेकर रवाना हो गया । चूँकि राज को सर्वदा से आवश्यक बात करनी थी इसलिये वह कार ठीक-ठीक गति से ही चला रहा था । थोड़ी दूर चलने पर सर्वदा बोली—

—"क्यों भैया, दोनों की पढ़ाई तो ठीक चल रही होगी । मैं यहाँ आकर पूरे दस दिनों के लिये फँस गई । करती भी क्या । तुम लोगों को मैंने बड़ा कष्ट दिया···।"

"आप यह क्या कह रही हैं मौसी जी" राज तुरन्त मुस्कराता हुआ बोला, "दोनों पढ़ाई में पूरी तरह से लगी हैं । उर्मिलाजी का मन भी खूब लग गया है । मुझे तो 'फील' ही नहीं हुआ कि कोई बाहर का व्यक्ति आया हुआ है । आपको

रजनी के बारे में तो सब कुछ पता है ही। जिससे मिलती है उसे अपना बना लेती है। वह तो शायद अब परीक्षा समाप्त होने तक अपनी सहेली को अलग न होने देगी।"

सर्वदा ने हँसते हुए कहा—"तुम्हारा कहना ठीक है, बेटा। रजनी बहुत ही व्यवहार-कुशल लड़की है। उमा तथा उसके प्रेम का तो कहना भी क्या। लेकिन उमा रजनी के साथ रहती हुई भी उसका गुण सीखने की कोशिश नहीं करती। केवल पढ़ाई-लिखाई ही तो कुछ नहीं...।"

राज ने अनुभव किया कि बात कुछ बनने लगी है, अतः तत्काल बोल पड़ा—

"आप चाहें जो कहें मेरा ख्याल है कि उर्मिलाजी तथा रजनी में कोई अन्तर नहीं। कारण यह है कि बचपन से माताजी से अलग होने के कारण रजनी को ही उनका स्थान लेना पड़ा। वरना घर पर और था ही कौन। पापा तो सदा बाहर दौरे पर रहते हैं और मैं स्वयं घर पर बहुत कम टिकता हूँ। फिर अभी कौन-सी उम्र निकल गई है। लड़कियों में व्यवहार-कुशलता तो विवाह के बाद ही जब उनपर जिम्मेवारी आकर पड़ती है, तब ही आ पाती है। रजनी भी कभी-कभी बच्चों की-सी बातें करने लगती है और कुछ नहीं तो माँ को याद कर ही रोने लगती है, समझाना ही कठिन हो जाता है।"

आगे रास्ता कुछ कच्चा था इसलिये राज ने कार की गति और भी धीरे कर दी—

सर्वदा ने एक-दो क्षण चुप रहकर कुछ गम्भीर वाणी में कहा—

"तुम ठीक कहते हो बेटा। लेकिन अभी पहले पढ़ाई तो पूरी कर ले, तब कहीं विवाह की बात हो। वैसे तो···।"

"मेरा विचार आपसे भिन्न है" राज ने तुरन्त कहा, "लड़कियों के लिये ऊँची-शिक्षा का विशेष महत्व तथा आवश्यकता नहीं। हाँ, यदि नौकरी करवानी है तो बात दूसरी है। मेरा विचार ता इन छुट्टियों में ही रजनी का विवाह कर देने का है। फिर उम्र का भी तो तकाजा है।"

सर्वदा और भी गम्भीर हो गई और बोली—"कभी-कभी लड़कियों को इसलिये भी आगे पढ़ाना पड़ता है कि उनके विवाह की व्यवस्था ही नहीं हो पाती। मैं स्वयं बहुत ऊँची शिक्षा के पक्ष में नहीं। लेकिन फालतू घर पर ही बैठे रहने से क्या लाभ। इसके अलावा भैया आप लोगों में और मुझमें तो बहुत अन्तर है। तुम्हें रजनी के लिये कल ही योग्य वर मिल जायेगा। लेकिन एक तो मैं वैसे ही अकेली हूँ दूसरे देने-लेने को भी केवल लड़की है।"

राज ने सोचा बात धीरे-धीरे सही रास्ते पर आ रही है। अतः बड़ी तत्परता से वह बोला—

"अन्तर-वन्तर की बात मैं नहीं मानता। हाँ, जात-पाँत का भेद एक ऐसी बात है जिसका व्यक्तिगत तथा सामाजिक महत्व है। वह एक मौलिक अन्तर है। मैं तो ब्राह्मण-क्षत्रिय के अन्तर को भी पर्याप्त महत्व देता हूँ। आगे बढ़ने का यह मतलब नहीं कि हम प्राचीन परम्पराओं को ठुकरा दें। पुरानी बातों तथा नियमों के अन्तर्गत ही नवीन सिद्धान्त बनते हैं और पनपते हैं। जो लोग धन-दौलत को छोटे-बड़े का पैमाना मानते

हैं उनसे मुझे घृणा है। यही तो पिछड़ेपन तथा संकुचित विचारों की निशानी है।"

सर्वदा चुपचाप राज की बात सुनती रही। फिर खिड़की के काँच को कुछ नीचा करके बोली—"लेकिन असमर्थता एक ऐसी चीज़ है जिसके आगे किसी का बल काम नहीं देता। कोई भी माता-पिता अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में नहीं होते लेकिन परिस्थितियोंवश उन्हें ऐसा करने को बाध्य होना पड़ता है। बहुत बार तो दान-दहेज का अभाव ही माता-पिता को जरूरत से ज्यादा झुका देता है।"

"मैं आपकी बात का विरोध नहीं करता," राज ने गम्भीर स्वर में आगे कहना आरम्भ किया, "लेकिन जात-पाँत तथा वर्ण-भेद के दुष्परिणाम लड़की को ही भुगतने पड़ते हैं। उसका सारा जीवन नर्क बन जाता है। अभी मैं ही, यदि रजनी का विवाह किसी ब्राह्मण लड़के से भी कर दूँ तो भी, वर्ण यद्यपि ऊँचा है तथापि विरोध होना निश्चित समझियेगा। कल को सुसराल वाले बात-बात में 'बनिये की लड़की' कह कर ही उसका असहनीय अपमान करने लगेंगे। यह बात तो तब ही सम्भव हो सकती है जब कि प्रत्येक व्यक्ति जात-पाँत तथा वर्ण-भेद को अस्वीकार करे, जब सब के विचार परस्पर एक से हों और सब अपने सिद्धान्तों के अनुरूप व्यवहार भी करें। इसके अलावा समाज में रहते हुए कई ऐसी बातें हैं जिनकी उपेक्षा करना उचित नहीं। कई बातों में यदि आवश्यकता आ पड़े तो व्यक्ति समाज से स्वतन्त्र भी हो सकता है। जैसे, यदि कोई व्यक्ति रुपये की बचत अथवा शादी-विवाह की झंझटों तथा

रिश्तेदारों के उल्टे-सीधे नखरों से बचने के लिये कोर्ट में जाकर विवाह कर लेता है और बाद में इच्छानुसार पार्टी या 'डिनर' देकर अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों को प्रसन्न कर सकता है तो इसमें कोई हानि नहीं। यह मामूली-सी बात होगी। लेकिन जात-पाँत तथा वर्ण-भेद का सम्बन्ध धर्म व नीति से है और धर्म व नीति परम्परागत एवं सापेक्ष वस्तु हैं जिसमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रता से बहुत बड़ी हानि हो सकती है।"

"मैं तुम्हारी एक-एक बात मानती हूँ" सर्वदा ने तत्काल कहना आरम्भ किया, "लेकिन मनुष्य परिस्थितियों का दास है। मैं स्वयं ही अब इतनी बाध्य हो गई हूँ कि यदि मुझे उमा के विवाह के लिए वर्ण-भेद की उपेक्षा भी करनी पड़े तो मुझे करनी ही होगा। मेरे पास, सिवाय लड़की के है ही क्या? यदि आज मेरे ऊपर कोई होता तो मैं कभी भी ऐसा न करती। एम०ए० तक पढ़ाने के बाद भी यही प्रश्न आ खड़ा होगा। आपद्-धर्म में मनुष्य क्या नहीं करता। यदि उम्र आने पर लड़की कँवारी ही बैठी रहे तो भी उल्टी-सीधी बातें सुनने को मिलती हैं। इन सब कारणों से ही लड़कियाँ भार बन जाती हैं। यदि आज उर्मिला के बाबूजी......।"

सर्वदा आगे न बोल सकी। उसका गला भर आया। नेत्र सजल हो उठे।

अब केवल आध-पौन घण्टे की यात्रा और थी। रात्रि हो गई थी। यही आठ बजे का समय होगा। चाँदनी के कारण वातावरण शीतल था। राज ने गाड़ी सड़क के किनारे खड़ी कर दी। और बड़े सहानुभूति-भरे स्वर में बोला—

"आप व्यर्थ परेशान न हों। आइये थोड़ा खुले में टहल लीजिये।"

सर्वदा आँसू पोंछती हुई बाहर आ गई। अपने भाई की मृत्यु के कारण उसका हृदय पहले से ही क्षुब्ध था।

राज ने टहलते हुए कहा—"देखिये, वैसे तो मुझे ऐसी बात कहनी न चाहिये लेकिन आपके कष्ट सुनते-सुनते मैं स्वयं व्याकुल हो गया हूँ। मेरा विश्वास है कि आप मेरे कथन का सही अर्थ लगायेंगी।"

एक क्षण ठहर कर राज ने फिर कहना आरम्भ किया—

"इसी माह में मेरे मित्र विभाव का, जिसे शायद आप भी जानती है, विवाह होने को है। उससे निवृत्त होने के बाद मैं स्वयं बिना किसी बात की चिन्ता किये उर्मिला से विवाह कर सकता हूँ। आप यह न समझिये कि मैं आपको बाध्य कर रहा हूँ। यदि आप को कोई आपत्ति हो तो आज नहीं तो एक-दो दिन बाद मुझे कह सकती हैं। मैं शीघ्र ही कोई अच्छा-सा लड़का अवश्य खोज कर ही मानूँगा। मैं यह नहीं सहन कर सकता कि केवल रुपये के कारण वर्ण की उपेक्षा कर एक भोली-भाली, पढ़ी-लिखी लड़की का जीवन भाड़ में झोंक दिया जाय। मैं फिर कहता हूँ कि रुपये-पैसे का अन्तर मेरे लिये कोई अर्थ नहीं रखता। वैसे अभी तक तत्काल विवाह करने का मेरा कोई विचार न था लेकिन यदि मैं इस बात को स्थगित कर दूँ तो विभाव के घर वालों की तरह हो सकता मेरे पापा भी अन्यत्र सम्बन्ध तै कर दें। रही रजनी के विवाह की बात, सो उसकी मुझे चिन्ता नहीं। वह स्वयं, जब तक कोई और घर

की देख-भाल करने वाला न आ जाय, घर छोड़ने वाली नहीं। सच मानिये मौसीजी, वह मेरा जितना ख्याल रखती है शायद ही दूसरा कोई रख सकेगा। मेरे लिये भी वही सब कुछ है। भगवान ने चाहा तो उसका सम्बन्ध भी अवश्य किसी उच्च परिवार में ही जायेगा। मेरे जीवन की यही सबसे बड़ी साध है।"

सर्वदा राज का मुँह ताकती रह गई। उसे एक-बार को तो अपने कानों पर ही विश्वास न हुआ। बीच में ही वह कुछ कहना चाहती थी लेकिन हार्दिक उल्लास तथा कृतज्ञता की तीव्र भावना के कारण उसका गला भर आया। विषाद और निराशा से उत्पन्न आँसू खुशी व आशा के आँसुओं में बदल गये। उसकी इच्छा हुई कि वह राज को गले लगा ले, पीठ ठोके, असंख्य धन्यवाद दे! कुछ क्षण मौन रह कर भावावेश के कारण बड़ी कठिनाई से सर्वदा ने कहना आरम्भ किया—

"बेटा, निसन्देह तुमने मुझे आज यह अनुभव करने का अवसर दिया कि यदि इन्सान सही अर्थों में इन्सान है तो रुपया-पैसा, धन-दौलत उसकी इन्सानियत को उससे नहीं छीन सकती। मनुष्य के संस्कार ही व्यक्ति को सभ्य-असभ्य और अच्छा-बुरा बनाते हैं। लोग कहते हैं कि अमीर, रुपये-पैसे वाले व्यक्ति दूसरे के दुःख को समझ ही नहीं सकते। इसी भावना के दृढ़ होने पर समाज और देश में पूँजी-पतियों का घोर विरोध किया जाता है लेकिन आज तुम्हें देखकर मुझे विश्वास होता जा रहा है कि पाँचों उँगलियाँ समान नहीं होती। मैं

कह नहीं सकती कि तुम्हें किस मुँह से धन्यवाद दूँ, आभार प्रकट करूँ।"

इतना कहते-कहते सर्वदा कुछ देर के लिये मौन हो गई। उसके नेत्र अभी भी सजल थे किन्तु चेहरे पर एक नवीन आभा था। उसने अब कुछ गम्भीर होकर कहना आरम्भ किया—

"लेकिन भैया, तुम जैसा कह रहे हो वैसा शायद कर न सकोगे। और इसमें तुम्हें दोष मैं नहीं देती। तुम भी जानते हो कि कहाँ मैं और कहाँ आपके पिताजी। उनका नाम, सम्पन्नता तथा परिवार मेरे पास सिवाय लड़की के क्या रखा है। इसलिये अच्छा हो यदि तुम इस विषय पर शान्ति से कुछ और विचार करो। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मेरे लिये इससे बढ़ कर दूसरा कोई प्रस्ताव नहीं हो सकता।"

सर्वदा मौन होकर राज की ओर ताकने लगी। वह अपनी बात की प्रतिक्रिया राज की मुद्रा से जानना चाहती थी।

राज घूमते-घूमते गम्भीर हो गया, एक क्षण ठहर कर बोला—

"आइये समय हो रहा है, चलें।"

दोनों फिर कार में बैठ गये। अब राज ने अत्यन्त गम्भीर मुद्रा धारण कर कहना आरम्भ किया—

"मुझे लगता है कि आपको मेरी बात पसन्द नहीं आई। मैं जो कहता हूँ वही करता हूँ, कर सकता हूँ। मुझे अपने निश्चय पर विश्वास है, मैं उसका महत्त्व समझता हूँ और इसीलिये अन्य बन्धनों तथा सीमाओं का मेरे लिये कोई महत्त्व

नहीं। सोचना-विचारना तो मुझे नहीं आपको है। खैर, कोई बात नहीं।"

राज जानता था कि उसकी इस बात का बहुत ही अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। सर्वदा तुरन्त प्रार्थना के स्वर में बोली—

"नहीं-नहीं आप मुझे गलत समझ रहे हो भैया। मेरा मतलब यह था कि कल को तुम्हारे पापा या अन्य लोग इस कारण तुमसे नाराज न हो जायें। हो सकता है कि तुम अपने मित्रों या सगे-सम्बन्धियों से सलाह लेना चाहो—"

राज ने तत्काल उत्तर दिया

"विवाह पापाजी को करना है या मुझे। विवाह को मैं अत्यन्त व्यक्तिगत वस्तु मानता हूँ, जिसमें माता-पिता, सगे-सम्बन्धी यदि आवश्यक समझें तो सलाह मात्र दे सकते हैं और कुछ नहीं। रही मेरे मित्रों की सलाह की बात, तो मैं स्वयं न तो ऐसे मामलों में सलाह लेता हूँ न देता हूँ। अभी विभाव का विवाह होने को है, वह मेरा पक्का दोस्त है, सगे भाई से भी बढ़कर मेरा-उसका प्रेम है—लेकिन शादी-ब्याह के मामले में वह पूर्णरूप से स्वतन्त्र है। हाँ, आर्थिक या अन्य किसी प्रकार की सहायता देने में मुझे कभी कोई आपत्ति नहीं।"

राज की बात समाप्त होते ही सर्वदा ने उत्सुकता के भाव से पूछा—

"ठीक है, मैं तुम्हारे विचारों को सराहना करती हूँ, मुझे भी व्यक्तिगत रूप से कोई आपत्ति नहीं। हाँ, लेकिन विभाव के विवाह की तो अभी कोई बात नहीं थी, कुछ दिनों पहले ही वह मुझसे मिला था। तब तक तो कोई बात नहीं थी।

यह एक-दम………।"

सर्वदा का वाक्य समाप्त होने से पहले ही राज मुस्कराता हुआ बोला—

"आप भी क्या बात करतीं हैं मौसीजी। शादी-विवाह का भी क्या ढिंढोरा पीटा जाता है। मुझे तो सब मालूम है। देहली में सम्बन्ध कभी का तै हो चुका। इन लोगों ने लड़की भी देख ली है। मैं खुद विभाव के पास लड़की का फोटो देख चुका हूँ। शोभा नाम है। और एक मजे की बात यह है कि लड़की को देखते ही विभाव ऐसा दीवाना हो गया कि कहता था कि शादी होगी तो इसी लड़की से। वैसे घर वालों को यह सम्बन्ध अधिक पसन्द न था, पर विभाव की जिद्द के आगे उन्हें बाध्य होना पड़ा। चाहे वह किसी से कहे या न कहे, विवाह तो इसी मास के अन्त तक हो जायेगा। और कहिये क्या बताना बाकी रहा।"

राज की बात सुन सर्वदा कुछ देर तक आश्चर्यचकित हो ताकती रह गई, फिर बड़े धीरे से बोली—

"अच्छा! चलो खुशी की बात है।"

इतने में राज ने अपने मकान के सामने गाड़ी-खड़ी कर के जोर से होर्न बजाया। रजनी और उसके पीछे-पीछे उर्मिला दौड़ी-दौड़ी आ पहुँचीं। सर्वदा ने दोनों को गले लगा लिया।

आज की सारी रात भी राज को नींद न आई। लेकिन आज नींद न आने का कारण अपनी योजना की सफलता से उत्पन्न हार्दिक प्रसन्नता थी। राज ने अनुभव किया कि अब उसका मार्ग साफ है। विभाव की याद आते ही उसे पहले तो घृणा हुई फिर उसने एक फीकी-सी हँसी हँस दी।

: २० :

काल ऐसा अमोघ लेप है जिससे अत्यन्त भयानक और गहरे घाव भी क्रमशः अच्छे हो जाते हैं, सूख जाते हैं। यदि काल का ऐसा अनुकूल प्रभाव न होता तो सम्भवतः दुख और सुख दोनों में मनुष्य अपना सहज सन्तुलन खो बैठता—विक्षिप्त और बेगाना हो जाता।

जब से विभाव का राज से झगड़ा हुआ था वह एक क्षण के लिए भी चैन से न बैठ सका। कभी-कभी तो उसे लगता कि वह पागल हो जायेगा। घर में किसी से भी बात करने तक की उसकी इच्छा न होती। वह चाहता था कि उसे कोई कुछ न कहे। परिणामतः वह कुछ अधिक चिड़चिड़ा तथा क्रोधी हो गया। उससे जितना शान्त होने को कहा जाता उतना ही उसका आवेश बढ़ता, क्रोध आता, ग्लानि होती। कितनी ही बार स्वयं विभाव ने प्रयत्न किया कि वह सब बातों को भूल जाये, जो होना था हो गया। लेकिन वह ऐसा न कर सका।

पिछली रात उसने अपने पिता श्रीनाथ को एक लम्बा-चौड़ा प्रार्थना-पत्र लिखा। उसने अपने कुव्यवहार तथा अवज्ञा के लिये खेद प्रकट किया, आश्वासन दिलाया कि भविष्य में वह कभी कोई ऐसा कार्य न करेगा जिससे किसी की भावना को ठेस पहुँचे और अत्यन्त ही मार्मिक शब्दों में क्षमा याचना तक की। इसके साथ ही उसने प्रच्छन्न रूप से शोभा से विवाह करने की इच्छा प्रकट करते हुए इस बात का वचन दिया कि

इस सम्बन्ध में उसे अपने पिता का निर्णय ही सहर्ष स्वीकार होगा।

लेकिन पत्र लिखने के बाद जब उसने उसे पुनः बढ़ा तो उसे लगा कि वह शीघ्रता में गलती न कर बैठे। उसने पत्र दुबारा-तिबारा पढ़ा और उसका संशय क्रमशः बढ़ता गया। उसने तत्काल पत्र के चार टुकड़े कर डाले और बाहर गली में फेंक दिये।

विभाव सोचने लगा—"प्रतीक्षा का फल मीठा होता है। भाग्य भी विश्व में कोई अपूर्व शक्ति है। यदि उर्मिला का विवाह मुझसे ही होना है तो होकर रहेगा। यदि राज प्रयत्न कर रहा है तो मुझे क्यों तटस्थ हो जाना चाहिये। यदि मैं कुछ न भी कर सकूँ तो कम-से-कम जब तक उर्मिला का विवाह राज से न हो जाय तब तक प्रतीक्षा ही क्यों न करूँ। शोभा से विवाह तो कभी भी हो सकता है। यदि न भी हुआ तो दुनिया में और बहुत-सी लड़कियाँ हैं। कई लोग आजीवन कुँवारे भी तो रहते हैं। तो फिर मुझे अभी घर वालों को कुछ समय के लिए टालते हीं रहना चाहिये।"

आज लगभग दो दिन तक निरन्तर घर में बन्द रहने के बाद मन बहलाने के विचार से विभाव ने सिनेमा जाने का निश्चय किया। उसने सोचा कि रात को सिनेमा से लौटते समय वह एक दो पैग चढ़ा लेगा तो कम-से-कम आज की रात तो आराम से कटेगी।

दुपहर को जब वह कमरे से निकला तो संचारी ने पिता का पत्र चुपचाप उसे दे दिया। वह जानता था कि दो-तीन

दिन से भैया का मूड ख़राब था इसलिये बोला कुछ नहीं।

विभाव कमरे में गया और शीघ्र ही उसने सारा पत्र पढ़ डाला। पत्र पढ़ कर उसने एक फीकी-सी हँसी हँस दी और मन-ही-मन में बोला—

'पिताजी समझते हैं कि मैं दो-दिन का बच्चा हूँ। धमकियों से डर जाऊँगा। एक बार नहीं हजार बार शोभा के घर वालों को लिख दें कि मुझे विवाह नहीं करना···नहीं करना। पहले तो जोश में कह कर गये थे कि अब वे मेरे विवाह-सम्बन्ध में कुछ न कहेंगे, अब क्यों समझा-बुझा रहे है। पन्द्रह दिनों में ही सारा जोश कूच कर गया।'

'लेकिन रजनी के सम्बन्ध में पिताजी को सूचना किसने दी? जीजी ने लिखा होगा—माँ ने लिखवाया होगा। हो सकता है यह इस राज के बच्चे का ही गुण हो। बड़ा चालबाज और धूर्त्त है। लेकिन ये लोग भी कितने शक्की हैं। मुझे रजनी से क्या करना। यदि वह मुझे चाहती भी है तो मैं क्या करूँ··· छत पर से कूद जाऊँ या नाचने गाने लगूँ। मुझे ऐसा मूक प्रेम पसन्द नहीं। यदि चाहती थी तो प्रकट करती। यह भोलापन नहीं मूर्खता है। फिर यदि रजनी या दुनिया की और कोई लड़की मुझे चाहती है और मैं उसे चाहता हूँ तो भी इन लोगों को क्या सरोकार। ये क्यों पीछे पड़े हैं। इनकी जान यों ही जलती है।'

'पिताजी ने रजनी के पिता को सूचित करने का कैसा संकेत दिया है। यह सब बेकार का डरावा है। और यदि लिख भी दिया तो वे खुद ही मुँह की खायेंगे। खुद ही झूठे

बेवक़ूफ कहलायगे। मेरा क्या बिगड़ेगा। मरनें दो सबको, जिससे जो कुछ करते बने कर डाले।"

विभाव ने तुरन्त मेज की दराज़ से एक पोस्ट कार्ड निकाला और बड़ी लापरवाही से लिखना आरम्भ किया—

"श्रीमान पिताजी !

प्रणाम !

आपका पत्र मिला। आपने कोई ऐसी नई बात नहीं लिखी है जिसका मैं उत्तर दूँ। विवाह के सम्बन्ध में मेरा अभी वह पुराना निश्चय है। महरबानी करके आप मुझे इस सम्बन्ध में बाध्य न करें और ख़ुद भी परेशान न हों।

आपने रजनी के विषय में जो कुछ लिखा है वह झूठ है या सत्य, मैं नहीं कह सकता। मुझे किसी से कोई वास्ता नहीं। आप जिसे चाहे पत्र लिखें, बात करें, डाँटे-फटकारें, याचना करें, क्षमा माँगे, लेकिन मुझसे कुछ न कहें। आप अपने कार्य में उतने ही स्वतन्त्र हैं जितना कि मैं अपने कार्य में। मैं आप के उपदेश तथा आदर्श पालन करने में असमर्थ हूँ। आशा है आप पुनः मुझे इस सम्बन्ध में कुछ न लिखेंगे।

आपका—

विभाव

पत्र समाप्त कर, कार्ड विभाव ने जेब में डाला और मुँह हाथ धोने का विचार कर बाहर आया। संचारी जीने से नीचे उतर रहा था। विभाव भी उसके पीछे हो लिया। आँगन में पहुँचते ही विभाव ने गम्भीर स्वर में संचारी को बुलाया।

संचारी सहम गया और निकट आकर बोला—"भैया, आप

मुझसे कुछ कह रहे हैं ?" विभाव तुरन्त बोल पड़ा—

"हाँ, मैं यह पूछ रहा हूँ कि परसों जब तुम राज के यहाँ गये तो तुम्हें कौन-कौन मिला था।"

संचारी को इस प्रश्न पर कुछ आश्चर्य हुआ लेकिन उसने बड़े ही सहज रूप में उत्तर दिमा—

"मुझे तो केवल रजनी ही मिली, मैं उसी के कमरे में बैठा रहा था। रजनी से पता चला कि राज भाई साहब तो कार से कहीं बाहर गये हुए थे।"

विभाव ने अब कुछ सरल भाव से पूछा—

"मेवा दद्दा भी क्या घर न थे ?" संचारी ने तत्काल उत्तर दिया—

"ड्राईंगरूम में मुझे एक बार केवल उर्मिला दिखाई दी थी। इसके बाद मैं आधे घण्टे तक हारमोनियम सुनता रहा। फिर रजनी मेरे साथ नीचे लॉन में आ गई।"

"रजनी ने तुमसे कुछ कहा नहीं ? मेरा मतलब पढ़ाई-वढ़ाई या मेरे या राज के बारे में......।"

विभाव इतना कहकर चुप रह गया और उत्सुकता से संचारी की ओर ताकने लगा—

संचारी कुछ समय के लिए चुप रहा। उसने इधर-उधर देखा और गम्भीर स्वर में बोला—

"भैया रजनी परसों न जाने क्यों कुछ उदास थी। हारमोनियम भी उसने मन से नहीं बजाया कोई नया गाना भी सैट नहीं किया। पढ़ाई के सम्बन्ध में भी कोई विशेष चर्चा न हुई। हाँ, नीचे लॉन में आने पर उसने मुझसे आपके बारे में

पूछा था। उसका मतलब था कि आप दो-तीन दिन से घर क्यों नहीं गये। तबियत वगैरह तो ठीक रही या कोई गड़बड़ थी। मैंने भी कह दिया कि ऐसी तो कोई बात नहीं। फिर वह कुछ गम्भीर हो गई। मुझे भी आश्चर्य तो हुआ पर मैं कुछ बोला नहीं। कुछ देर बाद खुद ही बोली कि "एक दो दिन में मैं खुद ही आऊँगी।" मैंने भी खुशी से हाँ कर दिया। पर अभी तक तो कोई आया-गया नहीं, दो दिन गुजरने को आये। मुझे तो ऐसा लगा, भैया, कि उसकी तबियत कुछ ठीक नहीं। या इम्ताहनों की चिन्ता होगी। यह भी कह रही थी कि 'प्रिपरेशन' भी अच्छी तरह न हो पाई है। और तो कुछ बात-चीत न हुई। यदि आपको कुछ कहलाना हो तो कहिये मेरा शाम को जाने का विचार है।"

विभाव बड़े ध्यान से संचार का एक-एक शब्द सुनता रहा। फिर उसने एक बनावटी हँसी हँस दी और लापरवाही के भाव से बोला—

"यों ही पूछ रहा था, वैसे कोई खास बात नहीं। तुम आज शाम को जाओगे! खैर देखा जायेगा। अच्छा जरा यह पत्र तो डाल देना।"

इतना कहकर विभाव ने पत्र जेब से निकाल तो लिया लेकिन फिर तत्काल बोल उठा—

"जाने दो। मैं खुद ही सिनेमा जा रहा हूँ। डाल दूंगा। तुम अपना काम करो।"

संचारी एक मिनिट तक चुपचाप खड़ा रहा फिर कुछ सोचता हुआ धीरे-धीरे बाहर चला गया।

ाम को तैयार होकर विभाव ने अपनी साईकिल उठाई और किसी से कुछ कहे-सुने बिना ही घर से निकल पड़ा।

साईकिल स्टैंड पर गाड़ी रख कर जैसे ही विभाव सिनेमा घर की ओर मुड़ा कि उसने राज की कार पोर्ट में रुकती हुई देखी। वह वहीं खड़ा हो गया। उससे देखा कि राज, उर्मिला, सर्वदा और रजनी चारों कार से उतरे और अन्दर चले गये।"

विभाव खड़ा-खड़ा देखता रहा। उसने अपना नीचे का होंठ दाँतों से दबा लिया। तुरन्त मुड़ा, साईकिल ली और दूसरा सिनेमा देखने चला गया !

लेकिन उसका मन बिल्कुल न लगा। उसने दो पैग भी चढ़ाये लेकिन मूड और बिगड़ता ही गया। उसे अब अपने भाग्य पर ही क्रोध आने लगा !

आज की रात तो कल से भी बुरी बीती।

: २१ :

जब तक कोई विशेष आकर्षण अथवा स्वार्थ पूर्ति की सम्भावना न हो तब तक आज के युग में एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से, केवल मानव होने के नाते, जो सहज प्रेम, सहानुभूति तथा सम्बन्ध है। वह नहीं के बराबर है। यदि कोई हमारा भाई है, सगा-सम्बन्धी है, या परम मित्र है तब तो स्वागत, स्नेह आवश्यक-सा हो जाता है अन्यथा तो जब तक किसी नवागन्तुक से भविष्य में स्वार्थ सिद्धि की आशा न हो तब तक एक गिलास ठण्डा पानी पिलाना भी अपव्यय प्रतीत होता है। हममें से कितने ऐसे हैं जो केवल मानव होने के नाते मनुष्यता के सहज निर्वाह के लिये सद्व्यवहार का उत्तम प्रभाव दूसरों पर छोड़ने की परवाह करते हों। हम सोचते हैं कि जब अमुक व्यक्ति से किसी लाभ की कोई आशा ही नहीं तो व्यर्थ ही अच्छे-बुरे प्रभाव के चक्कर में क्यों पड़ा जाय।

आज रजनी और उर्मिला की परीक्षा का अन्तिम दिन था ! इस सप्ताह में अध्ययन में व्यस्त होने के कारण राज को अपनी बहन रजनी और उर्मिला से बातचीत का अधिक अवसर न मिल सका था ! वैसे नित्य ही राज स्वयं दोनों को कार से परीक्षा-केन्द्र तक ले जाता था और लाता था। हाँ एक दो बार चाय आदि के समय अवश्य ही घण्टे-आध घण्टे बात-चीत हो जाया करती थी। न जाने क्यों अब राज की उपस्थिति से उर्मिला के व्यवहार की स्वाभाविकता में कुछ

अन्तर होने लगा था। परीक्षा के दिनों में उर्मिला अधिकांश समय रजनी के पास ही रही, दुपहर का भोजन तो नित्य ही साथ हुआ करता था लेकिन कभी-कभी शाम को भी जब घूमने में कुछ देर हो जाती थी तो रात का भोजन भी रजनी के घर ही होता था! फिर रात को पढ़ते-पढ़ते यदि अधिक समय हो जाये, या राज का मूड ठीक न हो या फिर कार में कोई खराबी हो जाये तो उर्मिला रात को भी वहीं सो जाया करती थी। सर्वदा भी अब निश्चिन्त थी। प्रश्न-पत्रों के सम्बन्ध में वैसे तो उसे समाचार मिलता ही रहता था लेकिन यदि कभी कोई बात हो जाये तो सर्वदा स्वयं ही राज के घर आ जाती थी।

आज का अन्तिम प्रश्न-पत्र कठिन था इस कारण उर्मिला और रजनी दोनों उदास चेहरा लिये परीक्षा भवन से बाहर आईं! रास्ते में राज ने दोनों को खूब समझाया-बुझाया, आजकल के परीक्षकों की कटु आलोचना की जो, कि बिना विद्यार्थियों का ध्यान किये ही अपने स्तर से इतना कठिन प्रश्न-पत्र दे डालते हैं और अन्त में शाम को मूड ठीक करने के लिये उसने सिनेमा जाने का कार्य क्रम निश्चित कर डाला।

लेकिन शाम को सर्वदा को स्कूल की एक आवश्यक 'मीटिंग' में उपस्थित होना था और एक दो लोगों से मिलना भी था अतः राज केवल उर्मिला को साथ ले घर लौट आया। घर पर आते ही उसने रजनी से कहा—

"अरे, तू अभी तक तैयार नहीं हुई शो आरम्भ होने ही वाला है, मुझे बेकार गाड़ी दौड़ानी पड़ेगी और रास्ते में

यदि किसी से टक्कर हो गई तो लेने के देने पड़ जायेंगे। चल जल्दी कर भई।"

रजनी ने सिराहने पर से धीरे-धीरे सिर उठाया, एक मिनिट तक वह उदास चेहरे से राज की ओर देखती रही और फिर अत्यन्त ही कोमल स्वर में धीरे से बोली—

"टक्कर तो अब क्या होनी है वह तो पहले ही हो चुकी है भैया। लेकिन मेरा सिर दर्द के मारे फटा जा रहा है। न जाने क्यों कुछ चक्कर-सा आ रहा है। मेरा कहीं भी आने-जाने को मन नहीं कर रहा।"

राज वास्तव में कुछ गम्भीर हो गया और स्नेहभाव से बोला—

"रजनी बात क्या है। तेरा जी आजकल कुछ उचटा-उचटा-सा क्यों रहता है। मन की कोई बात हो तो साफ-साफ कम-से-कम मुझे तो बता। अच्छा अब 'पिक्चर' का प्रोग्राम ही 'स्थगित'। चलो, अपन पार्क तक थोड़ा घूम फिर आयें। तेरा मन भी बहल जायेगा और ठण्डी हवा में घूमने से शायद सिर दर्द में भी कुछ आराम हो जाय। यदि आराम न हो........"

राज का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही रजनी ने प्रसन्न मुद्रा धारण कर अत्यन्त ही अनुरोध के भाव से कहा—

"नहीं, नहीं मेरे कारण पिक्चर का प्रोग्राम स्थगित न करो भैया। यदि घूमने-फिरने जाने का मन होता तो फिर सिनेमा ही न चल सकती। तुम तो योंही जरा-सी बात को लेकर परेशान होने लगते हो। मेरी बात मानो। आप उर्मिला के साथ सिनेमा जाओ मैं एक-दो घण्टे वॉयलन का ही अभ्यास

करूँगी, मन तो इसी से बहलेगा। हाँ, यदि मौका लगे तो फोन से या स्वयं ही मिलकर आप मँजू दीदी को कल फिर से आने के लिये कह दीजिये, नहीं तो सीखा-सिखाया सब भूल जाऊँगी।"

राज तुरन्त बोल पड़ा—

"खैर मंजू को तो मैं अभी फोन कर देता हूँ लेकिन यदि तू साथ न चलेगी तो मैं सिनेमा किसी हालत में भी नहीं...।"

रजनी ने बड़े ही याचना के स्वर में कहा—

"भैया आपको मेरी कसम है। उर्मिला भी क्या सोचेगी। यदि वह घर से ही न आई होती तो कोई बात न थी। फिर आप यहाँ रह कर करोगे भी क्या। मैंने वॉयलन बजाना आरम्भ किया नहीं कि आप दोनों तुरन्त बोर हो जाओगे। सूर्यास्त होने पर यदि मन करा तो मैं स्वयं ही लॉन में घूम लूँगी। मेवा दद्दा तो है ही, आप चिन्ता न करो, शो आरम्भ होने वाला है।"

राज कुछ देर मौन रहा फिर बोला—

"जरा कोई बात हुई नहीं कि झट कसम दिला दी। आगे से ख्याल रखना। अभी न मानूँ तो मुँह लटका कर एक कोने में बैठ जायेगी, बोलना ही बन्द कर देगी। तेरी यह जिद्द अच्छी नहीं। अच्छा कम-से-कम दवा की एक गोली तो ले लेना। और खाना भी खा लेना।"

इतना कहकर राज उर्मिला के साथ सिनेमा देखने चल दिया। चलते समय उसने मेवा दद्दा को रजनी का ख्याल रखने को कह दिया। उर्मिला ने जब रजनी के बारे में पूछा तो राज

ने एक-दो बात अपने मन से लगा कर बात टाल दी।

रजनी अपने कमरे में ही पड़ी रही। शाम हो गई थी। सूर्य की अन्तिम किरणें खिड़की के पर्दे के बीच में से कमरे में झाँक रही थीं। कुछ ही देर में दद्दा ने सिर दर्द की एक गोली और गिलास में पानी लाकर रजनी के सामने रख दिया। रजनी ने सरल भाव से कहा—

"दद्दा में अभी गोली ले लूँगी। तुम नीचे जाकर काम करो। कोई बात हुई तो कहूँगी।"

रजनी बिस्तरे पर पड़ी-पड़ी सोचने लगी—

'आज सात-आठ दिन होने आये लेकिन विभाव एक दफा को भी घर न आये। दो-तीन बार तो मैं ही संचारी से कह चुकी हूँ। आखिरकार बात क्या हुई। पेपर देखने तक न आये। मेरे पास नहीं तो कम-से-कम भैया के पास तो नित्य आये बिना मानते ही न थे। कारण क्या हुआ। हैं तो यहीं। फिर भैया भी आजकल उनके सम्बन्ध में कोई बात ही नहीं करते। पहले जब देखो जब 'विभाव-विभाव' ही सुनने को मिलता था। संचारी की बातों से लगता है कि कोई न कोई बात जरूर हुई है। वरना घर पर वे चिड़े-चिड़े से क्यों रह रहे हैं। यहाँ पिछले एक-दो दिन भैया का भी तो यही हाल रहा। कहीं किसी बात पर कुछ कहा-सुनी तो नहीं हो गई। लेकिन आज से पहले भी वाद-विवाद तो कई बार हो जाता था। कुछ गरमा-गर्मी तक हो जाती थी। लेकिन एक-दो दिन बाद दोनों एक हो जाते थे। इस बार न जाने क्या हुआ?'

"तो मैं क्या करूँ। यह तो भाग्य की बात है। मैं कहूँ

भी तो क्या कहूँ। किससे कहूँ। लेकिन मन भी तो नहीं मानता। यदि मैं स्वयं ही उनके घर जाऊँ तो भैया बुरा न मान जायें। वे क्या समझेंगे। जब तक सच्ची बात मालूम न हो जाय, मेरा जाना ठीक नहीं। कल संचारी भी नहीं आया। इन दिनों में संचारी ने भी अपने भैया के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा। तो फिर कारण क्या हुआ ? मेरे से भी कोई बात न हुई।"

इतना सोचते सोचते रजनी उठी और कमरे की तीनों खिड़कियाँ खोल कर पर्दा एक ओर खींच दिया। गर्मी बहुत थी। रजनी फिर आकर कमरे में बैठ गई। उसने पहले वॉयलन उठाया लेकिन तुरन्त जहाँ का तहाँ रख दिया। फिर कमरे में टहलने लगी। नाना प्रकार की बातें रजनी के मन में उथल-पुथल मचाने लगीं। कभी वह खिड़की के पास जाकर खड़ी हो जाती, कभी पलंग पर अनमनी-सी लेट जाती, फिर उठती टहलने लगती। पानी का गिलास और गोली ज्यों की त्यों पड़ी रही।

इस बार रजनी कमरे की सामने वाली छत पर आकर टहलने लगी। इतने में ही विभाव साईकिल हाथ में लिए नीचे सड़क पर जाता दिखाई दिया। रजनी को पहले तो अपनी आँखों पर ही विश्वास न हुआ लेकिन फिर उसने आगे बढ़ कर ध्यान से देख तो उसके मुँह से अपने आप निकल पड़ा—

"अरे-अरे जरा सुनिये, कहाँ जा रहे हैं। एक मिनिट के लिये रुकियेगा, मैं आई।"

इतना कह कर रजनी तुरन्त जीने से उतरकर नीचे आ गई। बाहर सड़क पर आकर विभाव से बोली—

"तो आप नाराज हैं। मेरी बात का जबाव तक नहीं दिया। आइये एक मिनिट को तो अन्दर बैठियेगा। मुझे पेपर दिखाने हैं। भैया बाहर गये हैं और आपको तो आजकल समय ही नहीं मिलता—"

विभाव सकपका गया। लेकिन शीघ्र ही उसने बनावटी हँसी हँसते हुए कहा—

"समय-वमय की कोई बात नहीं रजनी लेकिन इस समय मैं न ठहर सकूँगा। गाड़ी वैसे ही खराब हो गई है। एक बहुत जरूरी काम से जाना है।"

रजनी कुछ क्षण तक विभाव की ओर ताकती रही। उसे विभाव की बात सुन आश्चर्य और खेद हुआ। उसने अत्यन्त गम्भीर होकर धीरे से कहा—

"खैर कोई बात नहीं। मैं आपको कैसे रोक सकती हूँ। लेकिन आपसे ऐसी आशा न थी।"

विभाव को राज की बात याद आ गई। उसे कुछ क्रोध आया लेकिन अपने को संयत कर बोला—

"रजनी जिससे जैसी आशा नहीं होती वह वैसा ही करता है। आशा के साथ ही निराशा भी होती है। यदि कोई आवश्यक बात कहनी हो तो यहीं लॉन में कह दो। मेरे पास ऊपर जाकर बैठने का समय नहीं।"

रजनी बोली—" यदि आप अपना अमूल्य समय मुझे देंगे तो बड़ी कृपा होगी।"

इतना कह कर वह चुप हो गई। विभाव ने साईकिल पास

की दुकान पर ठीक करने को दे दी और रजनी के साथ लॉन में आ गया।

यही सात-आठ के बीच का समय होगा। लॉन में चाँदनी रात में चलता हुआ फव्वारा अत्यन्त मनोहर लग रहा था। दोनों घास पर ही नीचे बैठ गए। विभाव को भय था कि बेंच पर बैठने पर सड़क पर आने जाने वाला कोई भी व्यक्ति उन्हें देख सकता था।

रजनी एक दो क्षण मौन रही फिर बोली—"आपके पेपर तो अच्छे हुए होंगे ही। रिजल्ट कब तक निकलने को है!"

विभाव ने तटस्थता से उत्तर दिया—"पहला पेपर बिगड़ गया है और तो ठीक-ठीक हो गये हैं। रिजल्ट का तो अभी कोई पता नहीं। तुम्हारे और उर्मिला के पेपर तो बहुत अच्छे हुए होंगे।"

विभाव ने उर्मिला शब्द पर इतना जोर दिया कि रजनी को आश्चर्य हुए बिना न रहा। वह एक क्षण मौन रह कर बोली—

"पेपर अच्छे तो क्यों नहीं होते। आपने तो इस बार पढ़ाने में कोई कसर ही उठा न रखी। खैर कोई बात नहीं। आप चाहें जितनी मेरी हँसी उड़ा सकते हैं। यह तो समय-समय की बात है।"

इतना कहते-कहते रजनी के नेत्र सजल हो गये किन्तु विभाव यह न देख सका। उसने पूर्व भाव से कहा—

"तुम्हारी जो इच्छा हो तुम कह सकती हो रजनी, लेकिन मनुष्य की सेवा वहीं करनी चाहिये जहाँ उसकी सेवा की

आवश्यकता हो। जहाँ उसके कार्य का सही मूल्य आँका जाये। वरना तो फायदा ही क्या। फिर मेरे बताने न बताने से अन्तर ही क्या पड़ता है और भी बहुत से लोग हैं। इसके अलावा उर्मिला स्वयं 'इन्टेलीजेन्ट' है, उसके साथ पढ़ने पर तो किसी बात की ही कमी रहनी न चाहिये।"

रजनी को विभाव के एक-एक शब्द पर आश्चर्य और खेद हो रहा था। उसने गम्भीर स्वर में कहा—

"आप ठीक ही कहते हैं। मैंने आपके मुँह पर आपकी योग्यता और कृपा के गीत नहीं गाये इसी से आपको लगा कि आपके कार्य का सही मूल्य नहीं आँका जा रहा। आज से पहले भी आपके अतिरिक्त बताने वाले बहुत से थे। लेकिन पहले ऐसी कोई बात आपके मुँह से न निकली। मैंने माना कि उर्मिला 'इन्टेलीजेन्ट' है, लेकिन आखीरकार है तो वह मेरी क्लास-फैलो ही। यह भी ठीक है कि यदि आपको मुझे कुछ बताने में कष्ट होने लगा था तो भी कम-से-कम आना जाना और भैया से मिलना-जुलना तो बन्द न करते। खैर जो होना था सो तो हो गया, अब उस पर एक-दूसरे को भला-बुरा कहने से फायदा ही क्या।"

विभाव एक सेकिन्ड तक चुप रहा। उसके मन में आया कि सारी बात ज्यों-की-त्यों कह डाले लेकिन कुछ सोच कर न जाने क्यों वह मौन रह गया। विभाव ने घड़ी पर दृष्टि डाली और फिर बोला—

"रजनी, गरीबी-अमीरी की दीवारें बहुत ऊँची और मजबूत हैं। आज तक कभी भी दो भिन्न स्तर वाले व्यक्तियों

में मित्रता अधिक समय तक नहीं निभी है। इसके अलावा कुछ कारण और स्वार्थ ऐसे होते हैं जिनके कारण भाई-भाई का खून करने को तैयार हो जाता है। अपने अधिकार का अपहरण सहन करने की शक्ति बहुत ही कम लोगों में होती है। धन-दौलत के अलावा शत्रुता का और भी कोई विशेष कारण हो सकता है। जैसे एक आकाश में दो सूर्य और एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं वैसे ही...वैसे ही...।"

इतना कहते-कहते विभाव चुप हो गया। रजनी विस्मय से उसका चेहरा ताकती रही। फिर गम्भीर होकर बोली—

"मैं आपकी पहेली को थोड़ा-थोड़ा समझने की कोशिश कर रही हूँ। कह नहीं सकती कि समझ पाऊँगी या नहीं। लेकिन सच्ची मित्रता के मूल में यदि उदारता व त्याग नहीं तो वह चाहे जो हो सच्ची मित्रता नहीं हो सकती...।"

रजनी के चुप होते ही विभाव तुरन्त बोल उठा—

"सच्ची और झूठी मित्रता को मैं भी समझता हूँ रजनी। उदारता और त्याग का महत्व भी मुझसे छिपा नहीं। लेकिन तुम्हें यह मालूम होना चाहिये कि एक वस्तु के अभाव में मनुष्य भले ही उस वस्तु का त्याग करने को तत्पर हो जाये लेकिन जैसे ही उक्त वस्तु उसके अधीन हो जाती है, उसकी त्याग-भावना तत्काल लुप्त होने लगती है। अभी मैं मोटरकार के अभाव में बड़े गर्व से कह सकता हूँ कि यदि मेरे पास कार होती तो मैं खुशी से उसका त्याग कर देता, लेकिन यदि अभी कोई मेरी साईकिल ही तीन-चार दिनों के लिए माँग बैठे तो मैं संकट में पड़ जाऊँगा। मेरे साथ ही नहीं यह

बात सब के साथ समान रूप से लागू होती है। फिर उदारता का मतलब यह तो नहीं कि व्यक्ति अपना अधिकार ही नष्ट होने दे। जो मनुष्य अपने अधिकार को खोकर उदारता का गर्व करता है वह स्वयं को धोखा देता है। सच बात तो यह है कि उसमें अपने अधिकार की रक्षा करने की शक्ति व योग्यता ही नहीं। फिर यह तो निर्बलता हुई। उदारता कैसे? मैं फिर कहता हूँ कि एक थाली में दस व्यक्ति खा सकते हैं, एक ही घर में पचास लोग रह सकते हैं लेकिन………लेकिन एक ही……।"

इतना कहते-कहते विभाव तुरन्त चुप हो गया और तत्काल उठ खड़ा हुआ। रजनी कुछ भी न कह सकी। वह व्याकुल हो उठी। उसे लगा कि वह कोई स्वप्न देख रही है।

रात को जब राज और उर्मिला सिनेमा से लौटे तो रजनी ने उनसे इधर-उधर की मामूली बात कर शीघ्र ही सोने जाने की इच्छा प्रकट की। जब वह कमरे में आई तो सिर दर्द की गोली और पानी से भरा गिलास अभी भी ज्यों-का-त्यों पड़ा दिखाई दिया। उसने गोली उठाई और बाहर नीचे फेंक दी।

विभाव जब लौट कर घर आया तो जैसे ही वह जीने पर चढ़ने लगा कि संचारी नीचे उतरता हुआ मिला। वह आश्चर्य से बोल पड़ा—

"अरे भैया, आप अब आ रहे हैं, पिताजी तो कभी के घर आ गये। आप क्या स्टेशन देर से पहुँचे थे या प्लेटफार्म पर भीड़ के कारण मिलना न हो सका?"

विभाव भला इसका क्या उत्तर देता?

: २२ :

यदि माता-पिता का हृदय भी उनकी सन्तान की भाँति कठोर तथा तार्किक होता, तो सम्भवतः सन्तान के अयोग्य निकल जाने पर उन्हें इतनी निराशा तथा विषाद न होता। लेकिन सब कुछ सहन करते हुए भी वे अपनी सन्तान के कल्याण और उन्नति के लिये सब कुछ उत्सर्ग करने को तत्पर रहते हैं ? और इस त्याग के बदले में वे अपनी सन्तान से केवल स्नेह और सम्मान की आशा करते हैं।

पंडित श्रीनाथ ने यह निश्चय कर लिया था कि अब वे विभाव से उसके विवाह के सम्बन्ध में एक शब्द भी नहीं कहेंगे। जिस क्षण उन्हें विभाव का चार पंक्तियों का पोस्ट कार्ड मिला, उन्हें इतना क्षोभ हुआ कि एक-दो दिन उन्होंने ठीक प्रकार से भोजन न किया और न ही किसी से अपने हृदय का दुःख कहा। घर पर आने पर भी एक-दो दिन उन्होंने विवाह-सम्बन्धी कोई बात न की। जब कभी सुलोचना अथवा और किसी ने इस प्रसंग को चलाने का प्रयत्न भी किया तो श्रीनाथ मौन ही रहे। वे जानते थे कि यदि इस सम्बन्ध में बात चली तो उन्हें क्रोध आये बिना नहीं रह सकता। लेकिन कल रात को जब उनके पुराने मित्र और सहपाठी प्रेमचन्द जी ने विवाह की बात छेड़ ही दी तो न चाहते हुए भी श्रीनाथ को अपना निश्चय बदलना ही पड़ा। उन्हें क्रोध तो आया लेकिन किसी प्रकार उन्होंने बात बढ़ने के भय से स्वयं को नियन्त्रित रखा।

यदि एक ही बात को घुमा-फिरा कर अनेक बार दोह-राया जाय तो कुछ समय बाद व्यक्ति पर असर पड़े बिना नहीं रहता। घर के सभी लोगों ने श्रीनाथ से अनुरोध किया कि वे एक बार फिर विभाव को समझायें, उसके मन की बात जानने का प्रयत्न करें ताकि कल को किसी को अँगुली उठाने का अवसर न मिले। और-तो-और अधीर ही कल रात को भोजन आदि से निपटने के बाद कहानी सुनते-सुनते जब तृप्त हो गया तो बोला—

"पिताजी, आपने कहा था कि इन छुट्टियों में भैया की शादी होगी, बरात जायेगी, खूब बाजे बजेंगे, अच्छी-अच्छी चीजें खाने को बनेंगी, बिजली के बहुत बड़े-बड़े लट्टू लगेंगे और सबके लिये बहुत सुन्दर-सुन्दर कपड़े बनेंगे, फिर भाभी आयेगी और न जाने क्या-क्या होगा लेकिन पिताजी छुट्टियाँ हुए तो पन्द्रह दिन होने आये और अभी कोई बात ही नहीं।"

श्रीनाथ को अधीर की बाल-सुलभ बात सुन कर प्रसन्नता हुई लेकिन बात टालने के लिये बोले—

"शादी तो हो ही जायेगी बेटा, लेकिन कब होगी मैं नहीं कह सकता। रही अच्छे-अच्छे कपड़ों और खाने की चीज़ों की बात, तो तुम जब कहो मैं तुम्हारे लिये अच्छे-अच्छे कपड़े सिलवा दूँ, खाने की चीज़ें ला दूँ। शादी से क्या मतलब।"

अधीर कुछ देर के लिये मौन हो गया फिर कुछ रूआँसा-सा होकर बोला—

"क्यों पिताजी, क्या अपन भैया की शादी में नहीं जायेंगे ? भैया अकेले ही शादी करने जायेंगे तो सब पूछेंगे बराती कहाँ

हैं ? माँ तो कहती थीं कि भैया की शादी में मुझे भी घोडे पर बैठने को मिलेगा। भैया के जैसे ही कपड़े बनेंगे। मैंने अपने कई दोस्तों से कह रखा है, सब दावत खाने आयेंगे। अभी थोड़े दिन पहले केसव के भाई की शादी हुई थी तो पिताजी वह तीन बार घोड़े पर चढ़ा था। हम सबने चार दिन तक उसी के यहाँ खाना खाया। सच कहता हूँ पिताजी, खाना बहुत अच्छा बनता था। केसव ने भी मुझसे कह दिया था कि यदि मैं अपने भैया की शादी में उसे नहीं बुलाऊँगा तो वह मुझे पीटेगा। मैंने भी कह दिया कि मेरे भैया की शादी में तो इससे भी बढ़िया मिठाई बनेगी। आप यह क्यों...... ।"

श्रीनाथ बड़े चाव से अधीर की बातें सुन रहे थे। उन्हें उसकी उत्सुकता देख प्रसन्नता हो रही थी और साथ ही निराशा भी। वे अपने मन की बात किससे कहते ? अधीर को बहलाने के भाव से बोले—

'लेकिन बेटा, तेरा भैया शादी करने को तैयार ही नहीं। उसकी जब मरज़ी होगी, कर लेगा । मैं क्या कहूँ। अब बहुत देर हो गई तुम सो जाओ।"

अधीर खाट पर पड़ा-पड़ा तारे देख रहा था और बड़ी प्रसन्नता से बात-चीत भी करता जा रहा था। पिताजी की बात सुनकर उसे कुछ निराशा हुई लेकिन वह तत्काल बोला—

"भैया शादी करने को तैयार क्यों नहीं हैं पिताजी। उनको भी तो अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने को मिलेंगे। वे भी तो घोड़े पर चढ़ेंगे। आप उनसे कहकर तो देखिये। अगर भैया शादी न करेंगे तो भाभी कैसे आयेगी। भैया खुद मुझसे कह रहे

थे कि बहुत जल्दी ही भाभी आने वाली है। भाभी अकेली कैसे आयेगी ?

श्रीनाथ कुछ क्षण तक सोचते रहे, फिर बोले—

"अच्छा अभी तो तुम सो जाओ बेटा, कल तुम्हारे भैया से मैं जरूर बात करूँगा।"

बहुत देर तक श्रीनाथ को नींद न आई। वे पड़े-पड़े सोचते रहे—

"यदि मैं विभाव से विवाह के लिये कहूँ और फिर वह वही दो-टूक उत्तर दे तो मेरा क्या मुँह रहेगा। मैं उसे बाध्य तो नहीं कर सकता। लेकिन यदि कल को कोई बात हुई तो बदनामी मेरे ही सिर पर आयेगी। वह तो कह देगा कि माता-पिता ने ध्यान ही नहीं दिया। तो क्या करूँ। एक बार फिर कहकर देखूँ। उसके मन की बात तो पता चले। कहीं सचमुच ही यह रजनी के फेर में तो नहीं पड़ा है। यदि ऐसा हुआ तो बड़ी बदनामी होगी। वे बनिया हैं हम ब्राह्मण, लोग क्या कहेंगे। लेकिन मेरे मना करने से भी क्या होगा। पर अपनी तरफ से तो और प्रयत्न कर देखूँ........।"

आज प्रातःकाल विभाव इस निश्चय से घर से निकलने वाला था कि वह, चाहे जो हो उर्मिला की माँ से मिलकर विवाह के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय करके ही मानेगा। वैसे उसे आशा तो बहुत कम थी लेकिन फिर भी उसका मन बार-बार सर्वदा और उर्मिला से मिलने को बाध्य कर रहा था।

सुबह नाश्ते से निपट कर जब वह नहाकर आया तो कमरे में श्रीनाथ चुपचाप कुर्सी पर बैठे कुछ सोच रहे थे।

एक-दो क्षण ठहर कर वे कुछ प्रसन्न होकर बोले—

"बेटा, तुम्हारा, परीक्षा-परिणाम कब घोषित होगा। मैंने उन लोगों को यह कह कर टाल दिया है कि जब तक तुम पास होकर नौकरी में नहीं आ जाते तब तकविवाह न हो सकेगा। मैं यह जानना चाहता था कि······विभाव को एकदम क्रोध आगया। वह बीच में ही बोल उठा—

"पिताजी, मैं अपने पत्र में आपको स्पष्ट लिख चुका हूँ कि मुझे शादी नहीं करनी, नहीं करनी, लेकिन आप घुमा-फिरा के वही बात कहते हैं। यदि आप से मना करते नहीं बनता तो मुझे कहिए, मैं उन्हें साफ-साफ लिख दूँ।"

रसोई में जैसे ही सुलोचना ने विवाह की बात सुनी वह काभी सारा र्य तुरन्त छोड़ कर कमरे में आ पहुँची।

श्रीनाथ को विभाव की बात सुन क्रोध आया लेकिन उन्होंने सरल भाव से कहा—

"मना करने में क्या रखा है। मना तो मैं ही कर सकता हूँ। लेकिन मैं मना करना चाहता जो नहीं। यदि तुम्हें लड़की या परिवार पसन्द न हो तो तुम्हीं कोई अन्य सम्बन्ध बताओ, उस पर भी विचार किया जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि इसी सम्बन्ध को मान लिया जाय। तुम्हारी पसन्द-बेपसन्द का बहुत मूल्य है।"

"लेकिन मुझे विवाह करना ही नहीं।" विभाव ने तुरन्त कहना आरम्भ किया—"फिर जब आपको मेरी पसन्द-बेपसन्द के अनुसार कार्य करना है तो आप क्यों परेशान होते हैं। यह

मामला मुझ पर ही छोड़ दीजिये। जब मुझे आवश्यकता अनुभव होगी मैं आपसे कहूँगा। या फिर······।

इतना कहते-कहते विभाव तत्काल चुप हो गया। श्रीनाथ के बोलने से पहले ही सुलोचना बोल उठी—"लेकिन भैया, तुम्हारी पसन्द के साथ-ही-साथ हमारी भी तो कोई इच्छा है। माता-पिता, भाई-बहन के होते हुए यदि स्वयं लड़का अपना ब्याह करे तो लोग क्या कहेंगे। शादी-ब्याह जैसी चीज तो सबकी मर्ज़ी मुताबिक होनी चाहिए।"

विभाव फिर क्रोधित हो उठा और कुछ तीखे स्वर में बोला—

"तो फिर आप मुझसे पूछ ही क्यों रही हैं। जहाँ इच्छा हो सम्बन्ध तय कर दीजिए। मैं भी मशीन की तरह आप जैसा कहेंगी, करता चलूँगा। कम से कम आपकी इच्छा तो पूरी हो जायेगी। मेरा जीवन जहर हो जाये तो कोई बात नहीं।"

इतना कहते-कहते विभाव ने फौरन जूते पहने और बड़-बड़ाता हुआ घर से निकल पड़ा। उसने साइकिल नहीं ली। सामने ही बस तैयार थी वह तुरन्त जा बैठा।

ज्योंही विभाव बस से उतर कर सर्वदा के क्वार्टर की ओर मुड़ा कि राज की कार क्वार्टर के सामने खड़ी देख उसका क्रोध भड़क उठा। उसके जी में आया कि तुरन्त कार के काँच फोड़ डाले। लेकिन फिर कुछ सोचकर वहीं एक पेड़ की आड़ में खड़ा हो गया।

थोड़ी देर में रजनी, राज, उर्मिला और सर्वदा क्वार्टर के बाहर निकले। चारों बड़े प्रसन्न थे। राज, रजनी और

उर्मिला तुरन्त गाड़ी में बैठ गए। सर्वदा हँसती हुई दरवाजे पर खड़ी रह गई और कार धीरे-धीरे चल दी।

पहले तो विभाव के मन में आया कि वह उल्टे पैर लौट जाये, लेकिन आज उसे अन्तिम निर्णय जो करना था। अतः दस-पाँच मिनट इधर-उधर घूमने के बाद वह सर्वदा के क्वार्टर पर पहुँचा और बड़े धीरे से दरवाजा खट-खटाया।

सर्वदा ने थोड़ी देर में दरवाजा खोला। विभाव हाथ जोड़ता हुआ बड़े ही अनुरोध के भाव से बोला—

"आपसे मैं गत पन्द्रह-बीस दिन से न मिल सका इसके लिए क्षमा चाहता हूँ।"

इतना कहते हुए वह अन्दर आँगन में आ गया। थोड़ी देर तक प्रतीक्षा करने के बाद उसने स्वयं ही पास पड़ी कुर्सी खींच ली और बैठते हुए बोला—

"आप भी बैठियेगा। आप मंगलपुर से कब लौटीं, मुझे तो कुछ पता ही न चला। मैं स्वयं इन दिनों में काफी 'बिज़ी' था।"

सर्वदा चारपाई पर एक पैर रख कर वहीं खड़ी हो गई और थोड़ी देर चुप रह कर बोली—

"कोई बात नहीं, समयाभाव तो हो ही जाता है। मंगल-पुर से आये हुए पाँच-छः दिन से अधिक हो गये।"

इतना कह कर वह चुप हो गई। विभाव को कुछ निराशा हुई लेकिन वह हँसता हुआ कुछ उत्सुकता के भाव से बोला—

"अच्छा उर्मिलाजी के पेपर तो बहुत अच्छे हो गये होंगे।

वे कहाँ हैं ? मिलना ही न हो सका। रिज़ल्ट कब तक निक-लेगा ?"

सर्वदा ने बड़ी लापरवाही से उत्तर दिया—"अरे अब पेपर अच्छे-बुरे होने की क्या चिन्ता। रिजल्ट भी जब निक-लना होगा निकल जायेगा। अब उसे कोई आगे पढ़ना थोड़ा ही है, जो पास होने की चिन्ता हो।"

विभाव ने फिर उत्सुकता के भाव से पूछा—"क्यों, आगे पढ़ाने का आपका विचार नहीं। क्या कोई 'सर्विस' वगैरह में डालने का विचार है ?"

"नहीं, नहीं 'सर्विस' की तो बात नहीं" सर्वदा ने कहना आरम्भ किया—"तुम्हें तो मालूम होगा कि राज से उसके विवाह की बात तय हो गई है। अब तुम ही कहो, भला राज से अच्छा और कौन लड़का हो सकता है। परिवार भी बहुत सम्पन्न है। यह तो मेरा और उमा का भाग्य समझो कि राज ने मेरे कहे बिना स्वयं ही यह प्रस्ताव रखा और स्वीकार कर लिया। मुझे आश्चर्य है कि उसने अभी तक तुमसे नहीं कहा। आस-पड़ोस में तो सबको यह खुशखबरी मिल चुकी है। राज के मुँह से तुम्हारे विवाह की बात सुन कर बड़ी खुशी हुई। मुझे तो लड़की का 'शोभा' नाम बहुत पसन्द आया। कब तक विवाह का विचार है। ऐसा न हो कि अपने विवाह में व्यस्त होने के कारण अपने मित्र के विवाह की बात ही भूल जाओ।"

विभाव को लगा कि आसमान से उसे किसी ने धरती पर पटक दिया हो। वह कुछ न बोल सका। कहता भी तो

क्या कहता। उसके कान गरम होने लगे, चेहरे पर पसीना आ गया। होंठ काँपने-से लगे। किसी प्रकार अपने को संयत कर वह बोला—

"विवाह की बात सुन कर बड़ी खुशी हुई। मुझे आज रात की गाड़ी से ही बाहर जाना है। कह नहीं सकता कि फिर कब तक लौटूंगा। अभी जरा जरूरी काम है। एक-दो लोगों से मिलना भी है—"

इतना कह कर वह तत्काल उठ खड़ा हुआ और एकदम बाहर निकल पड़ा। सर्वदा भी कुछ न बोली। उसे अनुभव हुआ कि राज ने जो कुछ कहा वह सब सत्य है।

विभाव जब घर लौटा तो माता-पिता दोनों में विवाह की बात को लेकर कुछ लड़ते-झगड़ते पाया। सुलोचना कह रही थी—

"......आप भी कितनी जल्दी करते हैं। सभी लड़के ऐसी बातें किया करते हैं। यदि आप राज से मिल कर विभाव और रजनी के सम्बन्ध की बात कह भी दें तो इसमें अपनी ही बदनामी होगी, हो सकता है वह आपको ही कुछ उल्टा-सीधा सुना दे। वे बड़े आदमी हैं, बुराई तो हमारे ही सिर आ कर पड़ेगी। कल को यदि यह बात उड़ गई तो कोई भी भला आदमी अपनी लड़की नहीं देगा। इसलिए जरा धैर्य रखिये। हो सकता है कि विभाव या राज की ओर से यह प्रश्न हमारे सामने आये। अभी तो......"

विभाव कुछ मिनट जीने पर चुपचाप खड़ा-खड़ा माँ की बात सुनता रहा। उसे राज पर और भी क्रोध आने लगा।

यदि कहीं राज सामने होता तो वह उसका काम तमाम करके ही मानता; लेकिन इतने में ही अधीर जीने की ऊपर की सीढ़ी पर से खड़ा होकर कुछ जोर से बोल पड़ा—

"भैया, चुपचाप क्या सुन रहे हो, तुम्हारी शादी की ही बात हो रही है। मैं आपको कब से ढूंढ रहा हूँ। मैं पास हो गया हूँ, क्लास में दूसरा रैंक लगा है। पिताजी ने एक रुपया और अम्मा ने आठ आने इनाम दिये हैं। आप से तो मिठाई खा कर ही मानूँगा।"

विभाव हँसता हुआ अधीर की बात सुनता रहा। उसने झट से ऊपर पहुँच कर अधीर को बड़े स्नेह से गोद में उठा लिया और बोला—

"अभी तो मेरे पास भी केवल अठन्नी है अधीर, सो तू ले सकता है, आठ आने शाम को दे दूँगा।"

अधीर ने फौरन अठन्नी ले ली और भाग खड़ा हुआ।

: २३ :

कोई नहीं कह सकता कि अगले क्षण में क्या हो जाये। फिर भी हम जब रात को चैन से विश्राम करने आये हैं तो जब तक नींद नहीं आती तब तक पड़े-पड़े प्राय: यह सोचते हैं कि कल किससे मिलना है, कौन व्यक्ति घर आने वाला है। प्रात:काल उठते ही कल सबसे पहले अमुक व्यक्ति से मिलना है, फिर उसके साथ अमुक स्थान पर जाना है। कल 'पेमेंट' भी तो होना है। शाम को घर लौटते समय मिठाई लानी है। तो कल शायद सिनेमा जाना तो न हो सकेगा।

कहने का आशय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी स्थिति तथा कार्य के अनुसार आने वाले कल के लिये न जाने कितनी योजनाएँ बना डालता है। लेकिन कभी-कभी जब प्रात:-काल उठने पर किसी की चिर-निद्रा की अशुभ सूचना मिलती है तो गहरी निराशा और जीवन के प्रति क्षोभ का-सा भाव उत्पन्न हुए बिना नहीं रहता।

कल रात को सोने जाने से पूर्व ब्रजनाथ बाबू होटल के सामने वाले सुन्दर पार्क में बैठे-बैठे अपने प्राइवेट सेक्रेटरी आनन्द से न जाने कितने विषयों पर, कितनी देर तक बातें करते रहे। सूर्यास्त के पश्चात् वे अपने कमरे में आगये और वार्त्तालाप का क्रम फिर चल पड़ा।

अब तीन-चार दिन में ब्रजनाथ बाबू पुन: शिवपुर जाने का विचार कर रहे थे। वैसे वह चाहते थे कि कुछ दिनों घर

जाकर वे अपने पुत्र-पुत्री के साथ भी रहें लेकिन न जाने क्या सोचकर उन्होंने यह निश्चय किया कि वे राज और रजनी को ही शिवपुर बुला लेंगे। उन्होंने आनन्द को आदेश दिया कि वह कुछ दिन घर चला जाय और जब तक राज शिवपुर से न लौटे वह फर्म का कार्य सम्भाले और घर की देख-रेख भी करे।

आनन्द को ब्रजनाथ बाबू की बातें सुन कर आश्चर्य तो हुआ लेकिन वह कुछ कह न सका। गत सप्ताह से वह शिमला के उसी होटल में, जिसमें ब्रजनाथ बाबू गत एक माह से टिके थे, रह रहा था। आनन्द ने कई बार अनुभव किया कि ब्रजनाथ बाबू पहले की अपेक्षा अधिक चिन्तित रहने लगे थे। साधारण-सी बात पर उन्हें बड़ी जल्दी क्रोध आ जाता था। जीवन के प्रति निराशा की भावना दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। बात करते-करते वे कई बार व्याकुल-से हो जाते थे। फर्म के सम्बन्ध में की वे क्रमशः तटस्थ से होते जा रहे थे। एक-दो बार आनन्द ने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया तो उन्होंने अरुचि प्रदर्शित करते हुए अधिक परेशान न करने का संकेत दिया।

लेकिन आज तीन-चार घन्टे तक ब्रजनाथ बाबू बड़ी सरलता और स्नेह से आनन्द से बातें करते रहे। उन्होंने उसके कार्य की भूरी-भूरी प्रशंसा भी की। उन्होंने कुछ अनुरोध के भाव से आनन्द को एक-दो दिन शिमले में ही ठहरने को कहा।

प्रातःकाल सुबह की डाक से ब्रजनाथ बाबू को राज का

एक लिफाफा मिला। लिफाफे का भार अनुभव कर ब्रजनाथ बाबू ने अनुमान लगाया कि फर्म के कोई आवश्यक कागजात पत्र के साथ होंगे। उन्होंने बड़े सरल भाव से लिफाफा खोला। पत्र का विस्तार देख कर उन्हें आश्चर्य हुआ। उन्होंने पत्र पढ़ना आरम्भ किया—

"अदरणीय पापा जी

सादर प्रणाम,

आपका कृपापत्र गत सप्ताह में प्राप्त हुआ, किन्तु एक अत्यन्त आवश्यक कार्य में व्यस्त होने के कारण मैं शीघ्र उत्तर न दे सका। आशा है कि रजनी के पत्रों से आपको घर का समाचार तो मिलता रहा होगा।

यह पत्र मैं एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण विषय के सम्बन्ध में लिख रहा हूँ। वैसे मैं चाहता था कि मैं व्यक्तिगत रूप से शिमला आकर आपसे मिलूँ और सम्पूर्ण स्थिति से आपको अवगत करा सकूँ। लेकिन समयाभाव के कारण मैं ऐसा न कर सका। आशा है आप क्षमा करेंगे।"

ब्रजनाथ बाबू को कुछ आश्चर्य हुआ। वे पलंग पर तकिये का सहारा लेते हुए बैठ गये और अधिक उत्सुकता से उन्होंने आगे पढ़ना आरम्भ किया—

"गत मास में जब मैं आपके पास शिमला आया था तो आपने मेरे से विवाह की बातचीत की थी। आपने पत्रों में भी आपने अनेक बार सेठ श्री श्यामनारायणजी की पुत्री के सम्बन्ध में मेरा अन्तिम निर्णय जानना चाहा, लेकिन मुझे

खेद है कि कई कारणों-वश आपको अभी तक अपना निश्चित मत प्रकट न कर सका ।

अभी तक के जीवन में कभी ऐसा अवसर नहीं आया जब कि मैंने या रजनी ने आपसे कोई बात कही हो और आपने उसे न माना हो । मेरी अभी तक कोई अभिलाषा अधूरी नहीं रही है । जब कभी मैं अपने गत जीवन के सम्बन्ध में विचार करता हूँ तो मुझे अनुमान होता है कि मैं सम्भवतः संसार-भर में सबसे खुश इन्सान हूँ जिसे आप जैसे उदार और सहृदय पिता का पुत्र होने का सौभाग्य प्राप्त है । मैं नहीं कह सकता कि भविष्य में मैं स्वयं के लिये कभी इतना महान् त्याग कर सकूँगा जितना आपने मेरे लिये किया और आगे भी करने को तत्पर हैं ।

पापा जी, आपको विदित है कि प्रत्येक माता-पिता अपने बच्चों को बड़े ही कष्ट से पालते हैं, बड़ा करते, स्वयं की अनेक आवश्यकताओं को टाल कर उन्हें उच्च शिक्षा दिलवाते हैं, अच्छी-से-अच्छी नौकरी की व्यवस्था करते हैं, उत्तम-से-उत्तम विवाह करने की उनकी हार्दिक कामना होती है और इन सब के मूल में अपनी सन्तान के सुखमय जीवन की ही भावना प्रधान होती है ।

जब मैं आपसे पहले मिला था तब मेरा विवाह करने का कोई विचार न था । रजनी के विवाह का प्रश्न मेरे लिये प्रधान था । आज भी मुझे पहले उसी के विवाह की चिन्ता है । मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि मैं अपनी छोटी बहन को किसी उच्च, सम्पन्न तथा योग्य वर के हाथों में सौंपकर सदा

फलता-फूलता देख सकूँ। इसे मेरे जीवन की साध समझियेगा।

लेकिन आप जानते हैं कि मनुष्य परिस्थितियों का दास होता है। कभी-कभी ऐसे भी अवसर आते हैं जब व्यक्ति को दूसरे की सुख-सुविधा के लिये अपने निश्चय तथा सिद्धान्तों में हेर-फेर करना पड़ता है। कारण यह है कि मनुष्य का जीवन इतना सापेक्ष है कि वह हर मामले में नितान्त व्यक्तिगत हो ही नहीं सकता।''

पत्र पढ़ते-पढ़ते ब्रजनाथ गम्भीर हो गये। वे कुछ सीधे तन कर बैठ गये और बड़ी तत्परता से उन्होंने पत्र आगे पढ़ना आरम्भ किया—

''मैं जब शिमला में आपसे मिला था तो उर्मिला तथा उसकी माँ सर्वदा के सम्बन्ध में कुछ बातचीत हुई थी। आपने स्वयं मुझसे इस सम्बन्ध में तीन-चार प्रश्न किये थे। मेरा अनुमान सही निकला।

इसमें सन्देह नहीं कि सर्वदा एक निःसहाय लेकिन उच्च विचारों वाली आदर्श महिला है। उसने स्वयं के अथक परिश्रम से अपना और अपनी इकलौती कन्या उर्मिला का जीवन-निर्माण किया है। उर्मिला रजनी की सहपाठिनी तथा पक्की सहेली है। दोनों में प्रगाढ़ स्नेह तथा गहरी आत्मीयता है। मैं स्वयं गत एक-दो वर्षों में उर्मिला के निकट सम्पर्क में आ चुका हूँ। मुझे यह स्वीकार करने में कोई हिचकिचाहट न होनी चाहिये कि उर्मिला की मानसिक और शारीरिक सुन्दरता, उत्तम आचरण, मृदुलता और पवित्र स्नेह का गहरा प्रभाव मुझ पर पड़ा है। रजनी भी उसकी इन विशेषताओं से अत्यन्त प्रभावित

है। इसके अतिरिक्त सर्वदा तथा उसके साधना-पूर्ण जीवन के प्रति मेरी पूरी सहानुभूति व श्रद्धा है। इन सब बातों से प्रभावित हो मैं सर्वदा को वचन दे चुका हूँ कि मैं शीघ्र ही उर्मिला से विवाह कर उसे चिन्तामुक्त कर दूँगा।"

ब्रजनाथ ने पत्र एक ओर रख दिया। उनके हाथ काँपने लगे, आँखों के आगे अन्धेरा-सा छा गया, चेहरे पर पसीने की बूँदे छा गईं। उन्होंने एक पैग विस्की अपने गले के नीचे उतारी और बड़ी कठिनाई से पत्र आगे पढ़ना आरम्भ किया—

"सर्वदा और उर्मिला ने भी सहर्ष मेरे प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया है और आस-पड़ौस में भी लोगों को इस बात की भनक मिल चुकी है। पापाजी, मेरे व्यक्तिगत निर्णय और जल्दबाज़ी के लिये आशा है आप क्षमा करेंगे। परिस्थितियों के कारण मैं बाध्य हूँ अन्यथा शायद इतनी शीघ्रता न करता। लेकिन मैं आपको 'इन्टर कास्ट' अथवा 'कोर्ट मैरिज' के लिये तो बाध्य नहीं कर रहा और इस कारण मुझे विश्वास है कि मेरे निश्चय को स्वीकार करने में आपको कोई आपत्ति न होगी।

यदि आपने सामाजिक बन्धन अथवा अर्थ-भेद के कारण मेरी हार्दिक इच्छा को ठुकरा दिया तो या तो मुझे ही कोई अन्य मार्ग चुनना होगा। या फिर आपकी इच्छा को पूरा करने के लिये आजन्म कुँवारा रहने की शपथ लेनी होगी। मैं नहीं कह सकता कि मैं इस आघात को सहन कर भी सकूँगा या नहीं। मुझे विश्वास है कि आप मेरी स्थिति और हार्दिक-भावना को सहानुभूति से समझने का प्रयत्न करेंगे और जीवन

की इस महत्वपूर्ण साध को पूरी करने में मुझे आपका शुभाशीर्वाद अवश्य प्राप्त होगा।

शेष सब बातें मिलने पर ही हो सकेंगी। आपके दर्शन की तीव्र प्रतीक्षा है। यदि आपको रुपये की आवश्यकता हो तो तत्काल सूचित कीजियेगा ताकि मैं तार द्वारा रुपये भेजने की व्यवस्था कर सकूँ।

योग्य सेवा के लिये प्रस्तुत

आपका

राज"

पत्र समाप्त करते-करते ब्रजनाथ बाबू आँख बन्द कर पलंग पर लेट गये। लगभग दस-पन्द्रह मिनिट तक वे इसी स्थिति में विचार-सागर में न जाने कितने गोते खाते रहे। इसके बाद बड़ी कठिनाई से वे उठे, 'विस्की' के एक-दो पैग चढ़ाये और तत्काल आनन्द को बुलाकर आज रात को ही घर जाने की व्यवस्था करने का आदेश दिया। आनन्द को कुछ आश्चर्य हुआ पर वह केवल इतना ही कह सका।

"यदि···यदि···मेरे कहने का मतलब यह है कि अगर आपको कोई असुविधा हो तो मैं भी आपके साथ चलूँ या फिर···।"

आनन्द का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही ब्रजनाथ बाबू कुछ तीखे स्वर में बोल पड़े—

"तो तुम और कहाँ जाओगे? कहने का मतलब समझा करो। आज शाम तक सारा प्रबन्ध हो जाना चाहिये। समझे।"

: २४ :

बात चाहे अच्छी हो या बुरी, असाधारण हो या सामान्य, यदि किसी 'बड़े आदमी' के परिवार से सम्बन्धित होती है, तो तत्काल ही बिजली की तरह फैलती जाती है। सुदेश नगर में एक ओर तो सर्वोदय-सम्मेलन तथा श्री विनोबा के शुभागमन की हलचल मची थी तो दूसरी ओर स्थान-स्थान पर खड़े लोग परस्पर कानाफूसी कर रहे थे कि रायसाहब ब्रजनाथ बाबू के पुत्र राज का विवाह सर्वदा—एक अध्यापिका—की लड़की से हो रहा है। महिला मंडल में सर्वदा तथा उसकी एकमात्र इकलौती कन्या उर्मिला के भाग्य की सराहना करने वाले तो एक-दो मुँह ही थे लेकिन कटु आलोचना तथा नाना प्रकार के आरोप हर एक मुँह से बिना कहे सुनने को मिल रहे थे। ब्रजनाथ बाबू शहर के लखपतियों में अपनी धाक रखते थे, इस-लिए मन में चाहे जो बात हो ऊपर से लोग रायसाहब के हृदय की उदारता तथा राजनारायण के आदर्श विचारों के गीत गाते-गाते न थकते।

और-तो-और प्रातःकाल बेचारा विभाव शहर से लौट रहा था कि बस स्टैंड पर न जाने कैसे मिस मँजू आ पहुँची। एक-दो मिनट में ही दोनों की बातचीत घूम-फिर के उर्मिला तथा राज के विवाह पर केन्द्रित हो गई। मँजू की बातचीत से विभाव को यह अनुमान हो गया कि अब इस बेचारी का पत्ता भी राज के यहाँ से कटने वाला है, कहीं इसका भी रेणु-

जैसा हाल न हो। लेकिन वह साफ-साफ शब्दों में मँजू से अपना भाव व्यक्त न कर सका।

जिस दिन सर्वदा, राज व रजनी के बीच उर्मिला के विवाह का अन्तिम निश्चय हुआ, उस दिन से उर्मिला का राज के यहाँ उठना-बैठना बहुत ही कम हो गया था। रात को कभी-कभी सेकिन्ड शो में सिनेमा या सैर करने जाने की बात दूसरी थी। रजनी ने भी सर्वदा तथा अपने भैया से कह दिया था कि अब तो वह उर्मिला को भाभी बनाकर ही अपने घर स्वागत करेगी। विवाह से पहले नहीं।

आज शाम को लगभग चार-पाँच बजे राज, रजनी तथा सर्वदा तीनों विवाह-सम्बन्धी अनेक प्रसंगों पर एक-दो घंटे से विचार-विमर्श कर रहे थे। रजनी की खुशी का तो कोई ठिकाना ही न था। वह कई बार सर्वदा से कह चुकी थी कि—"मौसीजी, आपको कोई तैयारी नहीं करनी है, बस अपने सगे-सम्बन्धियों को जिन्हें आप आमन्त्रित करना आवश्यक समझें सूचित कर दीजियेगा। बाकी का सारा काम अपने-आप हो जायेगा।"

वार्त्तालाप के प्रसंग में सर्वदा ने कई बार जब राज से पूछा कि उसने यह शुभ सूचना अपने पिताजी को दे दी या नहीं, उनका क्या कहना है, वे कब तक आयेंगे, तो राज को अपने पत्र के सम्बन्ध में सर्वदा को सब-कुछ बताना ही पड़ा। वह बोला—

"मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि पापाजी को इस सम्बन्ध में कोई आपत्ति हो ही नहीं सकती। उन्होंने आज

तक चाहे जो हो मेरी और रजनी की कोई बात उठा नहीं रखी है। उन्हें आपत्ति हो भी तो क्यों, किस कारण। वे स्वयं ही मेरे विवाह के कब से पीछे पड़े हैं। आप यों ही संशय में पड़ कर चिन्तित हो रही हैं।"

बेचारी सर्वदा आगे क्या कहती। बातचीत होते-होते जब विभाव के विवाह का प्रसंग आया तो रजनी को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उसे विभाव की कही हुई एक-एक बात याद आने लगी वह सोचने लगी। कि 'एक म्यान में दो तलवार नहीं रह सकतीं' वाक्य वह बार-बार क्यों दोहरा रहा था। भैया भी विभाव का अब नाम ही नहीं लेते। गत पन्द्रह दिनों से उसका कभी घर आना हुआ ही नहीं। आखीरकार बात है तो क्या। भैया के विवाह की सूचना सारे शहर में फैल गई है, क्या विभाव ने अब तक कुछ न सुना होगा। आजकल संचारी भी नित्य हारमोनियम सुनने नहीं आता। भैया उससे भी अधिक बातचीत नहीं करते। न जाने क्या बात है। रही उर्मिला के विवाह की बात तो भला विभाव के घर वाले क्यों अन्तर्जातीय विवाह को मानने लगे। फिर आज तक उर्मिला ने भी विभाव के प्रति कोई विशेष भाव प्रकट नहीं किया।"

इस प्रकार की अनेकानेक बातें सोचते हुए रजनी कुछ गम्भीर हो गई। वह राज व सर्वदा की बात का उत्तर हाँ और ना में देती जरूर जा रही थी लेकिन उसे उनकी बात-चीत के प्रसंग का उसे कोई अनुमान न था।

राज ने रजनी को सम्बोधित कर कहा—

"रजनी तू चुपचाप क्या सोच रही है। तेरी भी जल्द

ही सुनाई होगी, निराश क्यों होती है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि मैंने सम्मेलन के बहुत से टिकट ले लिये हैं। ले क्या लिये लेने पड़ गए। उनमें से एक-दो ही बिक सके हैं, बाकी के पैसे तो जेब से ही भरने होंगे। इसलिए आज रात्रि को अपना सब ही क्यों न सम्मेलन में चले चलें। सुना है प्रदर्शनी तो बहुत ही सुन्दर सजाई गई है।"

रजनी अपने भैया की बात सुन कुछ शरमा गई लेकिन अपने भावों को छिपाते हुए बोली—

'भैया, आप टिकटों की बात लेकर परेशान क्यों हो रहे हैं। हमें तो वैसे ही सम्मेलन में जितना योग हो सके देना चाहिये। भला इससे बढ़कर राष्ट्र-उन्नति में सहयोग देने का और कौन-सा शुभ अवसर हो सकता है।"

तीनों में इसी प्रकार की बातचीत हो रही थी कि नीचे से कार के हार्न की आवाज आई। राज ने सोचा कि सम्मेलन के कार्यकर्त्ताओं में से ही कोई आया होगा। लेकिन नीचे से मेवा दद्दा तुरन्त चिल्ला पड़े—

"भैया जी, जल्दी आओ, देखो साहब आगये।"

राज व रजनी दोनों दौड़ पड़े। सर्वदा ठीक तरह से कुछ न समझ सकी। थोड़ी देर में रजनी आकर बोली—

"लो मौसीजी, मैंने क्या कहा था। पत्र मिलते ही पापा-जी आ पहुँचे। आप तो यों ही चिन्तित थीं। अब तो आज, जब तक विवाह की तारीख तय न हो जाये मैं आपको यहाँ से नहीं जाने देने वाली। कुछ ही देर में पापाजी से आप को मिलाती हूँ।"

टैक्सी से उतरने पर राज व रजनी दोनों ने ब्रजनाथ बाबू के चरण-स्पर्श किये तो उन्होंने प्रसन्न हो दोनों को गले लगा लिया। लेकिन कुछ ही देर में वे पुनः गम्भीर हो गये। रजनी ने अत्यन्त ही स्नेहाभाव से पूछा—

"पापाजी आपकी सेहत तो बहुत गिर गई है। आपने तार क्यों नहीं दिया। भैया कार लेकर स्टेशन पहुँच जाते।"

ब्रजनाथ बाबू ने हँस कर बात टाल दी।

थोड़ी देर में रजनी ब्रजनाथ बाबू के पास दौड़ी-दौड़ी आई और बोली—

"पापाजी आज आपको मैं अपनी एक सहेली से मिलाना चाहती हूँ। आप जल्दी ही ड्राईंग रूम में आइयेगा। वह बेचारी बहुत देर की बैठी है।"

पहले तो ब्रजनाथ ने बात को कई प्रकार से टालना चाहा लेकिन जब रजनी न मानी तो उन्हें उसके साथ चलना ही पड़ा।

यही कोई सात-आठ के बीच का समय होगा। ड्राईंग-रूम में सर्वदा और राज दोनों बैठे थे। सर्वदा को राज के पिता से पहली-पहली बार मिलना था, विवाह-जैसे गम्भीर प्रश्न पर बात-चीत करनी थी अतः वह कुछ सावधान होकर बैठी थी। कमरे में 'ट्यूब लाईट' दिन का-सा प्रकाश फैला रही थी। पंखा बड़ी मंद गति से चल रहा था।

रजनी ने पर्दा हटाया और कमरे में प्रवेश किया। पीछे-पीछे 'नाईट सूट' और उस पर काले रंग का 'गाऊन' पहने

हुए ब्रजनाथ बाबू थे। कमरे में प्रवेश करते ही रजनी हँसती हुई बोली—

"लो मौसी, पापाजी आगए। आप मिल लीजियेगा।"

इतना सुनते ही सर्वदा व राज दोनों सोफे पर से उठ खड़े हुए। सर्वदा ने सिर पर साड़ी का पल्ला ठीक किया और बड़े ही सहज ढंग से हाथ जोड़ कर सिर झुकाया।

इतने में ब्रजनाथ बाबू व रजनी सामने आ खड़े हुए। हाथ जोड़ कर जैसे ही सर्वदा ने अपना सिर उठाया वह एक-टक ब्रजनाथ की ओर देखती रह गई। उसके मुँह से एक शब्द न निकला। चहरे का रंग एक क्षण में पीला पड़ गया। देखते-देखते माथे पर पसीने की बूँदें छा गईं।

ब्रजनाथ बाबू भी दोक्षण के लिये चौकने रह गए। लेकिन तत्काल उनके मुँह से निकल पड़ा।

"अरे तुम—'सर्वदा'! वे आगे कुछ और भी कहना चाहते थे लेकिन कह न सके। कुछ मिनिट तक वे सर्वदा की ओर ताकते रह गए। सर्वदा सिर नीचा किये खड़ी रही। उसके नेत्रों में से आँसू टपकने लगे। राज और रजनी आश्चर्य-चकित हो वे एक-दूसरे का मुँह ताकते रह गए। उनकी समझ में कुछ न आया कि यह हुआ क्या।

कुछ क्षण बाद सर्वदा ने अपना पर्स उठाया और बिना कुछ बोले धीरे से वह दरवाजे की ओर मुड़ी। इससे पूर्व कि राज या रजनी कुछ कहते ब्रजनाथ बाबू बड़े ही गम्भीर स्वर में बोले—

"सर्वदा, वैसे तो मुझे तुम्हें रोकने का कोई अधिकार

नहीं है। फिर भी मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि अब सब बातें स्पष्ट हो जानी चाहिए। यदि तुम मेरी प्रार्थना स्वीकार कर मुझे बातचीत का मौका दो तो मैं अपने हृदय का भार हल्का कर सकूं।"

सर्वदा एक क्षण मौन रही, फिर भरे गले से उसने धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया—

"अब क्या कहना बाकी रह गया है। मैं नहीं चाहती कि लोगों को या इन बच्चों को किसी भी बात का आगे पता चले। यह भी एक संयोग था। मुझे आप से नहीं वरन् अपने भाग्य से शिकायत है जिसके विपरीत होने के कारण आज मेरा पुराना घाव फिर से हरा हो गया। खैर कोई बात नहीं। मैं तत्काल ही अपना ट्रॉन्सफर कहीं और करा लूंगी। आपसे मेरी यही प्रार्थना है कि आप महरबानी करके इस घटना को यहीं समाप्त कर दें...।"

सर्वदा कुछ और भी कहती लेकिन ब्रजनाथ बाबू ने अत्यन्त ही सहानुभूतिपूर्ण स्वर में कहना आरम्भ किया—

"तुम्हारा कहना ठीक है सर्वदा, लेकिन यदि तुम मुझे अपनी गलती पर पश्चात्ताप करने का मौका दोगी तो जीवन के शेष दिन शायद मैं चैन से बिता सकूंगा। यदि मेरे हृदय का भार हल्का करने का अवसर न दिया गया तो जैसे आज तक, सब कुछ होते हुए भी, मैं पश्चात्ताप तथा आत्म-ग्लानि की अग्नि में जलता रहा आगे भी जलता रहूँगा। मैं अपने इन दोनों बच्चों को भी अंधेरे में रखना नहीं चाहता। मुझे इस बात का कोई भय नहीं कि मेरे गत जीवन की घटना

सुनकर ये मुझे पतित समझ कर घृणा करने लगेंगे। हो सकता है अपना पाप स्वीकार कर मैं इनकी निगाहों में ऊँचा उठ सकूँ। यदि ऐसा न भी हुआ तो कम-से-कम मुझे तो प्रायश्चित का अवसर मिलेगा।"

इतना कहते-कहते ब्रजनाथ बाबू कुछ परेशान हो गए। कुछ क्षणों के लिए बोलना बन्द कर वह धीरे से सोफे पर बैठ गए। उनका संकेत पा राज, रजनी और सर्वदा तीनों क्रमशः बैठ गए। ब्रजनाथ बाबू ने फिर धीरे-धीरे बोलना आरम्भ किया—

"मैं चाहता था कि जब राज ने शिमला में तुम्हारे और उर्मिला के सम्बन्ध में बताया तभी मैं सारी बात स्पष्ट रूप से राज को बता देता। लेकिन मुझे यह संशय था कि सर्वदा नाम की कोई और महिला भी हो सकती है। कारण यह था कि आज से पहले मैंने कई बार अपने बच्चों के मुँह से तुम्हारे सम्बन्ध में थोड़ा-बहुत सुना जरूर था लेकिन, मिलना कभी नहीं हुआ। मैं स्वीकार करता हूँ कि मैं स्वयं मिलने की बात टालता रहा। इसी कारण मैं अधिकतर घर से बाहर ही रहा करता था। उर्मिला को जब मैंने पहली-पहली बार देखा तो मेरा हृदय कुछ व्याकुल-सा हो उठा था। न जाने क्यों मेरे मन में आया कि मैं उसे शीघ्र गले लगा लूँ। पर मैं ऐसा न कर सका। इसके बाद उर्मिला से भी मेरा अधिक मिलना न हो सका।

मुझे इस बात का कोई अनुमान न था कि राज कभी उर्मिला के सम्बन्ध में विवाह का प्रश्न मेरे सामने रखेगा।

इसी कारण परसों मुझे इसका पत्र पढ़ कर आश्चर्य हुआ और स्वयं पर बहुत क्रोध आया। मुझे अत्यन्त ही पश्चात्ताप हुआ कि मैंने पहले ही राज को सब कुछ क्यों न बता दिया। मैं स्वयं अपने किये पर गत बीस वर्षों से दुःखी तथा चिन्तित होता रहा और इसी कारण मैं आज हार्ट ट्रबल का शिकार हो गया हूँ। तुम जानती हो सर्वदा कि यदि मैं आज न आता या भविष्य में स्वयं की बदनामी से बचने के लिये कहीं अन्यत्र चला जाता या आत्मघात कर लेता तो उर्मिला व राज का विवाह तो अवश्य हो जाता लेकिन भाई-बहन के विवाह का पाप मेरे सिर पर ही आकर पड़ता। इस पाप से बचने के लिये मैं सब कुछ स्वीकार करने को तत्पर हूँ।"

'भाई-बहन के विवाह का पाप' सुनते ही राज और रजनी दोनों चौंक पड़े। राज बोल उठा—"पापाजी यह आप क्या कह रहे हैं।......"

ब्रजनाथ बाबू फिर कुछ क्षणों के लिये मौन हो गये और फिर धीरे से राज को सम्बोधित करते हुए बोले—

"मैं जो कुछ कह रहा हूँ बेटा उसे सुनते चलो। सब कुछ कहने के बाद यदि तुम कहोगे तो मैं स्वयं सदा के लिये इस घर से चला जाऊँगा, लेकिन अभी मुझे सब कुछ कह लेने दो।"

सर्वदा ने एक बार ब्रजनाथ बाबू की ओर देखा। वह उन्हें रोकना चाहती थी। लेकिन कुछ कह न सकी। उसने फिर सिर नीचा कर लिया। ब्रजनाथ ने भरे गले से कहना आरम्भ किया—

"जब मैं केवल बीस वर्ष का था तब मेरा और सर्वदा का परिचय हुआ था। मेरे समान मेरे पिता भी सम्पन्न व्यक्ति थे। उन्हीं के बल पर में आज इस स्थिति में हूँ। धीरे-धीरे हमारा परिचय स्नेह में बदलता गया। अन्त में यद्यपि पिताजी व घर वालों की इच्छा नहीं थी तथापि इकलौता पुत्र होने के कारण मेरी बात रखने के लिये सर्वदा का विवाह मेरे साथ हुआ। विवाह के साथ ही सर्वदा के माता-पिता ने सदा के लिये सर्वदा को अपने से पृथक कर दिया।

"इसके एक वर्ष बाद उर्मिला का जन्म हुआ। घर में सबको खुशी हुई। लेकिन छः माह पश्चात ही मेरे पिता का देहान्त हो गया और सारी सम्पत्ति अब मेरे अधिकार में आ गई। जवानी और रुपया दोनों नशे मुझ पर एक साथ हावी हुए और मैं सुभाषिनी नाम की एक लड़की के प्रेम में पड़ गया।"

'सुभाषिनी' शब्द सुनते ही राज और रजनी के नेत्र सजल हो उठे। ब्रजनाथ ने भावावेश में आगे कहना आरम्भ किया—

"धीरे-धीरे बात बढ़ गई और मुझे सुभाषिनी के साथ विवाह करना पड़ा। विवाह करने के बाद सारी सम्पत्ति मैंने बेच डाली और 'कैश' रुपया बैंक में जमा कराके मैं सुभाषिनी के साथ रंगून चला गया। उस समय उर्मिला की आयु कोई एक-डेढ़ वर्ष की रही होगी।"

"एक वर्ष के अन्दर ही राज, तुम्हारा जन्म हुआ। मुझे किसी बात की कमी न थी। रंगून में भी मेरा व्यापार चल

पड़ा। लगभग दो वर्ष बाद रजनी तुम्हारा जन्म हुआ।"

इतना कह कर ब्रजनाथ बाबू ने एक सिगार सुलगाया और फिर कहना आरम्भ किया—

"रजनी जब तीन-चार वर्ष की रही होगी कि एक दिन न जाने कैसे मेरा और सर्वदा का विवाह के समय का चित्र सुभाषिनी के हाथ लग गया। यह भी एक संयोग की बात थी। जब मैं रात को लगभग ११-१२ बजे लौटा तो तुम दोनों सो चुके थे। मैं जब अपने कमरे में पहुँचा तो तुम्हारी माँ जहर खाकर चिर-निद्रा में लीन हो चुकी थी। मैंने किसी तरह बात को दबा दिया और फौरन कानपुर चला आया।

"इसके बाद धीरे-धीरे समय निकलता गया और आयु के साथ सब कुछ होते हुए भी मेरी चिन्ता और व्याकुलता बढ़ती गई। मैं नहीं कह सकता कि आज तक मैं कैसे जीवित हूँ।"

"मुझे खुशी है कि आज मुझे मेरा पाप स्वीकार करने का अवसर मिल सका। इससे पहले कि तुममें से कोई मेरे पाप का दंड मुझे दे, मैं स्वयं ही तुम सबको अपनी सारी सम्पत्ति और फर्म सौंप कर सदा के लिये कहीं ऐसे स्थान पर जाना चाहूँगा जहाँ मुझे अपने किये पर प्रायश्चित करने का अवसर मिल सके। वैसे मेरी इच्छा यह है कि सर्वदा और मेरी बच्ची उर्मिला भी इस घर में तुम दोनों के साथ रहें। लेकिन यदि सर्वदा को यह स्वीकार नहीं तो मैं उसके नाम अलग से पर्याप्त रुपया बैंक में जमा करा देता हूँ, वह चाहे जहाँ जाकर रह सकती है। और राज, तुम चाहे इसे मेरा आदेश समझो या प्रार्थना मेरी, अन्तिम अभिलाषा है कि रजनी

के साथ ही उर्मिला के विवाह का उत्तरदायित्व भी तुम अपने ऊपर लो। वह भी तुम्हारी बहन है।"

ब्रजनाथ बाबू का गला भर आया। नेत्र सजल हो गये। एक-दो मिनिट तक वे सिर नीचा कर बैठे रहे। वातावरण में पूर्ण शान्ति व गम्भीरता व्याप्त हो गई। ब्रजनाथ ने फिर गम्भीर वाणी में कहा—

"हाँ, नाम की बात कहना मैं भूल गया। बात यह थी कि सुभाषिनी के साथ विवाह करने से पूर्व ही मैंने अपना नाम शंकरनाथ से ब्रजनाथ कर लिया था। विवाह के पश्चात कोर्ट में आकर मैंने अपना नाम ब्रजनाथ ही करवा लिया। यदि मैं रंगून न जाता तो शायद यह भेद प्रकट हुए बिना न रहता, लेकिन रंगून में मुझे कौन जानता था। शंकरनाथ और ब्रजनाथ दोनों एक ही व्यक्ति हैं—मैं स्वयं।"

इतना कह ब्रजनाथ एकदम उठ खड़े हुए और चलने के लिये मुड़े लेकिन सर्वदा ने बड़े ही अनुरोध-भरे स्वर में कहा—

"आपके आदेशानुसार मैं चाहते हुए भी न जा सकी बल्कि एक घंटे से धैर्य से आपकी सब बातें सुनती रही। अब मेरी भी प्रार्थना है कि आप कुछ समय और यहीं बैठें, मेरी आत्मकथा के दो-चार शब्द सुनियेगा और इसके बाद मैं स्वयं ही चली जाऊँगी।"

ब्रजनाथ बाबू एकदम ठहर गये और धीरे से सिर नीचा कर सोफे पर बैठ गये। एक क्षण बाद सर्वदा ने कहना आरम्भ किया—

"स्त्री आरम्भ से ही कोई-न-कोई आश्रय चाहती है। आपके एकदम रंगून जाने की खबर मुझे स्पष्ट रूप से बहुत दिनों तक न मिली। मैं लगभग एक-दो वर्ष तक नित्य आपकी प्रतीक्षा करती रही। मेरे बड़े भाई ने, जो अब इस दुनिया में नहीं, आपको ढूँढने में कोई कसर उठा न रखी। अन्त में जब किसी प्रकार से आपके दूसरे विवाह तथा रंगून जाने की सूचना मुझे मिली तो हताश हो मैं गई। मेरे भाई ने कई बार मुझसे दूसरे विवाह का अनुरोध किया लेकिन मेरा विश्वास था कि भारतीय नारी विवाह करती है तो केवल एक बार। यदि आपका स्मृति-चिन्ह-उर्मिला मेरे सामने न होती तो मैं कभी की इस छलपूर्ण संसार से हमेशा के लिये अपने को मुक्त कर लेती। लेकिन उर्मिला के प्रेम न मुझे ऐसा न करने दिया।

"भैया का कहना था कि मैं नौकरी नहीं करूँ। मैं भी यह जानती थी कि चाहे जो हो भैया स्वयं भूखे रह कर मेरे को खुश रखने में कभी कोई कसर उठा न रखेंगे। लेकिन फिर भी मैंने अपना भार उन पर डालना उचित न समझा। उर्मिला के प्रति भी मेरा कुछ कर्त्तव्य था। मैंने गत बीस वर्ष कैसे व्यतीत किये और किस प्रकार मैं अपनी जीवन-नौका खेती रही, यह एक बहुत बड़ी करुण-कथा है। ऐसे कई अवसर आये जब मैं जीवन से मुक्ति पाने के लिये बाध्य हो गई लेकिन भैया ने मुझे हर प्रकार से समझाया और सहायता की। उर्मिला पर तो उनका पिता का-सा-हार्दिक स्नेह

था। मुझे हार्दिक खेद है कि मैं अपने बड़े भाई के लिये कुछ न कर सकी।''

इतना कहते-कहते सर्वदा की आँखों से झर-झर कर आँसू बहने लगे। अपने को किसी प्रकार संयत कर उसने फिर कहना आरम्भ किया—

''खैर, अब इन बातों को कहने का प्रयोजन ही क्या। आपको मैं विश्वास दिलाती हूँ कि आपके नाम की माला जपते-जपते ही मैंने बीस वर्ष गुजारे हैं। मुझे विवाह के साथ ही कम-से-कम इस बात की हार्दिक प्रसन्नता है कि मैं आपसे अपनी मृत्यु के पूर्व एक दफा कम-से-कम मिल तो सकी। मेरी यही अन्तिम अभिलाषा थी, जो आज पूरी हो गई। आप यह सोचते होंगे कि आपकी गत जीवन की कहानी को सुन मेरे मन में आपके प्रति घृणा और क्षोभ का भाव उत्पन्न हो रहा होगा। लेकिन मैं परमेश्वर को साक्षी कर कहती हूँ कि चाहे आपके लिये मैं कुछ भी न होऊँ आप मेरे लिए आज भी वही हैं जो आज से पहले थे। गलती प्रत्येक व्यक्ति से हो सकती है, क्योंकि हम आखिरकार मनुष्य हैं। लेकिन एक बार गलती करने का अर्थ यह नहीं कि व्यक्ति सदा के लिए पतित समझा जाये। गिर कर ही व्यक्ति उठता है, जो कभी गिरा ही नहीं उसके उठने का प्रश्न ही नहीं उठता। पाप-पुण्य, अच्छाई-बुराई सब में होती है, इस कारण एक मनुष्य को देव और दूसरे को दानव कहना न्याय नहीं। इसके अतिरिक्त अपनी गलती तथा पाप का इससे बढ़ कर और क्या प्रायश्चित हो सकता है कि व्यक्ति आत्मग्लानि के साथ अपने किये को स्वीकार करे और

उस पर पश्चात्ताप प्रकट करे। यही सबसे बड़ा दण्ड है।"

इतना कह कर सर्वदा एक क्षण को चुप हो गई। उसने अपने आँसू धीरे से पोंछ डाले और फिर रजनी और राज की ओर संकेत कर बोली—

"इन दोनों के प्रति भी मेरा स्नेह पहले की अपेक्षा आज कई गुना बढ़ गया है। चाहे दुनिया इस बात को माने या न माने मेरे लिए ये दोनों उर्मिला के ही समान हैं। लेकिन मैं नहीं चाहती कि मेरे या उर्मिला के कारण इन दोनों तथा आपके बीच कोई बात उठ खड़ी हो। इस कारण मैं चाहती हूँ कि मैं और उर्मिला आगे भी वैसे ही रहें जैसे अब तक रहते आये हैं।......"

सर्वदा और भी कुछ कहती लेकिन रजनी तत्काल अपने आँसू पोंछती हुई सोफे पर से उठी और सर्वदा के गले में छोटे बालक की भाँति बाहें डाल कर सिसकती हुई बोली—

"नहीं...नहीं ममी, ऐसा कभी नहीं हो सकता। आपको पता है कि बचपन से मैंने और भैया ने माँ के प्यार की छाया तक नहीं देखी है। हम दोनों आज तक ममी कहने के लिये तरसते रहे हैं। और आज जब परमेश्वर की कृपा से हमें अपनी अतृप्त प्यास बुझाने का अवसर मिला तो आप हमें ठुकरा रही हैं। आप यह कैसे कहती हैं कि आप और उर्मिला हमारे पापा के बीच एक दीवार हैं, नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता... ममी, बल्कि यह कहियेगा कि आप तो जंजीर की एक कड़ी बन गई हैं। अब यदि यह कड़ी अलग निकाल दी जायेगी तो जंजीर के दो टुकड़े हो जायेंगे। अभी आपने कहा है कि हम

दोनों में और उर्मिला में कोई अन्तर नहीं, फिर अलग होने का प्रश्न उठता ही नहीं। हमें आज तक केवल माँ का अभाव था और परमेश्वर की कृपा से आज वह अभाव भी पूरा हो गया। बोलिये……जल्दी बोलिये आपका……"

इससे पहले कि रजनी आगे कुछ कहती सर्वदा ने स्नेह से उसे हृदय से लगा लिया। कुछ क्षण तक भावावेश के कारण उसकी आँखों से आँसू गिरते रहे लेकिन वह कुछ बोल न सकी। राज भी सजल नेत्रों से सर्वदा की ओर ताकता रहा। बड़ी कठिनाई से सर्वदा ने कहना आरम्भ किया……"नहीं…नहीं बेटी, मैं भला तुम्हें कैसे ठुकरा सकती हूँ। आज तुम्हारे ही कारण मुझे अपनी वह निधि मिल सकी है जिसको निहारते-निहारते मेरी आँखें अंधी हुई जा रही थीं। मेरी खुशी का सारा श्रेय तुम दोनों को है। मुझे लग रहा है कि मेरी बीस वर्ष की साध आज सफलतापूर्वक पूरी हो रही है। मेरी खुशी का आज कोई ठिकाना नहीं। उर्मिला के भाग्य का सितारा तो आज उदय हुआ है, बेटी। उसे एक साथ उसके पापा और भाई-बहन मिले हैं। मुझे अब किसी बात की चिन्ता नहीं। रजनी बेटी, आज तुझे पाकर मेरा हृदय फूला नहीं समा रहा, मैं किस मुँह से तेरे सहज-स्नेह की प्रशंसा करूँ।"

इतना कह कर सर्वदा ने रजनी को स्नेह से चूम लिया। राज पास के सोफे पर बैठा हुआ चुपचाप आँसू बहा रहा था। सर्वदा धीरे से रजनी को अलग कर उठी और अत्यन्त स्नेह से अपनी साड़ी के पल्ले से राज के आँसू पोंछती हुई बोली……

"बेटा, तुम्हें अब किस बात की कमी है। यदि मेरे से कोई

शिकायत है तो तुम साफ-साफ कहो। अब तो तुम्हारी इच्छा मेरी इच्छा है। वास्तव में तुम्हारे कारण ही आज हम सब मिल सके हैं...... ।"

राज का गला भी भर आया। बड़ी कठिनाई से वह बोला—

"नहीं...नहीं ममी, ये तो खुशी के आँसू हैं। अब रजनी के विवाह की चिन्ता नहीं बल्कि बड़ी बहन उर्मिला के विवाह की हमें चिन्ता करनी है। रजनी को तो अब मैं डाक्टर बना कर ही मानूँगा।"

सर्वदा ने राज को गले लगा लिया। इसके बाद कुछ क्षण तक सब मौन रहे। सर्वदा धीरे से सोफे पर से उठी और ब्रजनाथ के चरणों में झुकती हुई बोली—

"यदि आपको मेरे से कोई शिकायत हो तो कहिये। यदि कोई गलती हुई हो तो क्षमा कीजियेगा। स्त्री के लिये तो पति सदा ही परमेश्वर के समान होता है। उसको......"

सर्वदा का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही ब्रजनाथ बाबू ने उसे उठा लिया और बड़े ही मधुर शब्दों में बोले—

"क्षमा तो मुझे माँगनी चाहिए सर्वदा। पाप तो मैंने किया है। मैं कह नहीं सकता कि अपने किस पुण्य प्रताप से मैं तुम्हें आज पुनः उसी रूप में पा सका जिसमें मैंने तुम्हें त्यागा था। मैं किस मुँह से तुम्हारी उदारता की सराहना करूँ.."

: २५ :

आज सर्वदा और उर्मिला को ब्रजनाथ के बँगले में रहते हुए लगभग एक सप्ताह से अधिक हो गया, लेकिन लोगों के आश्चर्य और उत्सुकता में कोई कमी न आई। चाहे जो हो, ब्रजनाथ थे तो बड़े आदमी, इसलिए किसी का इतना साहस न हो सका कि कोई उनसे सर्वदा और उर्मिला को साथ रखने का कारण तो पूछ सके, या सर्वदा पर ही किसी प्रकार का आरोप लगा सके। कई लोग तो ऐसे थे जो ब्रजनाथ बाबू की उदारता तथा महानता की सराहना करते हुए नहीं अघाते थे।

जब विभाव को मँजू के द्वारा पता चला कि उर्मिला राज की बहन है और सर्वदा ने क्वार्टर छोड़ कर ब्रजनाथ के साथ रहना भी आरम्भ कर दिया है तो उसके पैरों-तले की धरती खिसक गई। न जाने कितने प्रकार के विचार उसको व्याकुल करने लगे। लेकिन व्याकुलता में आशा की एक धुँधली किरण भी अन्तर्निहित थी। विभाव को भाग्य और परमेश्वर की विचित्र सृष्टि पर इतना आश्चर्य हुआ कि कुछ समय के लिए तो वह अपने परीक्षा-परिणाम की बात ही भूल गया।

ब्रजनाथ के परिवार में तो मानो प्रसन्नता तथा उल्लास का स्रोत बहने लगा। रजनी व उर्मिला के स्नेहपूर्ण व्यवहार को देख कर लगता था कि ये दो शरीर और एक आत्मा हैं। सर्वदा भी अपने भाग्य और परमेश्वर के अनुग्रह पर विचार करते-करते विचार-सागर में खो जाया करती थी।

आज सारी रात राज रजनी के सम्बन्ध में न जाने कितनी बातें सोचता रहा। कभी वह रजनी की सोचता तो कभी उर्मिल की। बहुत प्रयत्न करने पर भी जब उसे नींद न आई तो उसने सोचा कि वह आज इस समस्या को सुलझा ही क्यों न डाले।

राज सोचने लगा—"यह ठीक है कि आयु में बड़ी होने के कारण उर्मिला का विवाह पहले होना चाहिए। लेकिन विवाह हो तो किससे......विभाव से। अरे नहीं...मैं भी कितना मूर्ख हूँ। यदि विवाह हो भी जाय तो उर्मिला क्या सोचेगी। यदि मैं रजनी के विवाह की भी बात रखूँ तो ममी के मन में अन्तर की बात आये बिना न रहेगी। फिर उनकी बातों से लगता है कि वह भी विभाव को चाहती हैं। हो सकता है उर्मिला ने ही कोई ऐसा संकेत दिया हो। लेकिन पापाजी क्या कहेंगे। यदि वे मान भी जाते तो रजनी के दिल पर क्या बीतेगी। हो सकता है कि विभाव से विवाह होने पर दोनों बहनों में शत्रुता हो जाय। लेकिन यदि मैं रजनी की इच्छानुसार विभाव से किसी प्रकार विवाह कर भी दूँ तो उर्मिला की समस्या ज्यों-की-त्यों रह जाती है। इसके अलावा विभाव जब रजनी की अपेक्षा उर्मिला को चाहता है तो यदि रजनी का विवाह विभाव से हो भी गया तो दोनों का जीवन तो दुखी होगा ही, इधर ममी और उर्मिला के मन की बात भी रह जायेगी। पापाजी ने सारा भार मेरे ऊपर छोड़ दिया है। यदि रजनी का विवाह हो गया तो उसको डाक्टर बनाने का मेरा स्वप्न अधूरा रह जायेगा। तो क्या करूँ। क्या न करूँ...।

उर्मिला से कहूँ तो क्या कहूँ······"

इस प्रकार सोचते-सोचते जब राज को इस विकट समस्या का कोई हल न मिला तो उसने निश्चय किया कि वह स्वयं रजनी से ही इस सम्बन्ध में सलाह लेगा। बात यह थी कि रजनी उर्मिला की अपेक्षा राज से अधिक खुली हुई थी। राज को पूर्ण विश्वास था कि वह रजनी के हृदय की बात को समझ सकेगा और उसे अपनी बात मना सकेगा।

आज प्रातःकाल उठने पर ज्यों ही राज नाश्ता आदि कर रजनी से बातचीत करने का विचार कर रहा था कि सर्वोदय सम्मेलन के कुछ कार्यकर्ता किसी आवश्यक कार्य से आ पहुँचे। स्वयं ब्रजनाथ बाबू का आदेश था कि राज समय निकाल कर अवश्य ही उनको सहयोग दे। जब वह सम्मेलन से लौट रहा था तो मार्ग में मिस मँजू पैदल जाती दिखाई दी। राज ने उसे तत्काल कार में बैठा लिया और उसके घर की ओर चल पड़ा। थोड़ी देर का रास्ता था इसलिए इधर-उधर की बात-चीत करते-करते मँजू का घर आ गया। राज ने अनुभव किया कि मँजू उससे कुछ रुष्ट थी अतः उसे खुश करने के भाव से वह बोला—"तो मँजू तुम कब से घर आना आरम्भ कर रही हो। रजनी ने तो बहुत पहले ही मुझे तुम्हें सूचना देने को कह दिया था लेकिन मैं ही कुछ आवश्यक कार्य में उलझ गया। अब यह सम्मेलन का चक्कर आ पड़ा। क्या बताऊँ समय ही नहीं मिलता। तुम यह न समझना कि मैं तुम्हें भूल गया हूँ।" राज जैसे ही चुप हुआ कि मँजू ने एक फीकी हँसी हँसते हुए कहा—

"जी हाँ, ठीक है। अब आपको समय क्यों मिलने लगा। बड़े आदमियों को आज तक हम-जैसे छोटे लोगों से मिलने का समय ही भला कभी मिला है। रही फिर से घर आने की बात, तो मैं तो आपके विवाह के निमन्त्रण की प्रतीक्षा में थी। मेरा ख्याल था कि यदि संगीत का आयोजन हुआ तो एक कोने में शायद मुझे भी कोई स्थान मिल जाये। खैर, छोड़िये भी इन बातों को। मुझे तो यह सुनकर बड़ी हैरानी हुई कि उर्मिला से पहले आपका विवाह होने को था और बाद में वह आपकी बहन निकल पड़ी। मुझे तो यह खबर कल ही विभाव जी से मिली है। बात यह है मिस्टर राज, कि दुनिया में हमेशा एक व्यक्ति का मन-चाहा काम ही नहीं होता। भगवान देर से या जल्दी सबकी सुनता है। अरे, आप खड़े क्यों हैं, तशरीफ रखियेगा।"

राज धीरे से आराम कुर्सी पर बैठ गया। उसकी मुद्रा गम्भीर हो गई। उसने धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया—

"मँजू, जहाँ तक उर्मिला का प्रश्न है, तुम्हें मानना होगा कि यह सब भाग्य का एक अजीब खेल था। या यों कहो कि कुछ संयोग ही ऐसा था। लेकिन अब तो यह प्रश्न सदा के लिये समाप्त हो गया। मुझे उर्मिला के विवाह की बहुत चिंता है। रजनी तो आयु में भी उससे छोटी है और वैसे भी उसका मेडिकल कोर्स करने का इरादा है। तुम सच मानना कि मैं तुमसे मिलने को बहुत उत्सुक था। आज बहुत ही अच्छा हुआ कि मुझे बातचीत का यह मौका मिल सका है।"

"इस कष्ट के लिये और मुझे स्मरण रखने के लिये बहुत-

बहुत धन्यवाद ।" मँजू ने तत्काल कहना आरम्भ किया—"कहिये आपको क्या कहना है । आपकी क्या सेवा कर सकती हूँ ।"

राज ने गम्भीर स्वर में कहा—"मँजू, मुझे लग रहा है कि तुम मुझे समझने की कोशिश नहीं कर रही हो । मैं तुम से गत एक माह से न मिल सका । इसके कई कारण थे लेकिन फिर भी मैं अपनी भूल स्वीकार करता हूँ । कभी-कभी व्यक्ति ऐसे संकट में पड़ जाता है कि उसे इच्छा-विरुद्ध कार्य भी करना पड़ता है । मेरे पास समय नहीं कि मैं सारा किस्सा सुनाऊँ कि किन परिस्थितियों ने मुझे उर्मिला से विवाह करने को बाध्य कर दिया था । अच्छा ही हुआ कि भगवान की कृपा से ऐसा न हो सका । बात यह है कि जो जिसके लिये होता है उसे मिल कर ही रहता है । नदी को समुद्र तक पहुँचने में न जाने कितनी बाधाओं का सामना करना पड़ता है । यदि सुबह का भूला शाम को भी घर लौट आये तो वह भूला हुआ नहीं कह-लाता । जहाँ तक सच्चे प्रेम का प्रश्न है मेरा विश्वास है कि वह कभी भी टूट नहीं सकता । विवाह को ही मैं प्रेम का प्रमाण नहीं मानता । हाँ, यह ठीक है कि विवाह के पश्चात् प्रेम पर सामाजिक आरोप नहीं लगाये जा सकते । इसके साथ ही प्रेम का निर्वाह भी अधिक व्यापक ढंग से होता है और कर्त्तव्य-पालन की भावना भी जागृत होने लगती है ।"

मँजू ने तिरछी निगाहों से राज की ओर देखा और फिर एक व्यंगात्यक हँसी हँसती हुई बोली—

"आपके जैसा महान और उदार व्यक्ति मिलना अत्यन्त

कठिन है। सच्चा प्रेम क्या है। विवाह किसे कहते हैं तथा कर्त्तव्य-पालन का क्या महत्व है जैसे गम्भीर विषयों पर आपसे बढ़कर अन्य किसी प्रामाणिक विद्वान् की कल्पना ही नहीं की जा सकती। रेणु से भी तो आपका सच्चा प्रेम था और सच्चे प्रेम की वेदी पर ही उसकी बलि चढ़ा दी गई। आप प्रेम के सच्चे देवता बन कर न जाने अब तक कितनों की बलि ले चुके होंगे। अब शायद मेरा नम्बर है। यदि उर्मिला कहीं बहन न निकल जाती तो शायद मेरा नम्बर देर से आता। क्यों, मैं ठीक समझ रही हूँ न ? आप भी कितने समझदार और चरित्र-वान हैं। सबको एक निगाह से ही देखते हैं। जिसकी सेवा का अवसर मिलता है आप कोई कमी नहीं छोड़ते।"

इतना कहकर मँजू खिलखिला कर हँस पड़ी और फिर उसने कहना आरम्भ किया——

"मिस्टर राज, आपको मुझसे शायद ऐसी आशा न होगी। लेकिन आपको तो पता है कि कभी-कभी ऐसी परिस्थितियाँ आ जाती हैं कि न चाहते हुए भी इन्सान को काम करना पड़ता है। खैर आपने कभी कोई भूखा भेड़िया तो देखा होगा। उसे यदि कई दिनों का सूखा, सड़ा-गला माँस का टुकड़ा मिल जाय तो वह उसी पर झपट पड़ता है। भौंरा भी एक फूल का रस पीकर फिर दूसरे पर जा पहुँचता है। गली के कुत्तों का भी कुछ ऐसा ही हाल है। एक सकोरा चाट कर वे दूसरे पर झपट पड़ते हैं। कभी-कभी एक दूध के झूठे सकोरे के लिये दो कुत्तों में जबरदस्त झगड़ा हो जाता है। यहाँ तक कि बेचारा सकोरा ही टूट जाता है। तो यह तो बहुत ही सामान्य

बात है। लेकिन चाहे जो हो मुझे तो यदि गली के ऐसे कुत्ते को पालने को कहा जाय तो मैं पहले कहने वाले के और फिर कुत्ते के मुँह पर लात जमाये बिना न मानूँ।"

राज को लगा कि मँजू ने उसके मुंह पर वास्तव में लात जमा दी हो। लेकिन वह जड़वत स्थिति में बैठा रहा। एक सेकिन्ड बाद मँजू ने कठोर स्वर में कहना आरम्भ किया—

"मिस्टर राज—काठ की हाँडी एक बार ही आग पर चढ़ती है। आज से पहले जब आप उर्मिला का स्वप्न देख रहे थे तब मुझे आपने सच्चे प्रेम का पाठ क्यों नहीं सिखाया। आप बड़े आदमी होंगे तो अपने घर के। मेरी निगाह में तो आप गये-बीते पशु हैं। आप ने पहले मेरी कमजोरी का खूब फायदा उठाया और आज विवाह का आदर्श लेकर मुझे पुन: बेवकूफ बनाने आये हैं। आपको शर्म नहीं आती। आप जैसे छिछोरे और कमीने लोग ही समस्त पुरुष जाति पर कलंक लगा देते हैं। एक ओर स्त्री है जो पुरुष के जाल में फँस कर भोले बालक की तरह उसके नाम की माला जपते-जपते ही सारा जीवन निकाल देती है। दूसरी ओर पुरुष है जो मौका मिलते ही झूठी पत्तल तक चाटने को तैयार रहता है। यही कारण है कि स्त्री को स्वयं की रक्षा का मार्ग ढूँढ़ना पड़ता है। जब स्त्री स्वयं मार्ग ढूंढ़ने लगती है तो उसपर नाना प्रकार के आरोप लगाये जाते हैं। धर्म, नीति, परम्परा, चरित्र, सामाजिक बन्धन, पारिवारिक मर्यादा और न जाने कितनी बेड़ियाँ स्त्री के पैरों में डाल दी जाती हैं ताकि पुरुष इच्छानुसार स्त्री को नचा सके।"

मँजू भावावेश तथा क्रोध में अभी कुछ और कहती लेकिन राज तुरन्त उठ खड़ा हुआ। कुछ देर मौन रह कर उसने अत्यन्त ही गम्भीर ध्वनि में कहना आरम्भ किया—

"मँजू, मैं तुमसे क्षमा चाहता हूँ। तुम्हारा कहना ठीक है कि मैं सबसे गया बीता पशु हूँ। तुम्हारे अनुसार पुरुष ही सब बुराइयों की जड़ है। लेकिन मेरा विश्वास है कि शराबी के साथ-साथ शराब भी बुरी चीज़ है। दुनिया में कोई भी आदमी बुरा पैदा होता नहीं लेकिन धीरे-धीरे नाना प्रकार के आकर्षणों में फँसकर वह बुरा बन जाता है। खैर, यह तो अपना-अपना सोचने का तरीका है। लेकिन मैं तुम्हें एक दिन इस बात पर पुन: विचार करने का अवसर दूँगा कि पतन के गर्त में गिर कर भी व्यक्ति ऊँचा उठ सकता है। पुरुष में शक्ति और कर्त्तव्य-भावना की तीव्रता प्रेम और वासना की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। मैं अब तक मोह-माया का शिकार था और इस क्षण से मुझ में स्वाभिमान और कर्त्तव्य-भावना जाग उठी है। आज से मेरे जीवन का नवीन अध्याय आरम्भ होगा। परमेश्वर से मेरी प्रार्थना है कि वह मुझे सच्चा प्रकाश प्रदान करे।"

इतना कहकर उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही राज सीधा चल पड़ा। मार्ग में न जाने कितने प्रकार के भाव उसके मन में उथल-पुथल मचाते रहे। लेकिन उसे अपने अन्तर्गत में एक नवीन परिवर्तन भी अनुभव हो रहा था।

घर पहुँचने पर उसने देखा कि रजनी और उर्मिला दोनों बहुत ही खुश थीं। लगता था कि बहुत देर से वे किसी विषय

पर बातचीत कर रही थीं। रजनी की मुद्रा से स्पष्ट था कि उसने किसी विकट समस्या को सुलझाने में सफलता प्राप्त की है।

जैसे ही राज भोजन से निवृत्त हुआ कि रजनी उसे अपने साथ लेकर अपने कमरे में पहुँची। कमरे में प्रवेश करने के बाद उसने पर्दा खींच कर दरवाजा धीरे से बन्द कर दिया। राज को उसके व्यवहार पर आश्चर्य तो हुआ, लेकिन वह स्वयं विचार-सागर में डूबा होने के कारण कुछ कह न सका।

रजनी और राज दोनों पास-पास पलँग पर बैठ गये। एक क्षण मौन रहकर रजनी ने कुछ गम्भीरता से कहा—

"भैया, मैं आप से आज एक प्रार्थना कर रही हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप सहानुभूति व प्रेम से मेरी विनति सुनेंगे। आज शाम को आप महरबानी कर मेरे साथ विभाव भैया के यहाँ चलने का कष्ट करें। मैं स्वयं उनसे उर्मिला की ओर से स्नेह की भिक्षा माँगूँगी। यद्यपि मुझे पूरी बात का पता नहीं तथापि मेरा अनुमान है कि गत कई दिनों से आप में तथा विभाव भैया में किसी बात पर कहा-सुनी हो जाने से बात-चीत और मिलना जुलना बन्द है। मेरा ख्याल है कि आपके विवाह की बात ही इस अनबन का कारण हो। खैर, मुझे इन बातों से कोई मतलब नहीं। मुझे इस बात का पूर्ण विश्वास हो गया है कि विभाव भैया तथा उर्मिला दीदी में परस्पर सच्चा स्नेह है। ममी भी विभाव भैया को चाहती हैं। यदि दीदी तथा विभाव भैया का विवाह नहीं हुआ तो सम्भवतः दोनों में से कोई भी आजीवन विवाह न करेगा और

इसका सारा दोष हम लोगों पर ही लगेगा। यदि आप विभाव भैया से न कह सकेंगे तो मैं स्वयं खुशी-खुशी उनसे प्रार्थना करूँगी। मुझे आशा है कि मेरी बात खाली नहीं जायेगी। बोलिये आप क्या कहते हैं ?"

राज को लगा कि वह स्वप्न देख रहा है। वह चाहते हुए भी एक शब्द तक न कह सका। उसे रजनी की विशालता पर जितना आश्चर्य था उतनी ही प्रसन्नता भी। राज ने अनुभव किया कि स्त्री निःसन्देह त्याग की जीवित प्रतिमा है। उसने स्नेहभाव से रजनी को हृदय से लगा लिया। कुछ क्षण मौन रह कर भरे गले से बोला—

"रजनी, तेरी महानता, त्याग और उदारता की सराहना करने के लिये न तो मेरे पास वाणी है और न बुद्धि ही। मैंने आज तक तेरी कोई बात नहीं टाली है। आज भी मैं तुझे निराश नहीं करना चाहता। लेकिन उर्मिला दीदी से पहले तो विभाव पर तेरा स्नेहाधिकार...इससे पूर्व कि राज अपना वाक्य समाप्त करता रजनी ने अपना हाथ उसके मुँह पर रख दिया। उसकी आँखों से आँसू झरने लगे। उसने अत्यन्त ही करुण स्वर में कहा—

"भैया, भूल कर भी अब इस बात को फिर से मुँह पर न लाना। आप यह क्यों भूलते हैं कि उर्मिला दीदी आपकी बड़ी बहन हैं और मैं छोटी। पहले उनके विवाह का प्रश्न है। मेरा विवाह कर क्या आप उन्हें जीवन-पर्यन्त अविवाहित रखना चाहते हैं। यदि ऐसा हुआ तो मुझे सदा के लिये मुँह छिपाना पड़ेगा...।"

रजनी आगे न कह सकी। थोड़ी देर तक आँसू बहाने के बाद उसने अपना मुँह पोछ डाला। और मुस्कराती हुई बोली-

"भैया, पिछली बातों को भूल जाओ। आपने मुझे मैडिकल-कोर्स कराने का वचन दिया है। मेरी इच्छा है कि मैं शीघ्र ही डाक्टरी का कोर्स कर मानव-सेवा में लग जाऊँ। प्रेम-विवाह आदि सब बन्धनों से परे एक वस्तु है जिसे कर्त्तव्य कहते हैं। कर्त्तव्य के सामने प्रेम का महत्त्व फीका पड़ जाता है। प्रेम-जाल में फँसकर कभी-कभी व्यक्ति कर्त्तव्य के प्रति तटस्थ हो जाता है। उर्मिला दीदी में विवाह की भावना एक बार उत्पन्न हो चुकी है। अब यदि उसको ठेस पहुँची तो बहुत ही अन्याय होगा। आपके लिए तो दोनों बहनें समान हैं। यह हम दोनों बहनों का समझौता है जिसको दृढ़तर बनाने के लिये मैं आपके सहयोग की भिक्षा माँगती हूँ।"

राज ने स्नेह से रजनी के सिर पर हाथ रखा और बड़े ही मधुर शब्दों में प्रसन्न होकर बोला—

"रजनी, किसी ने मुझे आँखें दीं, और तूने रोशनी। मैं तेरी इच्छा के विरुद्ध अब एक भी कदम न उठाऊँगा। मुझे आज अनुभव हो रहा है कि स्त्री अपने प्रत्येक स्वरूप में प्रेरणा का पवित्र स्रोत है, पुरुष के लिये आलोक स्तम्भ है। मैं आज तेरी उदारता के आगे नत-नस्तक हूँ। मैं जिस समस्या को अनेक प्रयत्न करके भी न सुलझा सका था उसे तूने तत्काल बड़े ही सुन्दर ढंग से सुलझा दिया है। मैं वचन देता हूँ कि मैं शीघ्र ही, विभाव से मिलकर उर्मिला का सम्बन्ध उसके साथ तै करके ही मानूँगा। चाहे मेरे स्वाभिमान

को कितनी ही चोट क्यों न पहुँचे । वैसे तो मुझे विश्वास है कि वह मेरी प्रार्थना को नहीं ठुकरायेगा लेकिन यदि ऐसा हुआ तो भी कम-से-कम तेरी बात तो उसे माननी ही होगी । अब मेरा मार्ग भी प्रशस्त है, मुझे भी ऊँचा उठने की प्रेरणा और शक्ति प्राप्त हो चुकी है ।"

: २६ :

काल-चक्र आज तक किसी के रोके से नहीं रुका है। शादी-विवाह, जन्म-मरण, सर्दी-गर्मी, उत्थान-पतन, और न जाने क्या-क्या सब-काल चक्र के ही परिणाम हैं।

उर्मिला और विभाव के विवाह के पश्चात् लोगों को इस बात में कोई सन्देह नहीं रहा कि पति-पत्नी के जोड़े का निर्माण तो स्वर्ग में पहले से ही परमेश्वर के द्वारा हो जाता है। भाग्य के आगे कई बार व्यक्ति का कर्म शिथिल व निर्बल-सा हो जाता है।

स्वयं श्रीनाथ तथा परिवार के अन्य सब सदस्य विभाव और उर्मिला के विवाह के सर्वथा विपक्ष में थे। सबने अपने-अपने ढंग से विभाव को समझाया, लेकिन हुआ वही जो परमेश्वर की इच्छानुकूल था। पहले तो श्रीनाथ और सुलोचना ने विवाह में कोई सहयोग न देने का निश्चय कर लिया लेकिन जब विभाव ने साफ-साफ कह दिया कि—

"ठीक है, यदि आप नहीं चाहते तो आपकी इच्छा पूरी करने के लिये मैं विवाह नहीं करता हूँ। लेकिन यदि किसी ने फिर कभी मुझसे विवाह की कोई बात कही तो उसे अपने कहे पर पछताना पड़ेगा। वैसे तो यदि भगवान ने चाहा तो बंसी के बजाने के पहले ही बाँस के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे। और तब लोगों को यह अनुभव करने का अवसर मिलेगा कि जन्म देने वाला जब चाहे जब निगल भी सकता है। इसके

साथ ही जवान लड़के-लड़कियों के मन में अपने माता-पिता के लिये चौगुनी श्रद्धा और स्नेह भी जागृत हो उठेगा।"

श्रीनाथ और सुलोचना भी एक-दो दिन तक तो बात टालते रहे लेकिन फिर उन्हें कहना ही पड़ा—

"तुम्हारी खुशी के लिये विभाव हमने आज तक सब कुछ सहा, केवल इस आशा से कि एक दिन आयेगा जब तुम और कुछ नहीं तो हमारी बात तो सहानुभूति से सुनोगे। लेकिन ऐसे भाग्यशाली मनुष्य बहुत थोड़े हैं जिनकी आशा पूरी हुई हो। कोई बात नहीं, विवाह तो तुम्हें करना है। यदि उर्मिला से विवाह कर ही तुम्हारा जीवन सुखी होता है तो तुम अवश्य उसी से विवाह करो। हमें तो अब जीना ही कितने दिन है।"

समयानुसार विवाह हो गया। इसी बीच में एक दिन जीने पर से अचानक फिसल जाने के कारण अभिधा के पैर की हड्डी टूट गई। एक-डेढ मास तक वह अस्पताल में पड़ी रही, लेकिन फिर भी कुछ न हुआ। यदि रुपया होता तो शायद अभिधा कम-से-कम जीवन-भर को लंगड़ी तो न होती। सुलोचना भी गत छः माह से अस्वस्थ थी। कभी एक-दो दिन के लिये ठीक हो जाती थी लेकिन फिर खाट पकड़नी पड़ती थी। बिस्तरे पर पड़े-पड़े जब बेचारी अभिधा को बगल में लकड़ी लगाकर धीरे-धीरे चलता हुआ देखती थी तो उसका हृदय बैठने लगता था। कभी-कभी वह सोचने लगती थी—

"आखीरकार मुझे अब इस दुनिया से उठना ही है, फिर

परमेश्वर ये सब दु.ख एक-एक करके मुझे क्यों दिखा रहा है। मेरे न रहने पर अभिधा और अधीर का क्या होगा। संचारी वैसे ही बात-बात में निराश होने वाला है। अनुभाव का गत छः माह से कोई पता नहीं है। न जाने अभी मुझे कौन-कौन से दु.ख भोगने पड़ेंगे।"

लेकिन इस चिन्ता की डोर का अन्तिम छोर सुलोचना को कभी न मिल सका। विभाव और उर्मिला के विवाह ने चिन्ता की डोर को और अधिक लम्बा और उलझा हुआ बना दिया। जिस दिन उर्मिला बहू बन कर घर आई उस दिन सुलोचना को लगा कि मानो हजारों मन का पत्थर उसके कलेजे पर रख दिया गया हो। कोई कहता—

"बड़े ब्राह्मण पंडित बनते थे। जात-पाँत और वर्ण को लेकर घंटों गला फाड़ते रहते थे, लेकिन आज जब खुद के लड़के ने बनिया की लड़की से—जिसके न बाप का कोई ठीक-ठिकाना है न माँ का—विवाह कर लिया तो मुँह से एक शब्द न निकला। ऐसा ही होता है। उपदेश और आदर्श तो सदा दूसरे के लिये ही होते हैं..."

दूसरा व्यक्ति विरोध के स्वर में बोल पड़ता—

"अरे भई, यह तो जमाने की रफतार है। कल को क्या पता हमारे में से ही किसी के घर में ऐसा शुभ कार्य हो सकता है। बात यह है कि रुपये के आगे तो दुनिया झुकती दे। वरना भला श्रीनाथ को क्या पड़ी थी कि पढ़े-लिखे योग्य लड़के का विवाह बेजात में कर डालते। दान-दहेज की भी तो ब्रजनाथ बाबू ने भरमार कर दी है। 'कैश' भी यदि दस-बीस हजार

श्रीनाथ को दे दिया हो तो क्या वे हमसे कहने आयेंगे।"

लेकिन विभाव की मित्र-मंडली में विभाव के उच्च-विचारों तथा आदर्श पालन की प्रशंसा के गीत गाये जा रहे थे। सबसे अधिक प्रसन्नता तो विद्यासागर को थी। कल ही उसने विभाव वो बधाई देते हुए कहा—

"क्या बताऊँ मिस्टर विभाव, यदि मैं बाहर न गया होता तो अवश्य ही तुम्हारे विवाह में शामिल होता। तुमने तो भई समाज-भीरुओं के सम्मुख एक ऊच्च आदर्श प्रस्तुत कर दिखाया। किस मुँह से तुम्हारी प्रशंसा करूँ। कम-से-कम अब लोगों को यह सोचने का अवसर तो मिलेगा कि विवाह दो आत्माओं का पवित्र सम्बन्ध है। वरना तो वृद्ध-समाज में मैं हमेशा नवयुकों के 'ट्रू लव' की कटु आलोचना ही सुनता हूँ। अब कम-से-कम कहने वालों का मुँह तो बन्द होगा। और यदि लोई बकता भी है तो तुम्हारा-हमारा ले क्या लेगा। कुछ समय बाद सब बक-बक कर चुप हो जायेंगे।"

विभाव की प्रसन्नता की तो कोई सीमा ही न थी। विवाह के साथ ही फर्म के 'मैनेजिंग डाइरेक्टर' का ऊँचा पद भी मिल गया। ७५०) मासिक वेतन तो आरम्भ में ही मिलने लगा। इसके अतिरिक्त हजारों रुपये दहेज में मिले और १०,०००) रुपये तो ब्रजनाथ और सर्वदा ने उर्मिला के नाम से ही बैंक में जमा करा दिये।

लेकिन विवाह के एक-दो माह बाद ही श्रीनाथ के पैरों का गठिया इतना जोर पकड़ गया कि उन्हें छुट्टी लेकर घर आना पड़ा। विभाव को लगा कि सिर मुड़ाते ये अच्छे ओले

पड़े। लेकिन उपचार की व्यवस्था तो करनी ही पड़ी। उधर संचारी की बी० ए० की पढ़ाई का व्यय भी कौन उठाता। विभाव को अनुभव होने लगा कि विवाह के बाद के उसके सब स्वप्न अधूरे ही रह जायेंगे।

माँ की बीमारी भी दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई। अभिधा वैसे ही चलने-फिरने में असमर्थ थी। घर का सारा कार्य-भार उर्मिला पर आ पड़ा। आर्थिक हानि तो विभाव किसी तरह सहन कर सकता था लेकिन उर्मिला का हमेशा घर के काम में लगे रहना उसे भला कैसे सहन होता। किसी तरह नौकर का प्रबन्ध किया, लेकिन वह भी दो-माह बाद जब पेट भरने लगा तो भाग खड़ा हुआ। जाते समय, उसका मालिक उसे भविष्य में कभी भूल न जाय ऐसा सोच कर उसने सौ रुपये चुप-चाप उठा लिये।

अभी श्रीनाथ का रोग ठीक हो भी न पाया था कि गंगा-पुर से उनके विद्यालय के आचार्य महोदय का नोटिस आ पहुँचा कि 'अब आपकी सेवाओं की भविष्य में आवश्यकता नहीं।' श्रीनाथ को लगा कि उनकी आधी रोटी भी उनसे छीन ली गई। विभाव को आशा थी कि जैसे ही पिताजी ठीक होंगे फिर से कम-से-कम कमाने तो लगेंगे लेकिन अब तो कमाने की बात अपने-आप समाप्त हो गई। परिणाम यह हुआ कि श्रीनाथ और सुलोचना का उपचार अस्पताल के बड़े-बड़े डाक्टरों के हाथ से साधारण डाक्टरों को सौंपा गया। फिर धीरे-धीरे वैद्य और हकीमों का नम्बर आया और अब तो

घरेलू उपचार को ही सबसे अच्छा समझा जाने लगा। विभाव का कहना था कि—

"मनुष्य को एक-न-एक दिन तो मरना ही है फिर भला तरह-तरह की दवाइयाँ खाकर शरीर को गलाने से क्या लाभ।"

कुछ दिनों पहले अधीर ने बड़े डरते-डरते विभाव से कहा—

"भैया, अम्मा-पिताजी दोनों की हालत खराब होती जा रही है। पहले तो कभी-कभी डाक्टर घर देखने आता था लेकिन अब दवा तक का कोई पता नहीं। पिताजी कहते हैं कि दवा के लिए पैसे नहीं। सो आप ऐसा कीजिये कि मेरे पास बारह रुपये हैं। कुछ तो मुझे पास होने की खुशी में मिले थे और कुछ मैंने एक-एक आना रोज बचा कर जमा किये हैं। आप इन रुपयों को ले लीजियेगा और दवा ले आइयेगा। या मुझसे कहिए तो मैं......"

अधीर की बात पूरी भी न हो पाई थी कि विभाव ने हाथ से रुपये और खुले पैसे छीन कर एक ओर फेंक दिये और गाल पर एक तमाचा लगाते हुए वह बड़े ही कठोर स्वर में बोला—

"आगे से फिर कभी ऐसी बात कही तो जबान खींच लूँगा। समझा। बड़ा आया है माँ-बाप का भक्त। अभी चला जा, नहीं तो दूसरा चाँटा रसीद करूँगा।"

अधीर ने रोते हुए बिखरे हुए पैसों पर एक दृष्टि डाली और धीरे से कमरे के बाहर हो गया। यदि एक-दो दिन की बात होती तो विभाव सह लेता। लेकिन घर की समस्या तो

दिन-प्रतिदिन भयानक होती जा रही थी। उर्मिला भी किसी तरह अब तक अपने को रोके हुए थी। रोके हुए तो क्या थी उसने जबान से तो कुछ नहीं कहा लेकिन व्यवहार में कोई कसर उठा न रखी। विभाव उर्मिला के रूप के पीछे तो पहले से ही पागल था। अब दान-दहेज और नौकरी का नशा भी उस पर पूरी तरह से हावी होने लगा। विभाव इस समस्या से छुटकारा पाने का कोई-न-कोई उपचार सोचता रहता था, लेकिन अन्य कई कारणों से वह अपने विचार को क्रियात्मक रूप न दे पा रहा था।

धीरे-धीरे साधारण सी बात को लेकर उर्मिला के साथ कहा-सुनी होने लगी। संचारी ने अनुभव किया कि उर्मिला को सम्भवत: अपनी शिक्षा तथा द्रव्य का नशा है। आरम्भ में संचारी ने बड़े स्नेह से उर्मिला को समझाना चाहा। उसकी हार्दिक कामना थी कि वह, जो भाभी का स्वप्न इतने दिनों से देखता आ रहा था वह किसी प्रकार पूरा हो। लेकिन उसे उर्मिला की ओर से निराश होना पड़ा। धीरे-धीरे बात बदलती गई। लेकिन जब बात-बात में उर्मिला ने घर के सब लोगों को दबाना आरम्भ कर दिया तो एक दिन क्रोध में आकर संचारी ने उर्मिला से कह दिया—

"......यदि ऐसा ही है तो भैया से कह कर तुम सदा के लिए इस संकट से मुक्त हो जाओ। मैं भला कब कहता हूँ कि तुम मुझे एक गिलास पानी भी ला कर दो, लेकिन अम्मा-पिताजी की सेवा यदि तुमसे नहीं होती तो कम-से-कम उनकी अवहेलना तो मत करो। अधीर बेचारा बच्चा है, उस पर क्रोध

उतारने से क्या लाभ। अभिधा तो वैसे ही दुःख की मारी है। उसके प्रति सहानुभूति होने की अपेक्षा हर बात में 'लंगड़ी' कह कर ताने मारते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती। यह तो शरीर है, हो सकता है कल को तुम्हें ही एक गिलास पानी के लिए दूसरों का मुँह ताकना पड़े। तुमसे काम नहीं होता तो मत करो लेकिन काम करने का मतलब यह तो नहीं कि छोटे-बड़े का कोई विचार ही न करो।"

एक बार नहीं वरन धीरे-धीरे आये दिन झगड़े होने लगे। उर्मिला ने भी विभाव से साफ-साफ कह दिया—

"चाहे जो हो मैं अब इस घर में नहीं रह सकती। मुझे मानसिक शांति चाहिए। भला मैं क्यों किसी की सुनूँ। यदि आप कोई प्रबन्ध नहीं कर सकते तो मुझसे कहिएगा। मैं तत्काल पापाजी से कह कर कोई-न-कोई व्यवस्था कराके ही मानूँगी।"

विभाव सोचता था कि "यदि मैं बस स्थिति में घर से अलग हो जाऊँ तो लोग मुझे औरत का गुलाम कह कर मुझ पर थूकेंगे। और बदनामी होगी। माता-पिता के प्रति भी तो कुछ कर्तव्य है। लेकिन......लेकिन इसका मतलब यह तो नहीं कि पत्नी के प्रति, जिसके साथ मुझे जीवन-पर्यन्त निभाना है, मैं तटस्थ और उदासीन हो जाऊँ। ये लोग तो विवाह के पहले से ही उर्मिला के विरोधी हैं। भला उसे ये कैसे चैन लेने दे सकते हैं। वह बेचारी भी क्या करे। तो फिर क्यों न अलग ही हो जाऊँ। लोग कहेंगे तो कह लेंगे। दुनिया क्या मुझे खाने को देती है। मेरे अलग होने पर संचारी की भक्ति का नशा भी तो झड़ जायेगा।"

सबने अपने-अपने ढंग से विभाव को समझाया कि जब तक पढ़-लिख कर संचारी नौकरी में नहीं लग जाता तब तक उसे निभाना ही चाहिए। चाहे माता-पिता कितने भी बुरे क्यों न हों आखिर हैं तो जन्मदाता। खून को पसीने की तरह बहा कर बच्चों का पालन-पोषण हो पाता है। लेकिन कुछ लोग ऐसे भी थे जो विभाव के हित-चिन्तक बन कर समय-समय पर सलाह देने में न चूकते थे। उनका कहना था—

"तुम तो यों ही अपना और पत्नी का जीवन नर्क बना रहे हो। तुम्हें किस बात की कमी है। यह तो प्रत्येक माता-पिता का कर्तव्य है कि वे अपनी सन्तान को पाल-पोस कर बड़ा करें, पढ़ायें-लिखायें, शादी-विवाह करें और अच्छी-से-अच्छी नौकरी की व्यवस्था करें। यह कोई अहसान नहीं। माँ-बाप तो यह समझते हैं कि लड़का रुपया कमाने की मशीन है। यही तो उनकी मूर्खता है। कल को जब तुम्हारे बाल-बच्चे हो जायें तो तुम भी उन्हें पढ़ा-लिखा कर योग्य बना देना। बस माता-पिता का ऋण इसी तरह चुकता चलेगा।"

विवाह होने के साल-दो साल तक पत्नी सर्व-गुण-सम्पन्न-देवी प्रतीत होती है। सारा स्नेह न जाने क्यों उसी पर केन्द्रित हो जाता है। कुछ लोग इसे स्वाभाविक कहते हैं और कुछ के अनुसार यह व्यक्ति के चरित्र की एक बड़ी कमजोरी है। चाहे जो हो किसी तरह एक-डेढ़ साल तो विभाव ने निकाले लेकिन अब उसने ब्रजनाथ बाबू के बँगले के पास ही शहर में एक छोटा सा बँगला ले लिया। देखते-देखते एक दिन विभाव अपनी पत्नी को लेकर अमन-चैन से रहने के लिए बँगले में आकर

रहने लगा। श्रीनाथ, सुलोचना तथा परिवार के अन्य सदस्यों को अत्यन्त खेद हुआ लेकिन इसका उपचार ही क्या था। जब रजनी को विभाव और उर्मिला के घर से पृथक् होने की सूचना मिली तो उसे अत्यन्त खेद हुआ। उसने बातों-बातों में ही उर्मिला से यह प्रकट किया कि उसने विभाव को उसके माता-पिता से अलग करके बहुत बड़ी मूर्खता और अन्याय किया। विभाव ने तो झट से उत्तर में कह दिया कि यदि कहीं उर्मिला के स्थान पर रजनी होती तो शायद आज से बहुत पहले ही वह अलग हो गया होता। रजनी को विभाव के व्यंग्य से गहरी चोट पहुँची और उसने भविष्य में कभी भी इस सम्बन्ध में कुछ न कहने का निश्चय कर लिया।

परमेश्वर की कृपा से संचारी बी० ए० में सफल हो गया और अधीर भी अब ७वीं कक्षा में आ गया। लेकिन आर्थिक संकटों के कारण संचारी की पढ़ाई आगे न चल सकी। श्रीनाथ और सुलोचना को इस बात का गहरा आघात पहुँचा, लेकिन एक के बाद एक चोट सहते-सहते व्यक्ति चोट सहने का आदी हो जाता है। कई बार अनुभाव को भी घर की दयनीय स्थिति की सूचना दी गई लेकिन कोई परिणाम न हुआ।

लगभग तीन-चार माह इधर-उधर मारे-मारे फिरने के बाद संचारी को रेलवे के किसी कार्यालय में नब्बे रुपये मासिक वेतन पर नौकरी मिल गई। किसी प्रकार से घर का काम चलने लगा।

: २७ :

किसी भी व्यक्ति के वर्त्तमान मान को देख कर उसके भविष्य का अनुमान भले ही लगाया जा सकता है लेकिन निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि आगे चल कर उसका भाग्य-चक्र उसे कहाँ ले जा कर पटकेगा।

किसी को स्वप्न में भी इस बात की आशा न थी कि राज जैसा लड़का, जिसने केवल २४-२५ वर्ष की आयु में सब प्रकार के अच्छे-बुरे कर्मों का अनुभव कर लिया था— आगे चल कर देश और समाज-सेवा के महान् उत्तरदायित्व को इतनी सफलतापूर्वक निभा सकेगा। कह नहीं सकते कि किस क्षण मनुष्य का जीवनचक्र किस ओर को घूम जाये जो व्यक्ति बहुत नीचा गिर सकता हैं वह उतना ऊँचा भी उठ सकता है।

आज तीन वर्ष हो गये राज सर्वोदय-समाज में बड़ी तत्परता से कार्य कर रहा था। इस बीच में एक बार जब बिहार में भयानक बाढ़ आने से धन-जन की अपार हानि हुई तो स्वयं-सेवक-दल का नेता बन कर राज ने सबसे पहले बाढ़-पीड़ितों की सहायता का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया। छः माह तक उसने जिस लग्न से सेवा-कार्य किया उसकी प्रशंसा धीरे-धीरे सबके कानों तक पहुँच गई। अपने नाम के साथ ही राजनारायण ने अपने पिता के नाम को उज्ज्वल करने में कोई कसर उठा न रखी। इसी प्रकार अंजर में भयानक भूकम्प आने पर

भी राज ने सबसे पहले सहायता के शुभ कार्य का बीड़ा उठाया।

श्री विनोबा के सद्उपदेशों का राज पर गहरा प्रभाव पड़ा। उसकी सोई हुई आत्मा जाग उठी। उसने अनुभव किया कि मनुष्य सर्वशक्तिमान परमेश्वर की सर्वोत्तम कृति होने से नाना प्रकार के गुणों से सम्पन्न है। प्रभु ने मनुष्य को सब प्रकार से योग्य व शक्तिशाली बनाया है। यदि ऐसा न होता तो पेट के साथ दो हाथ और पैर तथा मस्तिष्क-जैसी महान् भेंट प्रदान करने का प्रयोजन ही क्या था। आवश्यकता केवल इस बात की है कि व्यक्ति अपनी शक्ति को सही मार्ग पर लगा कर उसका पूर्ण सदुपयोग करे। इसके लिए सन्तों की वाणी और तीव्र प्रेरणा की आवश्यकता है। राज को प्रभु के आशीर्वाद से प्रेरणा और सन्तों की वाणी दोनों ही वरदान मिल चुके थे। फिर किस बात की कमी थी। आरम्भ में जब राज घर से बिना कुछ कहे-सुने चला गया था तो सर्वदा और ब्रजनाथ दोनों को अत्यन्त क्षोभ हुआ था लेकिन आज वे ही अपने पुत्र के सत्कार्यों की शुभ सूचना पाकर फूले न समाते थे।

इस वर्ष रजनी मैडिकल-कोर्स समाप्त कर डॉक्टरनी बनने वाली थी। ब्रजनाथ की हार्दिक अभिलाषा थी कि वे भी अपनी सम्पत्ति को समाज व मानव-हित में लगायें। इसी विचार से उन्होंने सुदेश नगर में ही एक अस्पताल के भवन-निर्माण की नींव डाल दी। धीरे-धीरे निर्माण-कार्य आरम्भ हो गया। लगभग आठ-नौ महीने बाद अस्पताल बनकर तैयार हो गया। अच्छे-से-अच्छे डाक्टरों तथा नर्सों की नियुक्ति की गई। रजनी

को भी मानव-सेवा करने का भला इससे बढ़ कर कौन-सा शुभ अवसर मिल सकता था। अध्ययन समाप्त कर उसकी नियुक्ति भी अपने ही अस्पताल में हो गई।

ब्रजनाथ और सर्वदा दोनों को कई बार अपने-अपने भाग्य और परमेश्वर की शक्ति पर आश्चर्य हुए बिना न रहता था। उन्होंने अनुभव किया कि कम-से-कम जीवन के शेष दिन तो बड़े आत्म-सन्तोष के साथ बिता सकेंगे।

गत वर्ष ही विभाव ने सुदेश नगर को छोड़ कर शिवपुर में फर्म का काम सम्भाल लिया था। सर्वदा का मातृ-स्नेह अब उर्मिला से हट कर रजनी पर केन्द्रित हो गया। रजनी की उदारता और चारित्रिक महानता को अनुभव कर सर्वदा फूली नहीं समाती थी। हाँ कभी-कभी राज का अभाव उसे अवश्य अखरने लगता था।

मिस मँजू समय-समय पर रजनी से मिलती रहती थी, लेकिन अभी तक राज और मँजू के मध्य होने वाली अन्तिम वार्त्तालाप की सूचना किसी को न थी। अस्पताल के कार्य से जब कभी भी रजनी को अवकाश मिलता था तो वह संगीत का अभ्यास कर ही लेती थी। मँजू को रजनी के प्रति जितना स्नेह था रजनी को उसके प्रति उतनी ही सहानुभूति थी। यही कारण था कि दोनों का स्नेह निरन्तर बढ़ता गया।

इतना होते हुए भी सर्वदा व ब्रजनाथ की यह हार्दिक इच्छा थी कि अब रजनी सब बात भूल कर विवाह कर ले। ब्रजनाथ की इच्छा थी कि वह रजनी का विवाह अपने सेक्रेट्री आनन्द से—जो अब विभाव का भी सारा कार्यभार बड़ी तत्परता से

कर रहा था, कर दें। लेकिन रजनी ने तो अब आजीवन मानव-सेवा का जो व्रत ले लिया था। वह नहीं चाहती थी कि अब विश्व का कोई भी आकर्षण उसकी साधना में बाधक बने। संगीत और रोगियों की सेवा यही दो साधनाएँ रजनी के लिए थीं। इन दो के अतिरिक्त विश्व की तीसरी किसी भी वस्तु से उसे भला अब क्या सरोकार था।

: २८ :

लगता है कि निर्धनता ही सब रोगों की जड़ है। माना कि इस इतने बड़े विश्व में सब व्यक्ति समान रूप से सम्पन्न नहीं हो सकते। प्रकृति तक में समानता नहीं है। यदि सब फूलों का रंग और महक तथा सब फलों की खटास-मिठास एक-सी होती तो दुनिया में शायद एक ही फूल और एक ही फल होता। सब सरोवर और नदियों के पानी का स्वाद एक-सा नहीं होता। इस भिन्नता और पृथकता में ही नवीनता, सुन्दरता और विचित्रता निहित है। यदि विश्व की प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक मानव एक-सा ही होता तो नवीनता व विचित्रता के स्थान पर कटुता और एकरसता उत्पन्न हो जाती।

लेकिन भिन्नता और पृथकता का अर्थ विरोध और दमन तो नहीं। एक ओर, एक व्यक्ति है जो अपने रोग का उपचार नहीं करा सकता, जिसे दो समय भर-पेट भोजन भी नहीं मिलता और दूसरी ओर ऐश-आराम में रुपया पानी की तरह बहाया जाता है। ऐसी विषम स्थिति में विरोध की भावना स्वाभाविक ही है। यह ठीक है कि प्रकृति में भी नाना रूप-रंग हैं लेकिन सूर्य की रोशनी और चन्द्रमा की शीतल चाँदनी गरीब और अमीर दोनों के घरों में एक-सी ही होती है।

यदि आज श्रीनाथ पर भी रुपया होता तो वे संचारी को भला ६०) वेतन पर नौकरी करने देते? इतना ही नहीं, यदि

उनके पास भी अर्थ की गति होती तो कम-से-कम इन दो-तीन वर्षों में संचारी की कुछ तरक्की तो होती। ऐसे कटु अवसरों पर ही कभी-कभी मनुष्य को लगता है कि रुपया ही सर्वशक्ति-मान है।

न जाने किस तरह घर का व्यय पूरा हो पाता था। प्रति-मास कुछ-न-कुछ कर्ज चढ़ता जा रहा था। अभिधा पैर के कारण पहले से ही निःसहाय हो चुकी थी, लेकिन आयु तो अपना प्रभाव दिखाये बिना कैसे रह सकती थी। अधीर अत्यन्त ही कुशाग्र बुद्धि का बालक था और अध्ययन के क्षेत्र में उसकी प्रतिभा से सब प्रभावित थे। लेकिन साध्य के साथ-ही-साथ साधन का भी अपना निजी महत्व है। संचारी वैसे पूरा प्रयत्न करता रहा कि अधीर को पुस्तक आदि का कोई अभाव न रहे, लेकिन भूखे रहकर तो कोई भी साधना नहीं की जा सकती।

सुलोचना की दशा दिन-पर-दिन बिगड़ती जा रही थी। उपचार के लिये पैसा ही कहाँ था। श्रीनाथ ने एक बार नहीं वरन् अनेक बार न चाहते हुए भी विभाव को अपनी दय-नीय स्थिति से अवगत कराया। एक बार तो वे स्वयं शिव-पुर पहुँचे। पत्रों में तो निरन्तर वे अपना रोना रोते रहे। संचारी और अधीर ने भी अपने-अपने ढंग से विभाव से सहायता की भिक्षा माँगी, लेकिन विभाव को भला इतना अवकाश कहाँ था कि वह अपना कार्य छोड़ कर कभी न रुकने वाला रोना सुनता।

गर्मी के दिन थे। गत सप्ताह से सुलोचना का स्वास्थ्य

अधिक शोचनीय स्थिति में था। शाम के समय सुलोचना बिस्तरे पर पड़ी-पड़ी अपने गत जीवन की करुण-कहानी पर विचार कर रही थी। अधीर उसी के सिराहने बैठा-बैठा पंखा झल रहा था। बहुत देर तक चुप रहने के बाद अधीर बोला—

"अम्मा, तुम कहती थीं कि भगवान सब की सुनता है लेकिन आज न जाने कितने दिनों से मैं बराबर भगवान से तुम्हारे अच्छे होने की प्रार्थना कर रहा हूँ। लेकिन मेरी कोई सुनाई ही नहीं हो रही। मैं कई बार प्रसाद भी बोल चुका हूँ। मुझे लगता है कि भगवान नाम की कोई चीज ही नहीं।"

सुलोचना को अधीर की बात सुनकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ। वह थोड़ी देर तक कोई उत्तर न दे सकी। फिर बड़े ही स्नेहभाव से बोली—

"बेटा, भगवान है तो जरूर और सबकी सुनता भी है लेकिन किसी की देर से सुनता है तो किसी की जल्दी। बेटा, तुम्हें भला मेरी बीमारी की इतनी चिन्ता क्यों है। मैं तो अब बहुत जी चुकी हूँ। भला पड़े-पड़े इस रोग से सड़ते रहने में क्या सुख है।"

अधीर गम्भीर हो गया, कुछ क्षण मौन रहकर बोला— "अम्मा, जीते तो सभी हैं लेकिन सुख और शान्ति से जीना और बात है। मैं एक बात कहूँ अम्मा कि मेरे एक दोस्त की किताबों की दुकान है। उसका पिता किताबें बेचता है और किताबों पर जिल्दें भी बाँधता है। मैंने भी थोड़ा-थोड़ा यह काम

सीख लिया है। मेरी इच्छा है कि मैं एक साल पढ़ना बन्द करके जिल्द बाँधने का काम ही क्यों न करूँ। मैंने अपने दोस्त से सब बात कर ली है, वह कहता है कि एक जिल्द बाँधने के दो आने मिलेंगे। यदि दिन-भर में मैं चार किताबों की भी जिल्द बाँधूँगा तो आठ आने रोज मिलेंगे, उससे रोज तुम्हारी दवा आ सकेगी। मैं, यदि भैया या पिताजी से यह बात कहूँगा तो वे न मानेंगे। इसलिये तुम ही मेरी बात कह दो तो बड़ा अच्छा हो।"

अधीर की बात सुनते-सुनते सुलोचना की आँखें सजल हो गईं। उसने अत्यन्त स्नेह से अधीर को अपने गले लगा लिया। थोड़ी देर तक उसे कोई उत्तर न सूझा। फिर अपने को संयत कर बोली—

"बेटा, तुम्हें अभी से काम करने की क्या पड़ी है। अभी तो मैं हूँ, तुम्हारे पिताजी हैं, संचारी भैया हैं। इसके अलावा बेटा मरने वाले को दुनिया की कोई दवा नहीं बचा सकती। भगवान् ने चाहा तो तुम एक दिन पढ़-लिख कर बड़े अफसर बन जाओगे।"

"तो अम्मा यदि तुम मुझे काम नहीं करने देना चाहती तो रोज स्कूल जाते समय एक आना मुझे मत दिया करो। मेरे जमा किये हुए पैसे तो तुम लेती ही नहीं। या एक बात यह भी हो सकती है कि मैं अपनी छोटी साइकिल क्यों न बेच दूँ। पड़ौस की दुकान वाला ही खरीद लेगा। कम-से-कम साठ-सत्तर रुपये तो मिलेंगे।"

सुलोचना को अधीर के एक-एक शब्द पर आश्चर्य हो

रहा था। वह भला क्या उत्तर देती। माँ को रोता देख अधीर की आँखों से भी टप-टप आँसू गिरने लगे। इतने में संचारी पड़ौस के किसी वैद्य को लेकर आ पहुँचा।

आध-एक घन्टे में सुलोचना को दवा आदि देकर जब वैद्य जी जाने लगे तो अधीर ने बड़े ही करुण स्वर में उनसे पूछा—

"वैद्यजी, अब आप पर कोई ऐसी दवा नहीं जिसे खाकर मैं बीमार पड़ जाऊँ और माँ अच्छी हो जायँ।"

एक मिनिट तक वैद्यजी और श्रीनाथ अधीर का मुँह ताकते रहे। उसके बाद बोले—

"हाँ बेटा, भगवान् ने चाहा तो तुम्हारी माँ जरूर अच्छी हो जायेंगी। भगवान से प्रार्थना करो, वह सबकी सुनता है।

रात को अधीर से खाना न खाया गया। "भगवान् से प्रार्थना करो, वह सबकी सुनता है" यही वाक्य उसके दिमाग में घूमता रहा। रात को जब प्राय: सब सो चुके तो अधीर धीरे से उठा और पास की कोठरी में एक मोमबत्ती जलाकर श्रीकृष्ण के चित्र के सामने हाथ जोड़कर न जाने कब तक प्रार्थना करता रहा।

इसके बाद जब भगवान् अधीर से कुछ न बोले तो बेचारा चुपचाप फिर बिस्तर पर जाकर पड़ गया, लेकिन नींद का कोई पता न था। सुबह पाँच बजे के लगभग सुलोचना ने अधीर को पुकारा तो वह झट से जा पहुँचा। उसने अधीर से एक गिलास पानी लाने को कहा। थोड़ी देर में अभिधा, संचारी और श्रीनाथ भी कमरे में आ पहुँचे।

सुलोचना ने अपने तीनों बच्चों को बड़े स्नेह से अपने

पास बैठा लिया। श्रीनाथ भी पास ही एक चौकी पर बैठ गये। कुछ देर मौन रह कर सुलोचना ने धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया—

"बेटा संचारी, आज तुम्हारे तीन भाइयों में से तुम्हीं एक मेरे सामने हो। अच्छा होता यदि आज विभाव, अनुभाव, लक्षणा और व्यंजना भी मेरे सामने होते। लेकिन परमेश्वर की इच्छा के आगे मनुष्य का कोई वश नहीं चलता। बेटा, तुम यह न सोचना कि तुम्हारे माँ-बाप ने जान-बूझकर तुम्हें पढ़ाया नहीं। भगवान् जानता है कि मेरी यह हार्दिक इच्छा थी कि तुम सबसे छोटे हो, तुम्हारे ऊपर दो बड़े भाई और हैं इसलिये तुम जितनी इच्छा हो पढ़ते चलो। लेकिन मेरा स्वप्न बीच में ही टूट गया। खैर, यदि भगवान् ने चाहा तो तुम आज नहीं तो कुछ समय बाद अवश्य ही पढ़-लिखकर बड़े अफसर बन जाओगे।"

सब चुपचाप सुलोचना की बात सुनते रहे। संचारी को रोता देख अधीर और अभिधा की आँखों से भी आँसू टपकने लगे। सुलोचना ने आगे कहना आरम्भ किया—

"मुझे इस बात का बहुत दुःख है कि तुम्हारे पिताजी के गत सात वर्षों से अलग रहने के कारण मैं उनकी भी कोई सेवा न कर सकी। आज वे चल-फिर नहीं सकते तो मेरा बिस्तरे पर से उठना ही कठिन है। अभी तो बेटा तुम ही बच्चे हो, अधीर और अभिधा का तो कहना ही क्या। लेकिन परमेश्वर के आगे किसी का वश नहीं।"

सुलोचना की आँखों से बराबर आँसू झर रहे थे। कुछ देर

ठहर कर उसने फिर कहना आरम्भ किया—

" बेटा, मुझे अब कोई आशा नहीं कि मैं विभाव और अनुभाव का मुँह भी देख सकूँगी। मेरे लिये तो तुम ही छोटे और बड़े दोनों लडकों की जगह हो। मेरी अन्तिम इच्छा यह है कि बेटा किसी भी तरह अपने छोटे भाई अधीर को तुम इस योग्य अवश्य बना देना कि वह दो समय अपना पेट तो भर सके। तुम जानते हो कि अधीर दूसरे की धरोहर है जिसकी जिम्मेदारी हमारे ऊपर है। अभिधा का तो भगवान ही मालिक है। यदि हो सके तो इसके हाथ भी पीले कर देना। ऐसा न हो कि......

सुलोचना का वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही संचारी हिचकियाँ भरते हुए बोला—

"माँ, तुम यह क्या कह रही हो। भगवान की कृपा से जब अच्छे दिन आने को थे तो तुम हम सबसे मुँह मोड़ रही हो। तुम देखना माँ, तुम्हारे रहते-रहते ही भगवान ने चाहा तो अधीर और अभिधा दोनों ही सब प्रकार से योग्य हो जायेंगे। मुझे थोड़ा मौका तो और दो माँ, अभी तो मैं स्वयं ही असहाय और निर्बल हूँ।"

इतना कहते-कहते संचारी बिलख-बिलख कर रोने लगा। श्रीनाथ भी सजल नेत्रों से सब देख रहे थे, सुन रहे थे। सुलोचना ने बड़े स्नेह से संचारी को गले लगा लिया और बोली—

"बेटा, मौका देने-न-देने वाला तो परमेश्वर है। लेकिन तुम अपने को निर्बल और असहाय क्यों समझते हो। पिछले

एक-डेढ़ वर्ष से तुम ही सब का पेट भर रहे हो। अभी तो तुम्हारे पिताजी तुम्हारे ऊपर हैं।"

संचारी अपने को संयत करता हुआ बोला—

"माँ, तुम यह सोचकर बिल्कुल भी दुःखी न हो कि तुमने मुझे पढ़ाने-लिखाने में कोई कसर उठा रखी है। नहीं माँ, तुम ने मुझे सब योग्य बना दिया। पढ़ाई-लिखाई, अच्छी नौकरी और रुपये-पैसों से परे भी एक चीज है और वह है माता-पिता का आशीर्वाद और परमेश्वर की कृपा। मुझे इन दोनों शक्तियों में अटूट श्रद्धा और विश्वास है अन्यथा तो आज से बहुत पहले ही मैं घबड़ा कर इस दुनिया से भाग खड़ा होता। आज भी माता-पिता के आशीर्वाद और परमेश्वर के अनुग्रह की भिक्षा के लिये मेरे दोनों हाथ पसरे हुए हैं।"

संचारी भावावेश में कुछ और भी कहता लेकिन सुलोचना ने अपने हाथों में पड़ा सोने का एक कंगन निकाला और संचारी को बड़े स्नेह से सौंपती हुई बोली—

"बेटा, यह कंगन मुझे मेरी सासजी ने दिया था। उनकी आज्ञा था कि मैं भी जब समय आये तो यह कंगन अपनी बहू को सौंप दूं। विभाव का विवाह तो हुआ, लेकिन मेरे लिये बहू का आना-न-आना बराबर था। मैं जानती थी कि उर्मिला बड़े बाप की बेटी है शायद इस मामूली से कंगन को ठुकरा दे तो बड़ा बुरा होगा। इसके अलावा उससे हमारा सम्बन्ध ही क्या है। अनुभाव का मेरे इन अन्तिम क्षणों में भी कोई पता नहीं है। ऐसा न हो कि यह धरोहर मेरे साथ ही चली जाय इसलिये मैं यह तुम्हें सौंपती हूँ। जब तुम्हारा विवाह हो तो

बहू को मेरी ओर से यह कंगन पहना देना और सारी बातें उसे समझा देना । इसके अलावा......मेरे......पास......देने को... और कुछ नहीं......है......बेटा......भगवान......तुम......सब को...... हमेशा......खुश ......रखे..........।

× × ×

माँ की मृत्यु का समाचार पाकर बड़ी मुश्किल से दो-दिन की छुट्टी लेकर अनुभाव घर आ सका । लेकिन अब सिवाय रोने-धोने के घर में और रखा ही क्या था । श्रीनाथ को यह विश्वास था कि माँ की मृत्यु का समाचार पाकर कम-से-काम लोक-लज्जा के कारण ही विभाव जरूर आयेगा, लेकिन उन्हें निराश होना पड़ा । लोगों ने भी तरह-तरह की बातें कहीं ।

अपने मित्र प्रेमचन्दजी के अनुरोध करने पर श्रीनाथ ने विभाव को पत्र लिखा जिसमें उन्होंने अत्यन्त ही मार्मिक ढंग से घर की दयनीय स्थिति का वर्णन किया । लगभग एक सप्ताह बाद विभाव का उत्तर आया, लिखा था—

"श्रीमान् पिताजी !

सादर प्रणाम !

माँ की मृत्यु का तार मुझे मिला, लेकिन फर्म के काम में अत्यन्त व्यस्त होने के कारण मैं न आ सका । आप जानते हैं कि मरना-जीना तो लगा ही रहता है लेकिन नौकरी-पेशे वाला आदमी 'ड्यूटी' कैसे छोड़ सकता है ।

अभी भी मेरे पास बहुत काम है । फर्म के दो-तीन कर्मचारी पहले से ही छुट्टी पर हैं । इस कारण मैं नहीं कह सकता कि मेरा आना कब तक होगा । हो सकता है कि एक

माह तक भी मुझे अवकाश न मिल सके।

आपने अपने गठिये के लिये लिखा है। आप जानते हैं कि मैं कोई डाक्टर तो हूँ नहीं। आपको चाहिए कि आप पूना जाकर इलाज करायें। सुना है कि वहाँ गठिया का बहुत अच्छा इलाज होता है। फिर यह तो बुढ़ापा है, एक रोग के बाद, दूसरा रोग पैदा हो जाता है। बुढ़ापा भी एक प्रकार का रोग है जिसका इलाज तो मरने के साथ ही होता है। माँ का ही क्या आपने कम इलाज करवाया था, लेकिन कुछ न हो सका। कह नहीं सकते कि किस दिन किस को इस दुनिया को छोड़ना पड़े।

शेष सब कुशल है। आशा है अधीर की पढ़ाई खूब अच्छी तरह चल रही होगी और अभिधा भी खुश होगी। मुझे तो विश्वास था कि संचारी अपनी सेवाओं से माँ को मरने से बचा लेगा, लेकिन खेद है कि बेचारे को निराश होना पड़ा। लेकिन अभी भी आप की सेवा का अवसर तो है ही। यदि मुझे सेवा का सौभाग्य प्राप्त न हो सका तो कम-से-कम उसे तो इस पुण्य-कार्य का पूरा-पूरा लाभ मिलना ही चाहिए। वह स्वयं बड़ा समझदार है। मेरा पत्र आप उसे अवश्य दिखाइयेगा। वह आपको अवश्य ही इलाज के लिए पूना ले जायेगा। लगे हाथ शायद अभिधा के पैरों का भी कोई उपचार हो जाय तो बड़ा ही अच्छा हो।

शेष सब आपकी कृपा है। मेरे योग्य और कोई सेवा हो तो लिखना न भूलियेगा।"

आपका—
विभाव"

यही दोपहर के कोई दो-तीन बजे का समय होगा। बाहर कड़ी धूप पड़ रही थी और जोर का झक्कड़ चल रहा था। श्रीनाथ कमरे में फर्श पर बैठे-बैठे अपने गत जीवन पर विचार कर मन-ही-मन आँसू बहा रहे थे। जिस खाट पर गत चार वर्षों से सुलोचना पड़ी-पड़ी कराहती रही और जिस पर अपने अन्तिम क्षणों में भी उसे सुख की एक भी साँस लेने को न मिल सकी। वह कोने में पड़ी थी। श्रीनाथ बराबर उसी की ओर ताक रहे थे। रह-रह कर उनके मन में आता था कि "गंगापुर जाते समय मैंने सुलोचना को समझाते हुए कहा था कि—तुम्हें इस त्याग और तपस्या का मीठा फल अवश्य मिलेगा—लेकिन क्या हुआ। मृत्यु के साथ ही उस बेचारी के आँसू रुके।"

इस प्रकार की अनेक बातें सोचते-सोचते श्रीनाथ विचार-सागर में गोते खा रहे थे कि अधीर विभाव का पत्र लेकर दौड़ता आ पहुँचा। पीछे-पीछे बेचारी अभिधा भी अपनी लकड़ी का सहारा लेती हुई आ पहुँची। श्रीनाथ ने लिफाफा खोला और पत्र पढ़ने लगे।

पत्र पढ़ते-पढ़ते उनकी आँखों से आँसू झरने लगे। पत्र हाथ से छूट गया। अधीर ने बड़े उत्सुकता के भाव से पूछा—

"पिताजी आप रोने क्यों लगे। भैया ने क्या लिखा है। वे कब तक आयेंगे।"

श्रीनाथ भला क्या उत्तर देते। उनके मन में आया कि वे पत्र को फाड़ डालें। लेकिन अपने मित्र प्रेमचन्द को, जिन्होंने श्रीनाथ को पत्र लिखने को बाध्य किया था, पत्र दिखाने के

लिये वे व्याकुल हो उठे। थोड़ी देर तक वहीं बैठे-बैठे कुछ सोचते रहे और फिर अधीर और अभिधा को सम्बोधित कर बोले—

"बेटा, जरा जरूरी काम से मैं बाहर जा रहा हूँ। एक-डेढ़ घंटे में लौट आऊँगा। तुम जरा घर का ख्याल रखना।"

उत्तर में दोनों ने सिर हिला दिया।

श्रीनाथ ने पत्र हाथ में लिया और चल पड़े। खूब तेज धूप पड़ रही थी। श्रीनाथ को चलने में बहुत कष्ट हो रहा था लेकिन प्रेमचन्द का घर पास की गली के अन्तिम सिरे पर था—यह सोचकर बेचारे चलते चले जा रहे थे। उनका हृदय तो पहले से ही बहुत दुःखी था। विभाव के पत्र ने तो मानो जले पर नमक छिड़क दिया हो।

कुछ दूर चलकर श्रीनाथ के पैर लड़खड़ाने लगे। उन्होंने चलने का बहुत प्रयत्न किया लेकिन लड़खड़ाते हुए गिरने से बचे। वे गली के मोड़ पर लगे एक "लैम्प पोस्ट' का सहारा लेकर बड़ी मुश्किल से खड़े हो पाये। पत्र अभी भी उनके हाथ में था।

पता नहीं आगे क्या हुआ। जीवन की धूप-छाँह में चलते हुए श्रीनाथ गली के अन्तिम छोर तक पहुँच सके या नहीं, कौन जानता है।